चौंसठ योगिनियां एवं उनके मन्दिर

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद सिंह

चौंसठ योगिनियां एवं उनके मन्दिर

राजेन्द्र प्रसाद सिंह

1990

जे०पी० पब्लिशिंग हाउस

2079, जनता फ्लैट नन्द नगरी

दिल्ली—110093

प्रकाशक :

जे० पी० पब्लिशिंग हाउस,
2079, जनता फ्लैट नन्दनगरी
दिल्ली—110093

प्रथम संस्करण, 1990

मूल्य : 150.00 रुपये

मुद्रक :
ए० आर० प्रिन्टर्स,
डी-102, न्यू सीलमपुर,
दिल्ली-110053.

समर्पित

पूज्य माता जी पिता जी को

आभार

प्रस्तुत ग्रन्थ ''चौंसठ योगिनियां एवं अनेक मन्दिर'' का संयोजन विद्वानों एवं मित्रों के स्नेह व प्रेरणा से ही सम्भव हो सका है। मैं उन सभी महानुभावों के प्रति कृतज्ञ हूं जिन्होंने परोक्ष या अपरोक्ष रूप से हमें सहयोग प्रदान किया है। यह ग्रन्थ मेरे पी० एच० डी० उपाधि हेतु स्वीकृत (1984 ई०, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) शोध प्रबन्ध पर आधारित है।

मैं इस कार्य के निमित्त अपने गुरु एवं निर्देशक प्रो० पुरुषोत्तम सिंह को श्रद्धा अर्पित करता हूं, जिनके आशीर्वादस्वरूप यह कार्य सम्पन्न हो सका। इसी क्रम में मैं अपने पूर्व निर्देशक डा० दीनबन्धु पाण्डेय को विषय स्थापना एवं दिशा प्रदान करने हेतु श्रद्धा सर्मपित करता हूं।

इसी प्रसंग में जिन विद्वानों से मैं समय-समय पर सहयोग एवं सुझाव प्राप्त करता रहा वे हैं— प्रो० के० के० सिनहा, प्रो० वी० सी० श्रीवास्तव, प्रो० बलराम श्रीवास्तव एवं डा० अच्छे लाल यादव। मैं इन महानुभावों का ऋणी हूं।

इस ग्रन्थ के संयोजन में भारत कला भवन के विशेष कार्याधिकारी श्री ओ० पी० टण्डन का विशेष सहयोग व स्नेह प्राप्त हुआ है तथा उन्होंने समय-समय पर जिस प्रकार का उत्साहवर्धन किया है उसके लिए मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूं। मैं भारत कला भवन के उप-निदेशक एवं अपने गुरु डा० एस० के० श्रीवास्तव के प्रति विशेष आभारी हूं जिन्होंने उत्साहवर्धन करते हुए सहयोग प्रदान किया। मैं इसी संस्था के सह निदेशक डा० टी० के० विश्वास के प्रति संग्रहालयीय वस्तुओं के ज्ञान एवं छायाचित्रों के उपयोग की अनुमति हेतु आभारी हूं।

मैं उन संस्थाओं एवं व्यक्तियों के प्रति विशेष आभारी हूं जिनके स्रोतों से मुझे ग्रन्थ संयोजन में सहायता मिली। उन संस्थाओं में मुख्यतः प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, सयाजीराव गायकवाड़ ग्रन्थालय, भारत कला भवन, (सभी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय-वाराणसी), भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग, राष्ट्रीय संग्रहालय (नई दिल्ली), भोपाल संग्रहालय, इन्दौर संग्रहालय, धुबेला संग्रहालय, रानी दुर्गावती संग्रहालय, ग्वालियर संग्रहालय एवं वन विभाग (मध्य प्रदेश), भारतीय संग्रहालय (कलकत्ता), राज्य संग्रहालय (लखनऊ), अमेरिकन अकेडेमी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, काशी विद्यापीठ, रामघाट-पुस्तकालय (वाराणसी), राज्य संग्रहालय (उड़ीसा) प्रमुख हैं।

मैं विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के प्रति कृतज्ञ हूं जिसने मुझे इस ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु आर्थिक सहायता प्रदान किया।

मैंने विभिन्न स्रोतों को विभिन्न स्थानों से प्राप्त करने में जिन महानुभावों का सहयोग प्राप्त किया—श्री आई० बी० सिंह (पुस्तकालयाध्यक्ष, भारत कला भवन), श्री एस० सी० घिल्डियाल (पुस्तकालयाध्यक्ष, प्रा० भा० इ०, सं० एवं पुरातत्व विभाग) एवं श्री शक्ति बली को मैं आभार प्रकट करता हूं।

इस ग्रन्थ के छाया चित्रों के लिए मैं अमेरिकन अकेडेमी (वाराणसी) एवं श्री आर० सी० सिंह, पी० प्रकाश राव तथा पी० एन० पंचोली (भारत कला भवन) का विशेष आभारी हूं।

मैं डा० बी० आर० मणि (अधीक्षक पुरातत्त्वविद्, भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण) के प्रति विशेष आभारी हूं जिनके सुझाव एवं सहयोग के फलस्वरूप ही यह ग्रन्थ आपके समक्ष है।

इसके साथ ही मैं इस ग्रन्थ के प्रकाशक श्री जे० पी० यादव के प्रति आभारी हूं जिन्होंने अल्प समय में इस कार्य को सम्पन्न किया एवं विशेष रुचि लिया।

अन्त में मैं अपने श्रद्धेय माता जी एवं पिता जी को सादर नमन् करता हूं जिनके आशीर्वाद के फलस्वरूप ही यह कार्य सम्पन्न हुआ। यदि इस कड़ी में किसी ने त्याग व धैर्य का बखूबी प्रदर्शन किया है तो वह हैं मेरी धर्मपत्नी। उन्हीं के त्याग के प्रतिफल के रूप में यह ग्रन्थ आपके समक्ष है।

राजेन्द्र प्रसाद सिंह
गाईड लेक्चरर, भारत कला भवन

भूमिका

भारत अनेक धर्मों का जनक रहा है जिनमें शाक्त तांत्रिक धर्म का प्रमुख स्थान था। इन धर्मों ने व्यक्तिगत स्तर पर जनमानस को प्रभावित किया है। शाक्त तांत्रिक धर्म सबके लिए सुलभ था, अतः उसने समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रभावित किया। इसका उदय कई धर्मों के समावेश से हुआ है, अतः इसका प्रभाव सभी के सांस्कृतिक जीवन पर पड़ा। साथ ही शाक्त तांत्रिक धर्म ने देश के साहित्य, कला एवं स्थापत्य को भी प्रभावित किया एवं समय-समय पर राज्याश्रय भी प्राप्त किया है।

प्रस्तुत शोध का विषय "चौंसठ योगिनियां एवं उनके मन्दिर" हैं। योगिनी कौल शाक्त तांत्रिक धर्म का ही एक रूप है। योगिनियों का वर्णन क्रियाशील शक्ति के एक रूप में किया गया है तथा उन्हें ब्रह्माण्ड के सृजन, संरक्षण एवं संहार से सम्बन्धित कहा गया है। ये योगिनियां कौन हैं तथा इनका हिन्दू धर्म में क्या स्थान था, इस प्रश्न पर विद्वानों में मतभेद है। इनकी उपासना के प्रमाण लगभग ९वीं सदी से मिलते हैं, जिनके आधार पर हम कह सकते हैं कि योगिनी कौल उपासना इसी समय आरम्भ हुई होगी। योगिनी कौल के संस्थापक मत्स्येन्द्रनाथ थे, जिन्होंने सर्वप्रथम इस कौल का अभ्यास कामरूप की स्त्रियों के साथ आरम्भ किया था। इस कौल उपासना द्वारा जादुई शक्ति प्राप्त करने का विधान था, परन्तु इससे मोक्ष प्राप्ति का उल्लेख कहीं नहीं मिलता। इस कौल की उपासना अत्यन्त गोपनीय थी, जिससे यह कभी भी प्रचलित धार्मिक उपासना के रूप में नहीं रहा। इस कौल उपासना के सन्दर्भ में मत्स्येन्द्रनाथ द्वारा रचित "कौल ज्ञान निर्णय" के अलावा कोई भी प्रामाणिक ग्रन्थ नहीं मिलता। इस कौल की उत्पत्ति, उपासना-विधि, मन्दिरों का निर्माण, मूर्ति विज्ञान तथा योगिनियों की संख्या के संदर्भ में किसी निश्चित प्रमाण का अभाव है।

प्रस्तुत विषय का चयन उसका सांगोपांग अध्ययन करने की दृष्टि से किया गया है। इस कौल से सम्बन्धित मन्दिर व मूर्तियां पूर्व एवं मध्य भारत में प्राप्त हुई हैं। कुछ विद्वानों ने इस विषय पर कार्य करने का प्रयास किया, परन्तु प्राप्त सामग्रियों की अपेक्षा उनका अध्ययन सीमित रहा है। अपने अध्ययन में मैंने उपलब्ध ग्रन्थों, मन्दिरों व मूर्तियों के आधार पर योगिनी कौल से सम्बन्धित विवरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

कुछ मार्क्सवादी इतिहासकारों ने तांत्रिक परम्परा के भौतिक पक्षों का विश्लेषण करते हुए कहा है कि पूर्वमध्यकालीन भारत में ब्रह्मण संस्कृति में जो जनजाति संस्कृति का सम्मिश्रण हुआ उसके

कारण भी तांत्रिक परम्परा को बल मिला। तांत्रिक परम्परा में जनजाति की संस्कृति में स्त्री तत्त्व की महत्ता अधिक थी। यह भी द्रष्टव्य है कि जनजातियों की संस्कृति मध्य व पूर्वी भारत में विशेष रूप से प्रचलित थी। 7वीं-8वीं शताब्दी से सामन्तवाद का भी विकास हुआ जिसमें देवदासी प्रथा आदि का प्रचार हुआ। इस आलोक में कहा जा सकता है कि योगिनियों की लोकप्रियता पूर्व-मध्य भारत के इसी क्षेत्र में हुई, उसका प्रमुख कारण पूर्व-मध्य कालीन सामन्तवाद और जनजातीय संस्कृति का प्रभाव माना जा सकता है। इसके विपरीत आदर्शवादी इतिहासकार योगिनियों व अन्य ताँत्रिक परम्पराओं में उच्चकोटि का आदर्शवाद देखते हैं। मैंने इन दोनों विचारों से हटकर मूलतः कला एवं स्थापत्य में उनके अंकन के आधार पर योगिनियों का साँगोपांग इतिहास प्रस्तुत किया है।

योगिनी मन्दिरों की सर्वप्रथम खोज विदेशी पुराविदों ने 1875 ई० के पूर्व किया। उनमें सर्वश्री अलेकजेण्डर कनिंधम वेल्गर व मैकफर्सन ने क्रमशः भेड़ाघाट, खजुराहो एवं रानीपुर झरियल के योगिनी मन्दिरों पर सर्वप्रथम प्रकाश डाला। इन विद्वानों ने मुख्यतः मन्दिरों की स्थितियों को अवगत कराया, परन्तु उनके मूर्ति विज्ञान तथा तत्सम्बन्धी कौल के इस विषय में कोई समुचित समाधान नहीं प्रस्तुत कर सके। तत्पश्चात् एम० बी० गार्डे ने 1915-16 ई० के मध्य मितावली के योगिनी मन्दिर की खोज किया। तत्पश्चात् पी० सी० मुखर्जी ने उत्तर प्रदेश के ललितपुर जिले में दुधई नामक स्थान पर तथा केदारनाथ महापात्र ने उड़ीसा के हीरापुर गांव में योगिनी मन्दिरों का विवरण प्रकाशित किया। इसके पश्चात् मध्य प्रदेश के शहडोल जिले में योगिनी मूर्तियाँ प्रचुर संख्या में प्राप्त हुई, जिससे वहाँ योगिनी मन्दिर निर्मित होने की सम्भावना व्यक्त की गई। प्रो० कृष्णदत्त वाजपेयी ने उत्तर प्रदेश के बांदा जिले में लोखरी नामक स्थान पर योगिनी मन्दिर का अवशेष प्राप्त किया। इन उपलब्धियों से उत्साहित होकर हाल के वर्षों में कई विद्वानों ने इस विषय पर शोध कार्य किया है जिनमें सर्वश्री लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी, चार्ल्स फाब्री, बलराम श्रीवास्तव, आर० के० शर्मा, एवं एच०सी० दास प्रमुख हैं। डा० लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी ने खजुराहो के योगिनी मन्दिर का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है। इनका अध्ययन मुख्यतः स्थापत्य संरचना पर आधारित है। चार्ल्स फाब्री ने योगिनी कौल पर संक्षिप्त प्रकाश डालते हुए उड़ीसा के दो मन्दिरों (रानीपुर, झरियल एवं हीरापुर) का तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत किया है। डा० बलराम श्रीवास्तव ने "श्री तत्त्व निधि" से प्राप्त योगिनी सूची के साथ ही विभिन्न प्राप्त पांच सूचियों के आधार पर योगिनियों व उनकी संख्या पर विचार व्यक्त किया है। श्री आर० के० शर्मा ने भेड़ाघाट के योगिनी मन्दिर का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया है। इन्होंने योगिनी कौल मन्दिर स्थापत्य एवं मूर्ति विवरण पर विशेष बल दिया है, परन्तु यह अध्ययन मात्र भेड़ाघाट के योगिनी मंदिर पर केन्द्रित है। श्री एच० सी० दास ने अपने अध्ययन में योगिनी कौल की उत्पत्ति, कौल उपासना को राज्याश्रय, स्थापत्य, मूर्ति विवरण तथा प्राप्त ग्यारह योगिनी सूचियों व तीन मन्दिरों की मूर्तियों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। इनका अध्ययन मुख्यतः उड़ीसा के योगिनी मन्दिरों पर आधारित है। उल्लेख्य है कि योगिनी कौल पर हुए अब तक के अध्ययनों में श्री दास का अध्ययन अपेक्षाकृत सर्वाधिक विस्तृत रहा है। इन्होंने इस कौल के विभिन्न आयामों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। इनके अतिरिक्त विद्या दहेजिया ने अपने शोध पत्र में योगिनी कौल तथा उससे सम्बन्धित मन्दिरों व मूर्तियों का संक्षिप्त अध्ययन प्रस्तुत किया है। विद्वानों

के विभिन्न दृष्टिकोणों से अध्ययन के बावजूद योगिनी कौल तथा तत्सम्बन्धी पुरातात्त्विक अवशेषों पर आधारित अध्ययन पर्याप्त नहीं है। उल्लेख्य है कि अब तक कुल आठ योगिनी मन्दिरों को ही प्रकाशित किया गया है तथा इस विषय पर विभिन्न विद्वानों का सम्पूर्ण अध्ययन इन्हीं आठ योगिनी मन्दिरों पर आधारित है।

मैंने इस अध्ययन में पौराणिक ऐतिहासिक ग्रन्थों, विभिन्न विद्वानों के ग्रन्थों व शोध पत्रों, संग्रहालयों, मन्दिरों व अन्य स्थानों से प्राप्त मूर्तियों से सहायता लिया है। साथ ही अब तक प्राप्त आठ योगिनी मन्दिरों के अतिरिक्त पाँच अन्य योगिनी मन्दिरों से प्राप्त अवशेषों के आधार पर अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। मैंने अपने अध्ययन में देश के विभिन्न भागों से प्राप्त चौदह योगिनी सूचियों एवं पांच मन्दिरों की योगिनी मूर्तियों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। यहां विभिन्न स्थानों से प्राप्त मूर्तियों का विवरण तालिका के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध निम्नलिखित अध्यायों में विभक्त है :—

प्रथम अध्याय में विषय के मूल स्रोतों पर विचार किया गया है। योगिनी कौल की उत्पत्ति, विकास के साथ ही विषय सामग्री के अतिरिक्त इतिहास स्रोत के रूप में उनकी सीमाओं पर भी विचार किया गया है। इस अध्याय में विषय से सम्बद्ध पूर्ववर्ती शोध कार्यों का मूल्यांकन भी किया गया है। मूल स्रोतों के स्वभाव एवं आधुनिक विद्वानों की कृतियों को दृष्टि में रखकर प्रस्तुत शोधप्रबन्ध की अध्ययन विधि निर्धारित की गई है।

द्वितीय अध्याय में योगिनी कौल सम्प्रदाय को संरक्षण प्रदान करने वाले राजवंशों का वर्णन किया गया है। मध्य भारत के चन्देल व कल्चुरी तथा उड़ीसा के भौमकर व सोमवंशी राजाओं ने योगिनी कौल की संरक्षण प्रदान करने के साथ ही योगिनी मन्दिरों का निर्माण भी कराया। अब तक प्राप्त सभी योगिनी मन्दिर इन्हीं राजवंशों के काल में विभिन्न क्षेत्रों में निर्मित है। सीमित क्षेत्र में प्राप्त तेरह योगिनी मन्दिरों के अवशेष यह प्रमाणित करते हैं कि इन राजवंशों ने योगिनी कौल को संरक्षण ही नहीं प्रदान किया, अपितु कौल के प्रसार में भी सहयोग दिया। राजाओं द्वारा योगिनी मन्दिर निर्मित कराने की पृष्ठभूमि में योगिनियों द्वारा वरदान प्राप्त करना मुख्य उद्देश्य था। किसी सामान्य व्यक्ति द्वारा प्रस्तर के मन्दिरों को निर्मित कराने की सम्भावना नहीं थी। क्योंकि इसके लिए आवश्यक धन की उपलब्धता राज्याश्रय द्वारा ही सम्भव थी। इस अध्याय में विभिन्न राजवंशों द्वारा निर्मित योगिनी मन्दिरों का उल्लेख किया गया है।

तृतीय अध्याय में शक्ति उपासना की उत्पत्ति व क्रमशः विकास पर संक्षिप्त अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। शक्ति उपासना का उल्लेख मात्र वेदों में ही नहीं मिलता, अपितु सिन्धु सभ्यता की उत्खनित सामग्रियों से भी इनकी पुष्टि होती है। इस उपासना के क्रमशः विकास के साथ ही विभिन्न सम्प्रदायों के उदय व विकास की भी संक्षिप्त चर्चा की गई है। सर जान मार्शल के मतानुसार सिन्धु

सभ्यता से प्राप्त सामग्रियों से शक्ति उपासना के उद्भव पर प्रकाश पड़ता है। प्रारम्भिक वैदिकताल का समाज पुरुष प्रधान था, परन्तु उत्तर वैदिककाल में देवियों ने पुरुष देवताओं की सहायिका का स्थान प्राप्त कर लिया। विकास की इस गति में शिव ने देवता के रूप में अपना स्थान सुरक्षित रखा, किन्तु उनकी पत्नी उमा शक्तिशाली देवी के रूप में स्थापित हो गईं। इसी विकास के अन्तर्गत योगिनी कौल सम्प्रदाय का भी उद्भव हुआ।

योगिनियों की उत्पत्ति एवं स्वरूपों के वर्णन पुराणों व ऐतिहासिक ग्रन्थों में मिलते हैं। पुराणों में शक्ति के रूप में योगिनियों का वर्णन प्रमुखता से किया गया है। इन पुराणों में मुख्यतः मार्कण्डेयपुराण, कालिकापुराण, अग्निपुराण, महाभागवतपुराण, मत्स्यपुराण, गरुणपुराण, स्कन्दपुराण, तथा देवीभागवतपुराण में योगिनियों की उत्पत्ति के विषय में अनेक कथाओं का उल्लेख मिलता है। यहां उनके विभिन्न स्वरूप, गुण व संख्या से सम्बन्धित उद्धरणों के साथ ही उनकी उपासना पर प्रकाश डाला गया है।

पुराणों के साथ ही अन्य ग्रन्थों यथा राजतरंगिणी, कथासरित्सागर, प्रबोध चन्द्रोदय एवं वेतालपचिश्मती आदि में भी योगिनियों से सम्बन्धित कथाओं का उल्लेख मिलता है।

प्राचीन ग्रन्थों में प्रमुख देवी-देवताओं के साथ ही उनसे सम्बन्धित पीठों का भी उल्लेख प्राप्त होता है। इन पीठों की कल्पना सती के अंगों को गिरने की कथा से की गई है। इन पीठों की संख्या पर कोई निश्चित मत नहीं प्राप्त होता। मध्यकाल में पीठों की संख्या अनिश्चित हो गई थी। कालिका पुराण में उल्लेख है कि भारत का प्रथम शक्ति पीठ औद्र देश में स्थापित हुआ था। इस अध्याय में वर्णित शक्ति पीठों का संक्षिप्त अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में मत्स्येन्द्रनाथ व उनके योगिनी कौल पर चर्चा की गई है। योगिनी कौल की स्थापना मत्स्येन्द्रनाथ ने किया था। मत्स्येन्द्रनाथ नाथसम्प्रदाय से सम्बन्धित थे। कहा जाता है कि उन्होंने अपना वास्तविक मत त्यागकर कामरूप में कदली वन की स्त्रियों के मायाजाल में फंसकर कौल अभ्यास आरम्भ किया था। फलस्वरूप उनके प्रभाव से कामरूप में प्रत्येक घर की स्त्रियां योगिनी हो गई। उन्होंने योगिनी कौल से सम्बन्धित ग्रन्थ (कौल ज्ञान निर्णय) की रचना भी किया। यह ग्रन्थ योगिनी कौल का एकमात्र प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है। विभिन्न विद्वानों ने मत्स्येन्द्रनाथ का काल निर्धारण 9वीं सदी के मध्य काल में किया है।

इसके पश्चात् इस अध्याय में योगिनी कौल के विषय में चर्चा की गई है। योगिनियों का वर्णन वैदिक व उत्तर वैदिककालीन ग्रंथों में मिलता है, किन्तु योगिनी कौल का स्वरूप 8वीं-9वीं सदी के लगभग अस्तित्व में आया। इस सम्प्रदाय ने योगिनियों के माध्यम से जादू-टोने व अलौकिकता में स्थान ग्रहण कर लिया। योगिनी कौल उपासना में मोक्ष प्राप्ति का कोई भी प्रावधान नहीं है। इस उपासना से उपासक सिद्धि प्राप्त करता है एवं वह उन सिद्धियों के माध्यम से दूसरों को प्रभावित करता

है। इस अध्याय में सिद्धियों का भी वर्णन किया गया है। यह कौल शैव धर्म से शाक्त धर्म में एक परिवर्तित स्वरूप है।

इस कौल की उपासना स्त्रियों के साथ की जाती है जो देवी स्वरूप होती है। इस उपासना में चक्र पूजा के माध्यम से योगिनी जागृत करके सिद्धि प्राप्त करने का विधान है। इस उपासना में गोपनीयता पर विशेष ध्यान दिया जाता था। जन विरोध या अन्य कारणों से कालांतर में इस उपासना में प्रतीकों को माध्यम बनाया गया। प्राप्त चित्रों तथा तंत्रों के उदाहरणों से प्रतीकों की उपासना की पुष्टि होती है। कहा गया है कि साधक के शरीर के बत्तीस धमनियों के मध्य प्रत्येक धमनी पर दो की संख्या में योगिनियां स्थित होती हैं। इन्हें चन्द्र सम्बन्धी स्वरूपों का ध्यान भी कहा गया है जिसमें प्रत्येक स्वरूप में काम सम्बन्धी देवियों के गुण व मुद्राएं होती हैं। चौंसठ कलाओं का यहां वर्णन योगिनियों के रूप में किया गया है। यहां योगी व योगिनियां तांत्रिक गुरु होते हैं।

पंचम अध्याय में पूर्व व मध्य भारत से प्राप्त विभिन्न योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य की चर्चा की गई है। भारत में अब तक कुल नौ मन्दिरों की संरचनाओं के अवशेष प्राप्त हुए हैं। प्राप्त संरचनाओं में खजुराहो, बदोह, रिखियां व वाराणसी के मन्दिर चौकोर भू-निवेश योजना के अन्तर्गत निर्मित हैं। शेष पांच मन्दिर वृत्ताकार भू-निवेश योजना में निर्मित हैं जो भेड़ाघाट, मितावली, दुधई, हीरापुर एवं रानीपुर झरियल में स्थित हैं।

इन मन्दिरों की संरचना पर विभिन्न विद्वानों ने अपना मत प्रकट किया है, किन्तु इस संदर्भ में प्रामाणिक तथ्यों का अभाव रहा है। शिल्प शास्त्रों में भी योगिनी मन्दिरों का उल्लेख नहीं मिलता। इन मन्दिरों की सम्पूर्ण संरचनाओं पर विचार करने के पश्चात् एच० सी० दास ने वृत्ताकार मन्दिरों को मण्डल, यंत्र एवं चक्र पर आधारित कहा है। उल्लेख्य है कि सर्वप्रथम कौल उपासना वृत्ताकार व चौकोर मण्डल को कागज, कपड़ा, धातु व प्रस्तर पर प्रतीकस्वरूप अंकित करके की जाती थी। इसी उपासना क्रम में कालान्तर में इन वृत्ताकार व चौकोर मन्दिरों का निर्माण हुआ। इन मन्दिरों में योगिनी यंत्र भी स्थापित किया जाता था, जिस पर योगिनियों को मंत्र द्वारा प्रतिष्ठापित करते थे। योगिनी मन्दिरों का स्वरूप चक्र की तरह है जो अनवरत गति का द्योतक है। इन मन्दिरों में चक्र शक्ति के रूप में, मध्य स्थान पर शिव बिन्दु के रूप में तथा मण्डल असमाप्ति के सिद्धान्त के रूप में होता है। शिव शक्ति के प्रतीक के रूप में ये मन्दिर भारतीय स्थापत्य कला के एक नवीन स्वरूप को प्रदर्शित करते हैं।

इन मन्दिरों की बाह्य दीवालों पर पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़ों को जोड़कर निर्मित की गई हैं। अधिकांश मन्दिरों में एक प्रवेश द्वार तथा आँगन में संरचना के मध्य स्थान पर मण्डप बने हैं। इन मण्डपों में शिवमूर्ति स्थापित है। बाह्य दीवालों में आँगन की ओर भीतर बरामदों के माध्यम से छोटे-छोटे आले निर्मित हैं जिसमें योगिनी मूर्तियाँ स्थापित हैं। इन मन्दिरों की सम्पूर्ण संरचना सादी है। मन्दिरों को खुले हुए छत का निर्मित किया गया है। कहा गया है कि रात्रि में योगिनियां

आकाश में विहार करती हैं तथा नीचे आने पर चक्र का निर्माण करती हैं अत: ये मन्दिर खुले छत के होते हैं।

विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त योगिनी मन्दिर 9वीं-12वीं सदी के मध्य निर्मित हैं। इन मन्दिरों से पूर्व व मध्य भारत में योगिनी कौल के प्रसार की भी पुष्टि होती है।

साथ ही इस अध्याय में मण्डल, योगिनी यंत्र एवं योगिनी चक्र का भी वर्णन किया गया है। प्राप्त सभी नौ योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य का वर्णन अलग-अलग विभिन्न क्षेत्रों के अनुसार किया गया है।

छाठवें अध्याय में विभिन्न मन्दिरों व स्थानों से प्राप्त योगिनी मूर्तियों का वर्णन किया गया है। मध्यकालीन शिल्पियों ने भारत के प्रत्येक भू-भाग पर मूलत: राज्य संरक्षण में या कभी-कभी स्वतंत्र रूप में विभिन्न सम्प्रदायों व शैलियों की विशिष्टताओं से युक्त मूर्तियों का निर्माण किया। ये मूर्तियाँ हिन्दू, बौद्ध एवं जैन धर्मों की विशिष्टताओं के साथ निर्मित हैं। प्राप्त योगिनी मूर्तियों में तीनों धर्मों की देवियाँ अपनी विशिष्टताओं के साथ सम्मिलित हैं।

विभिन्न राजवंशों के संरक्षण में पल्लवित योगिनी मूर्तियों का शिल्प चन्देल, कल्चुरी, भौमकर एवं सोमवंशी कला के उदाहरण के रूप में विद्यमान है। इन मूर्तियों में विभिन्न आंचलिक परम्पराओं व विशिष्टताओं को स्पष्ट देखा जा सकता है। भौमकरों के संरक्षण में बनी हीरापुर की योगिनी मूर्तियां उड़ीसा की स्त्रियों का प्राकृतिक स्वरूप प्रस्तुत करती है। यहाँ योगिनियों को विभिन्न सांसारिक क्रियाओं में लीन भैरव व कात्यायनी के साथ प्रदर्शित किया गया है। यहाँ मूर्तियों की पीठिका पर उनके नाम उत्कीर्ण नहीं हैं।

सोमवंशियों द्वारा निर्मित रानीपुर झरियल की योगिनी मूर्तियाँ अपनी भिन्न मान्यताओं के आधार पर निर्मित है। यहाँ की नृत्यरत योगिनियां भारतीय नाट्यशास्त्र के विभिन्न भावों को प्रस्तुत करती हुई प्रतीत होती हैं। यहाँ की मूर्तियों की पीठिका पर योगिनियों के नाम उत्कीर्ण नहीं हैं।

चन्देलवंशीय राजाओं द्वारा निर्मित योगिनी मूर्तियां उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश के विभिन्न मन्दिरों व स्थानों से प्राप्त हुई हैं। चन्देलों ने कला व स्थापत्य के क्षेत्र में नई धारा के साथ नए कलात्मक स्वरूपों का उत्सर्जन किया। इनके द्वारा निर्मित मूर्तियों में भाव-भंगिमाएं अपरिमित हैं तथा अलंकरण नीचे से ऊपर की ओर उगते हुए अंकित हैं। यहाँ भुजाओं का उपयोग स्तनों को उभारने हेतु किया गया है तथा इन मूर्तियों को तीन आयामों के साथ प्रदर्शित किया गया है। साथ ही इन मूर्तियों में पीठिका पर योगिनियों के नाम तत्कालीन लिपियों में अंकित हैं।

कल्चुरियों द्वारा निर्मित भेड़ाघाट के योगिनी मन्दिर में स्थानीय मूलतत्त्वों का गहराई से अंकन हुआ है। चौकोर चेहरे, उभरे कपोल, बड़े मुख, बन्द आंखें व मांसल गठीले शरीर इनकी विशिष्टता रही है।

भारत के विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त सभी योगिनी मूर्तियों में योगिनियों को आंचलिक प्रभावों से युक्त नारी सौन्दर्य की पराकाष्ठा के साथ निर्मित किया गया है। इनका नग्न कुमारियों के रूप में अंकन मन्दिरों के वातावरण को उत्तेजक बनाता है। योगिनियों के शरीर पर आच्छादित विभिन्न आभूषण स्वीकृत प्रतीकों के रूप में प्रदर्शित किए गये हैं। यहां मुकुट अक्षोभ्य, हार-रत्नसंभव, कुण्डल-अमिताभ, बाजूबन्द-वैरोचन, मेखला-अमोघसिद्धि, मुण्डमाल-विकास व संहार, सिर पर स्थित कपाल-संघारात्मक स्वरूप, घण्टा-दैत्यों व पापों से मुक्ति को प्रदर्शित करते है। इनके वाहन शव व प्रेत के सम्बन्ध में कहा गया है कि महाकाली आदि शक्ति के रूप में निष्क्रिय शिव पर संयोग की मुद्रा में स्थित होती हैं। योगिनियों के चेहरे पर भव्य मुस्कान महासुख तथा नृत्य व गायन यहाँ ध्यान व मंत्र को प्रदर्शित करते हैं इन सभी गुणों से युक्त अधिकाँश योगिनी मूर्तियों की पीठिकाओं पर उनके नाम उत्कीर्ण हैं। प्रस्तुत अध्याय में मन्दिरों, संग्रहालयों एवं विभिन्न स्थानों में प्राप्त योगिनी मूर्तियों का क्रमशः वर्णन किया गया है।

इसके अतिरिक्त प्रस्तुत शोधप्रबन्ध में दो परिशिष्ट भी हैं। प्रथम परिशिष्ट में देश के विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त योगिनी नामावलियों का अध्ययन ग्रन्थों व मन्दिरों के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। इन सूचियों में बहुत कम ऐसे नाम हैं जो एक दूसरे से विभिन्न सूचियों में सामंजस्य रखते हैं। विभिन्न सूचियों के अध्ययन के पश्चात् भी योगिनियों के स्वरूप का निर्धारण सम्भव नहीं है। प्राप्त नामावलियों से योगिनियों के नामों के साथ उनकी संख्या में भी भिन्नता है। विभिन्न सूचियों एवं तथ्यों पर विचार करने के पश्चात् यह स्पष्ट होता है कि योगिनियां यौगिक लैंगिक अभ्यास से सिद्धि प्राप्त आध्यात्मिक स्त्रियाँ होती थीं। कालान्तर में इन स्त्रियों को दैवीय स्वरूप प्रदान करने हेतु विभिन्न आंचलिक मान्यताओं के अनुसार प्रमुख देवियों के साथ लोक देवियों तथा अन्य देवियों का नाम दे दिया गया है इस कौल का अभ्यास आरम्भ में चौंसठ स्त्रियों के साथ किया जाता था जिसकी पुष्टि प्राचीनतम् ग्रन्थों एवं मन्दिरों से होती है। कालान्तर में विभिन्न स्थानीय मान्यताओं के कारण इनकी संख्या में भी परिवर्तन हुआ।

दूसरे परिशिष्ट में विभिन्न मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों के विवरणों से सम्बन्धित तालिकाओं को उल्लिखित किया गया है। प्राप्त मूर्तियों की संख्या को ध्यान में रखते हुए उनका क्रमशः अलग-अलग वर्णन मूर्तिकला के अध्याय में सम्भव नहीं था। अधिकांश मन्दिरों की मूर्तियों में पीठिका पर योगिनियों के नाम उत्कीर्ण हैं किन्तु कुछ ऐसी भी मूर्तियां प्राप्त हुई हैं जिन पर उनके नाम उत्कीर्ण नहीं हैं। मूर्तियों का निर्माण विभिन्न आंचलिक परम्पराओं के अनुसार हुआ है। अतः उनका मूर्ति विज्ञान सम्बन्धी अध्ययन सम्भव नहीं हैं। यहाँ हम प्राप्त प्रत्येक स्थान की मूर्तियों की तालिका प्रस्तुत कर रहे हैं जिसमें उनके स्वरूप, भुजाओं, मुद्रा, आयुध, वाहन एवं यदि कोई विशेष विवरण है तो उसके साथ वर्णन करने का प्रयास किया गया है, जिन मूर्तियों की पहचान नहीं हो सकी है उनकी भी तालिका सुविधा हेतु प्रस्तुत की गई है।

चित्र सूची

49. तेरवां, भेड़ाघाट, म० प्र०।
50. एरुड़ी, भेड़ाघाट, म० प्र० ।
51. अम्बिका, हिंगलाजगढ़, म० प्र०। (इन्दौर—केन्द्रिय संग्रहालय)
52. अपराजिता, हिंगलाजगढ़ । (भोपाल—संग्रहालय)
53. चामुण्डा, हिंगलाजगढ़ । (केन्द्रिय संग्रहालय—इन्दौर)
54. महिषासुर मर्दिनी, हिंगलाजगढ़ । (केन्द्रिय संग्रहालय—इन्दौर)
55. वैनायकी, हिंगलाजगढ़, (बिरला संग्रहालय—भोपाल)
56. माहेश्वरी, हिंगलाजगढ़ । (बिरला संग्रहालय—भोपाल)
57. इन्द्राणी, हिंगलाजगढ़ । (विरला संग्रहालय—भोपाल)
58. नागी, हिंगलाजगढ़ । (बिरला संग्रहालय—भोपाल)
59. वृषभा, शहडोल, म० प्र० । (भारतीय संग्रहालय—कलकत्ता)
60. तारिणी, शहडोल । (धुबेला संग्रहालय—म० प्र०)
61. वासुकी, पंचगाँव, शहडोल, म० प्र० ।
62. सर्वमंगला, शहडोल । (इण्डियन म्यूजियम—कलकत्ता)
63. अम्विका, अन्तरा, शहडोल, म० प्र०। (विरला संग्रहालय—भोपाल)
64. भानवी, शहडोल । (धूबेला संग्रहालय, म० प्र०)
65. नरसिंहीं, शहडोल । (इण्डियन म्यूजियम—कलकत्ता)
66. वादरी, शहडोल, म० प्र० ।
67. योगिनी, पंचगांव, शहडोल, म० प्र० ।
68. नदी देवियां, कंकालियन दाई मंदिर के समीप, अन्तरा, शहडोल—म० प्र०
69. भैरव, शहडोल, म० प्र० ।
70. उमा, नरेसर, म० प्र० । (राजकीय संग्रहालय—ग्वालियर)
71. मघाली, नरेसर । (राजकीय संग्रहालय—ग्वालियर)
72. वैष्णवी, नरेसर । (राजकीय संग्रहालय—ग्वालियर)
73. नीवऊ, नरेसर । (राजकीय संग्रहालय —ग्वालियर)
74. चामुण्डा, नरेसर । (राजकीय संग्रहालय—ग्वालिर)
75. विकनटञ्जः । (राजकीय संग्रहालय—ग्वालियर)
76. योगिनी (मानव मस्तक पर खड़ी), हीरापुर, उड़ीसा ।

नोट :—

छाया चित्र :

अमेरिकन इन्स्टीच्यूट आफ इण्डियन स्ट्डीज-वाराणसी ।
एवं भारत कला भवन के सौजन्य से प्राप्त ।

रेखाँकन :—

लेखक ने स्वयं तैयार किया है ।

विषय-सूची

भारत
INDIA
उत्तर प्रदेश
मध्य प्रदेश
उड़ीसा
१- वाराणसी
२- लोखरी
३- रिखियां
४- नेरसर
५- मितावली
६- हिंगलाजगढ
७- बदोह
८- दुधई
९- खजुराहो
१०-भेड़ाघाट
११-शहडोल
१२-रानीपुर-झरियल
१३-हीरापुर
• - योगिनी मंदिर स्थल

1

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

यह एक सामान्य धारणा है कि शाक्त तांत्रिक कौल के प्रचार-प्रसार एवम् उन्नति के पीछे राज्य-सत्ता द्वारा प्रदत्त प्रश्रय प्रमुख कारण था। केवल भारत ही नहीं विश्व के महान् स्थापत्यों का निर्माण राज्याश्रयों में ही हुआ। ये स्थापत्य अधिकांशतः राजा के धार्मिक विश्वास एवम् अभिरुचि के अनुकूल निर्मित हुए। कुछ राज्यों के स्थापत्य अपनी शैली के कारण विशेष रूप से प्रसिद्ध रहे और वे इतिहास के अंग भी बन गए। तांत्रिक ग्रन्थों से यह ज्ञात होता है कि योगिनी कौल की उपासना भी राजाओं के प्रश्रय से विकसित हुई। "योगिनी साधना"[1] में यह कहा गया है—"एक राजा चौंसठ योगिनियों की उपासना इस विश्वास के साथ करता था कि उसकी प्रसिद्धि समुद्र पार तक पहुँचेगी।" इसी ग्रन्थ में यह भी कहा गया है कि, "योगिनी एक साधारण व्यक्ति को भी श्रेष्ठ राजा बना सकती है।" "स्कन्दपुराण"[2] में उल्लेख है कि जो राजा चौंसठ योगिनियों की उपासना करता है वह विजय एवम् अपार ख्याति पाता है। प्रस्तर के योगिनी मन्दिरों के निर्माण हेतु प्रचुर धन की आवश्यकता के कारण ही सम्भवतः राज्याश्रय का होना आवश्यक था, क्योंकि इन मन्दिरों का निर्माण किसी साधारण व्यक्ति द्वारा सम्भव नहीं था।

हमारे अध्ययन का विषय भारत के उन तमाम राजवंशों की धार्मिक उपलब्धि का वर्णन करना नहीं है, जिनके शासन काल में अथवा जिनकी धार्मिक अभिरुचि के कारण विभिन्न मन्दिरों का निर्माण हुआ, अपितु केवल उन्हीं राजवंशों की धर्म प्रेरित कलात्मकता का वर्णन करना है, जिनके राज्यकाल में चौंसठ योगिनी कौल तथा उनके मन्दिरों का निर्माण हुआ। इन राजवंशों में मध्य भारत के चन्देल एवं कल्चुरि तथा उड़ीसा के भौम एवं सोमवंशी राजवंश प्रमुख हैं। इन्होंने योगिनी कौल की प्रसिद्धि एवं उनके मन्दिरों के निर्माण में अभूतपूर्व योगदान दिया।

भारत में चौंसठ योगिनी मन्दिरों का निर्माण लगभग ९वीं से 13वीं शताब्दी के मध्य विशेषतः पूर्वी एवं मध्य भारत के क्षेत्रों में हुआ है एवं अब तक प्राप्त 13 मन्दिरों में मात्र भेड़ाघाट, खजुराहो,

---

1. धाना शमशेर (सम्पादित), **योगिनी साधना**, जिल्द 4, पृष्ठ 422

2. के० डी वेदव्यास द्वारा सम्पादित, **स्कन्दपुराण**, (काशी खण्ड), अध्याय 45.

मितावली, दुधई, रानीपुर, झरियल, बदोह एवं हीरापुर के ही मन्दिरों के अवशेष मिलते हैं। इनमें भेड़ाघाट, मितावली, हीरापुर एवं रानीपुर झरियल की स्थापत्य संरचनाएं ही अधिकांशतः सुरक्षित हैं। जैन ग्रन्थों[1] में चार विशेष मन्दिरों का उल्लेख मिलता है जो भड़ौच, अजमेर, उज्जैन और योगिनीपुर (दिल्ली) में थे। अब इन स्थानों पर किसी भी मन्दिर का प्रमाण नहीं मिलता। बाद के प्राप्त अभिलेखों से ज्ञात होता है कि कुछ योगिनी मन्दिरों में 16वीं शताब्दी तक उपासना होती रही, किन्तु आगे चलकर इनकी उपासना के उल्लेख नहीं मिलते, जिससे यह प्रतीत होता है कि सम्भवतः इन मन्दिरों में उपासना बन्द हो गई थी। कपड़े एवं कागज पर बने हुये चित्रों से स्पष्ट होता है कि योगिनियों की उपासना बाद में प्रतीकात्मक रूप में होने लगी। आज भी यह कहीं-कहीं पर इसी रूप में प्रचलित है।

चन्देल :

चन्देल कला में आकर्षक मूर्तियों एवं भवनों के अनूठे उदाहरण प्राप्त होते हैं। चन्देलों के राज्य में कई योगिनी मन्दिरों के अवशेष मिलते हैं। इस वंश के राजाओं ने ९वीं शदी के आरम्भिक काल से 13वीं शदी तक राज्य किया। इनके योगिनी कौल से सम्बन्धित होने के प्रमाण नहीं मिलते, परन्तु इनकी राजधानी खजुराहो में बने चौंसठ योगिनी मन्दिर को अनदेखा नहीं किया जा सकता। खजुराहो में निर्मित कौल-कापालिक सम्प्रदाय से सम्बन्धित मन्दिर[3] एवं प्रणयलीन मूर्तियां यह प्रकट करती हैं कि योगिनी कौल एवं कौल-कापालिक, ये दोनों ही राज्याश्रय में प्रचलित थे। योगिनी मन्दिरों के निर्माण में राज-परिवार का योगदान अवश्य रहा होगा तथा साथ ही चन्देल राजे इसके प्रचार एवं प्रसार में भी रुचि लिए होंगे।

खजुराहो से प्राप्त होने वाले धंग के वि०सं० 1011 के अभिलेख[4] से प्रथम चन्देल शासक का नाम नान्नुक ज्ञात होता है, जिसकी पुष्टि अन्य अभिलेखों से भी होती है। नान्नुक पूर्ण स्वतन्त्र राजा न होकर एक सामन्त सरदार मात्र था तथा उसका काल प्रायः सभी विद्वान् 831 ई० से 845 ई० तक मानते हैं।[5] नान्नुक का उत्तराधिकारी उसका पुत्र वाक्पति था। वह एक शक्तिशाली सामन्त था तथा विन्ध्यपर्वत को उसका "क्रीड़ागिरि" कहा गया है।[6] उसका काल 844 ई० से 860 ई० तक कहा गया है। वाक्पति के जय शक्ति एवं विजय शक्ति नामक दो पुत्र थे। इनका राज्य काल 860 ई० से 900

1. एन०बी० झावेरी द्वारा सम्पादित, **भैरव पद्मावतीकल्प**, पृ० 234
2. **ग्वालियर आर्कियोलाजिकल रिपोर्ट** 1942-46, पृ० 66
   (1503 ई० का ग्वालियर के पास मितावली मन्दिर का अभिलेख प्रमाणस्वरूप लिया जा सकता है।)
3. प्रमोदचन्द्र, **"दी कौल-कापालिक कल्ट ऐट खजुराहो"**, **ललितकला**, नं० 1-2, 1955-56, पृ० 98-107
4. **एपीग्राफिया इण्डिका**, जिल्द 1, पृ० 125, श्लोक 10
5. विशुद्धानन्द पाठक, **उत्तर भारत का राजनैतिक इतिहास**, पृ० 377
6. पूर्वोल्लिखित क्र०सं० 2, पृ० 125-26, **श्लोक 12-13**

ई० तक ४० वर्षों का था। ये राजे कुछ नया कार्य नही कर सके। विजय शक्ति को गुर्जर प्रतिहार शासक भोज अथवा महेन्द्रपाल का करद सामन्त कहा जाता है।[1] 900 से 915 ई० तक विजय शक्ति के पुत्र राहिल ने शासन किया। उसने वास्तु और झीलों के निर्माण की वह परम्परा आरम्भ की जिससे चन्देल भारतीय इतिहास में अमर हो गये। समकालीन राज्यों के मध्य प्रतिष्ठित रूप में चन्देलों की सर्वप्रमुख स्वीकृति राहिल के पुत्र हर्ष के समय (10वीं शदी के आरम्भ) में हुई। उसका शासन काल 915 ई० से 930 ई० तक था। उसने अन्य राजवंशों से वैवाहिक सम्बन्धों का मार्ग अपनाया जिससे उसकी शक्ति एवं प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई।[2] हर्ष की चाहमान कुलोत्पन्ना रानी कंचुका देवी से उत्पन्न पुत्र यशोवर्मा चन्देल वंश का प्रथम प्रमुख विजेता सम्राट् हुआ।[3] धंग के खजुराहो अभिलेख[4] से ज्ञात होता है कि यशोवर्मा ने प्रसिद्ध शिव स्थान कालिंजर गिरि पर विजय प्राप्त किया था। इस अभिलेख के अनुसार उसने हिमालय से मालवा एवं काश्मीर से पंजाब तक के क्षेत्रों पर आधिपत्य स्थापित किया था।[5] इस समय उत्तर भारत में चन्देलों ने एक स्वतन्त्र एवं शक्तिशाली साम्राज्य स्थापित किया। यशोवर्मा ने 930 ई० से 950 ई० तक शासन किया। यशोवर्मा का पुत्र धंग उसके पश्चात् चन्देल राज्य का उत्तराधिकारी हुआ। उस समय चन्देल शासन अपनी पराकाष्ठा पर था। धंग का राज्य क्षेत्र कालंजर तक; मालवा नदी के किनारे भावस्त तक; वहाँ से कालिन्दी (यमुना) के किनारे तक तथा चेदि देश की सीमा से गोप नामक पर्वत तक फैला हुआ था।[6] धंग की उत्तर-पूर्वी राज्य सीमाएं प्रयाग और काशी के प्रसिद्ध तीर्थ क्षेत्रों को छूती थीं। दुधई अभिलेख में उल्लेख है कि यशोवर्मन के पोते ने मरकतेश्वर मन्दिर के साथ ही अन्य कई मन्दिरों का भी निर्माण करवाया था।[7] सम्भवतः उसी ने ही दुधई के चौंसठ योगिनी मन्दिर का भी निर्माण करवाया था। स्मिथ के शब्दों[8] में "खजुराहो" के भव्य मन्दिरों के रूप में मन्दिर वास्तु की उत्तरी शैली यशोवर्मा और धंग के शासनों (930-1100 ई०) में अपनी चरमोन्नति में पहुँच गई। धंग शिव उपासना में सर्वाधिक आस्था रखता था तथा उसका व्यक्तिगत धर्म हिन्दू था।

धंग की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र गण्ड गद्दी पर बैठा। गण्ड का न तो कोई अभिलेख प्राप्त होता है और न ही उसकी शासनावधि ही निश्चित है। विद्वानों ने उसका काल लगभग 1003 ई० से 1017 ई० के बीच माना है। गण्ड का पुत्र विद्याधर गण्ड के पश्चात् सम्भवतः 1018 ई० में गद्दी पर

---

1. हेमचन्द राय, **डाइनेस्टिक हिस्ट्री आफ नार्दर्न इण्डिया**, जिल्द 2, पृ० 67।
2. विशुद्धानन्द पाठक, **उत्तर भारत का राजनैतिक इतिहास**, पृ० 381
3. वही, पृ० 383
4. **एपीग्राफिया इण्डिका**, जिल्द 1, पृ० 126, श्लोक 30
5. वही, पृ० 122 (टिप्पणी)
6. वही, पृ० 129, श्लोक 134.
7. एच०सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 9
8. कनिंघम, आ०स०ई०रि०, जिल्द 2, पृ० 419
   जेम्स फार्गूसन, **हिस्ट्री आफ इण्डियन एंड ईस्टर्न आर्किटेक्चर**, 1910, जि० 2, पृ० 10 और आगे।

बैठा और लगभग 1029 ई० तक शासन किया। उसका सबसे महत्वपूर्ण संघर्ष महमूद गजनवी से हुआ। उस समय के मुसलमान इतिहासकारों ने भी महमूद गजनवी से उसके युद्धों का विशद् वर्णन किया है। 'इब्न-उल-अतहर' यह बताता है कि विदा अर्थात् विद्याधर राज्य सीमा की दृष्टि से भारत का सबसे बड़ा राजा था। विद्याधर के जीवन की सबसे बड़ी सफलता यह थी कि तुर्क उसके गढ़ कालंजर में चन्देलों की शक्ति का भेदन न कर सके।[1] विद्वान् प्रायः उसकी मृत्यु तिथि 1029 ई० स्वीकार करते हैं। विद्याधर के पुत्र विजयपाल के समय में चन्देल सत्ता क्रमशः शिथिल एवं संकुचित होने लगी। उसका शासन काल 1030 से 1050 ई० तक था। विजयपाल का पुत्र देववर्मा (1050-1 60 ई०) उसका उत्तराधिकारी बना। यहीं से चन्देल सत्ता का पराभव प्रारम्भ हो जाता है। उसके काल में चन्देलों के पराभव का मुख्य कारण कर्ण के नेतृत्व में डाहल के कलचुरियों की साम्राज्यवादी सत्ता का उत्कर्ष था। देव वर्मा का छोटा भाई कीर्ति वर्मा लगभग 1060 ई० में गद्दी पर बैठा। उस समय चन्देल राज्य अनेक विपत्तियों से गुजर रहा था। चेदिराज कर्ण ने देववर्मा को अपदस्थ कर दिया या मार डाला।[2] उसके पश्चात् कीर्तिवर्मा ने कर्ण को परास्त किया। इस वंश का अगला शासक सल्लक्षण शंकर वर्मा हुआ, जिसने 1100-1115 ई० तक राज्य किया। उसके पश्चात् क्रमशः जय वर्मा (1115-1120 ई०) तथा पृथ्वी वर्मा (1120-1129 ई) ने राज्य किया। पृथ्वी वर्मा का पुत्र मदन वर्मा इस वंश के महान शासकों में से था। उसके राज्य की "सीमा उत्तर में यमुना; दक्षिण-पश्चिम में बेतवा; पूर्व में रीवां एव दक्षिण में नर्मदा तक फैली थी।

मदन वर्मा के पश्चात् उसका पुत्र यशोवर्मा गद्दी पर बैठा। वह केवल एक वर्ष (1165-66ई०) तक ही शासन कर सका। उसके बाद जैसाकि सेमरा अभिलेख[3] से ज्ञात होता है कि परमर्दिदेव गद्दी पर बैठा। उसे पृथ्वीराज के नेतृत्व में चाहमानों और कुतुबुद्दीन ऐबक के नेतृत्व में तुर्कों के दो बड़े आक्रमणों को झेलना पड़ा, जिन्होंने शीघ्र ही इस वंश का पतन अवश्यम्भावी बना दिया। हसन निजामी नामक एक समकालीन मुसलमान इतिहासकार ने लिखा है कि कुतुबुद्दीन के (1202 ई०) आक्रमण से मन्दिरों को मस्जिद में बदल दिया गया तथा उनमें उपासना प्रतिबन्धित कर दी गई।[4] कालंजर खोने के बाद त्रैलोक्य वर्मा ने (1203 से 1250ई०)चन्देलों की राजधानी अजयगढ़ में बनाया। 1205 ई० में कालंजर पुनः उसके अधिकार में आ गया। त्रैलोक्य वर्मा के बाद क्रमशः तीन राजा सत्तारूढ़ हुए एवं उनका अन्तिम राजा हमीर वर्मा (1288-1310 ई०) था। उसके बाद चन्देलों के शासन का कोई प्रमाण नहीं मिलता।

इस राज्य में परम्परानुसार बड़ीगढ़, कालंजर, अजयगढ़, भनियागढ़ मर्फ मौधगढ़ एवं मैहर में किले थे। अभिलेखों में कालंजर एवं अजयगढ़ के उल्लेख मिलते हैं। खजुराहो अपने मन्दिरों,

---

1. आर०सी० मजूमदार, **ऐंश्यंट इण्डिया**, पृ० 351;
   हेमचन्द्र राय, **डाइनेस्टिक हिस्ट्री आफ नार्दर्न इण्डिया**, जि० 2, पृ० 692-93
2. वही, पृ० 698
3. **एपीग्राफिया इण्डिका**, जि० 4, पृ० 153-70
4. ओ०सी० गांगुली, **दी आर्ट आफ दी चन्देल्स**, पृ० 7-8.

कालंजर अपने किले तथा अजयगढ़ अपने महल हेतु राज्य के सांस्कृतिक केन्द्र थे।[1] यह राज्य संस्कृति एवं सभ्यता के क्षेत्र में कला, स्थापत्य एवं धर्म हेतु प्रसिद्ध था। चन्देल शिव और विष्णु के उपासक थे तथा उनके अधिकतर मन्दिर शिव, विष्णु, शक्ति तथा जैन धर्म से सम्बन्धित हैं। उनके अन्य मन्दिरों में प्रमुख रूप से पार्वती, लक्ष्मी, गणेश, सरस्वती, चन्द्र, कृष्ण, राम, ब्रह्मा एवं हनुमान आदि देवता स्थापित हैं।[2] खजुराहो में हिन्दू मन्दिरों के निकट ही बौद्ध एवं जैन मन्दिर भी बने हैं। जेम्स फर्ग्युसन ने इनकी साम्यता के बारे में कहा है कि विभिन्न धर्मों के मन्दिरों की कला से प्रतीत होता है कि ये एक ही राजा द्वारा निर्मित हैं।[3]

खजुराहों का चौंसठ योगिनी मन्दिर चन्देलों की एक महान एवं प्राचीनतम कृति है। यह मन्दिर सम्भवतः विजय शक्ति ने बनवाया था। उस समय खजुराहो शैली का विकास आरम्भ हुआ था। इससे ज्ञात होता है कि ये राजा शाक्त तांत्रिक कौल के भी उपासक थे। मध्य प्रदेश एवम् उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त अन्य योगिनी मन्दिरों के अवशेषों से भी इस कौल के मध्य भारत में प्रसारित होने की सम्भावना की पुष्टि होती है।

कल्चुरी :

उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र में लगभग 1000-1200 वर्षों तक कल्चुरियों ने कहीं न कहीं शासन किया और राजनीतिक एवं सांस्कृतिक दोनों ही दृष्टियों से महत्त्व प्राप्त किया। उनके प्रभाव का सबसे बड़ा द्योतक कल्चुरी संवत् है, जिसे मूलतः 248-49 ई० में आभीरों ने पश्चिमी भारत में किसी बड़ी घटना के उपलक्ष्य में प्रवर्तित किया था। किन्तु बाद में कल्चुरियों ने उसे अपनाकर अपना नाम दे दिया। आगे वाले दिनों में कल्चुरियों ने निर्विकल्प रूप से अपने आलेख्यों में इसी संवत् का प्रयोग किया।[4]

कल्चुरियों द्वारा निर्मित भेड़ाघाट का चौंसठ योगिनी मन्दिर इस मत के एक प्रमुख स्थापत्य के रूप में आज भी विद्यमान है। कल्चुरियों के अनेक शाखाओं में त्रिपुरी अथवा डाहल के कल्चुरी सर्वाधिक शक्तिशाली और प्रसिद्ध हुए, जिन्होंने लगभग 300 वर्षों तक उत्तर भारतीय राजनीति में महत्वपूर्ण भाग लिया। कल्चुरियों का इतिहास छठीं शताब्दी से प्राप्त होता है। उनके प्राचीनतम राजाओं में सर्वप्रथम कृष्णराज (570-575 ई०) तथा उसके बाद शंकरगण (575-600ई०) के उल्लेख मिलते हैं। त्रिपुरी के कल्चुरिवंश का पहला सुज्ञात एवं शक्तिशाली शासक प्रथम कोकल्ल हुआ। समसामयिक अनेक राजे उसकी मित्रता के लिये लालायित थे। कोकल्ल का समय डा० विशुद्धानन्द पाठक

---

1. ओ०सी० गांगुली, **दी आर्ट आफ दी चन्देलस**, पृ० 3
2. एन० एस० बोस, **हिस्ट्री आफ दी चंदेलाज आफ जेजाकभुक्ति**, पृ० 157
3. जेम्स फार्गुसन, **हिस्ट्री आफ इण्डियन एंड ईस्टर्न आर्किटेक्चर**, पृ० 49
4. वासुदेव विष्णु मिराशी, **कार्पस्**, जिल्द 4, भूमिका, पृ० 1-30

ने 9वीं सदी का तीसरा-चौथा पाद निर्धारित किया है।[1] कोकल्ल के पश्चात् शंकरगण द्वितीय(890-910 ई०) ने राज्य किया। तत्पश्चात् इस वंश में एक और शक्तिशाली राजा युवराजदेव प्रथम (915-945 ई०) हुआ जो शैव धर्म का पोषक एवं महान् निर्माता था। चन्देलों के अभिलेख में उसे प्रसिद्ध राजाओं के सिरों पर अपना पैर रखने वाला कहा गया है।[2] उसने प्रभाशिव नामक शैव साधु तथा उसके साथ रहने वाले अन्य साधुओं के लिये गुर्गी में एक मन्दिर सहित मठ बनवाया। उसकी रानी नोहला भी शैव धर्म की अनुयायी थी और उसने भी नोहलेश्वर नामक एक मन्दिर का निर्माण करवाया था। युवराज देव ने इन मन्दिरों के साथ ही भेड़ाघाट का प्रसिद्ध चौंसठ योगिनी मन्दिर भी बनवाया जो उसके योगिनी कौल के अनुयायी होने का सम्पुष्ट प्रमाण है। उसका पुत्र लक्ष्मण राज द्वितीय (945-970 ई०) भी शैव धर्म का अनुयायी था और अपने पिता की परम्परा में उसने भी कई मन्दिरों का निर्माण करवाया। तदोपरान्त शंकरगण तृतीय (970-980 ई०), कोकल्ल द्वितीय (990-1015 ई०) तथा गांगेयदेव विक्रमादित्य (1015-1040 ई०) के राज्य करने के बाद इस वंश में एक अन्य प्रभावशाली राजा कर्ण (1041-072 ई०) हुआ। उसे "भारतीय नेपोलियन" भी कहा जाता है। उसने राजनीतिक महत्ता की सूचक अनेक उपाधियां धारण कीं, जो उसके पूर्व किसी भी कल्चुरि शासक ने नहीं धारण की थी। डा० मिराशी का विश्वास है कि कर्ण ने अपने चक्रवर्ती पद की घोषणा के लिए लगभग 1052-53ई० में अपना दुबारा राज्याभिषेक कराया। गोपालपुर प्रस्तर अभिलेख में उसे सप्तम चक्रवर्ती राजा कहा गया है।[3] वह कला और संस्कृति का प्रबल पोषक था तथा उसने वाराणसी को अपनी राजधानी बनाया उसके बाद यशः कर्ण (1073-1123 ई०), गयाकर्ण (1123-51 ई०) तथा नरसिंह (1151-1203 ई०) ने क्रमशः शासन किये। इन्हीं के साथ ही कल्चुरि सत्ता की स्वतंत्र स्थिति भी समाप्त हो गयी। इनका राज्य समृद्ध था तथा कला, संस्कृति, साहित्य एवं धर्म के क्षेत्र में इनका महत्वपूर्ण एवम् अविस्मरणीय योगदान रहा।

कर अथवा भौमवंश

इस वंश ने उड़ीसा में लगभग दो सौ वर्षों तक राज्य किया था तथा इनका शासन काल उड़ीसा के इतिहास का स्वर्णकाल माना जाता है। इस वंश के राजाओं का कर नामान्त होने के कारण भारतीय इतिहास में यह वंश कर राजवंश के नाम से जाना जाता है। किन्तु इस राजवंश का एक दूसरा नाम भौम भी है;[4] क्योंकि यह अपनी उत्पत्ति भूमि से मानता है। डा० मजूमदार द्वारा निर्मित कर राजाओं की तालिका[5] के अनुसार उस राजवंश के एक ही नाम के कई राजा हुए थे। शुभाकर नामक

---

1. विशुद्धानन्द पाठक, **उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास**, पृ 614
2. धंग का खजुराहो अभिलेख, **एपीग्राफिया इण्डिका**, जिल्द 1, पृ० 127
3. वासुदेव विष्णु मिराशी, **कार्पस्** जिल्द 4, पृ० 653
4. रारवाल दास बनर्जी, **हिस्ट्री आफ उड़ीसा**, जिल्द 1, पृ० 159
5. विशुद्धानन्द पाठक, **उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास**, पृ० 286

पांच राजाओं के उल्लेख मिलते हैं। उड़ीसा पर शासन करने वाले 18 शासकों में से पांच महारानियाँ थीं। इस राजवंश का संस्थापक लक्ष्मीकर देव एक शक्तिशाली शासक था। उसके पश्चात् एक ताम्र-लेख के अनुसार क्षेमकर देव गद्दी पर बैठा। उसकी उपाधि परमोपासक यह प्रमाणित करती है कि वह बौद्ध धर्मावलम्बी था।[1] शिवकर देव प्रथम (756- 6ई०) भी बौद्ध था तथा उसकी उपाधि "परमतथागत्" थी। उसने अपने राज्य का विस्तार कलिंग, कोंगद एवम् उत्तर राढ़ा तक किया। शुभाकर देव प्रथम (790 ई०) इस राज्य का एक शक्तिशाली राजा हुआ। उसकी उपाधि "परम-सौगत" से उसका भी बौद्ध होना प्रमाणित है। किन्तु उसकी रानी माधवी शैव धर्म की अनुयायी थी और उसने जाजपुर में एक शिव मन्दिर का निर्माण करवाया था।[2] एतदर्थ एक पोखरे का भी निर्माण किया गया तथा उसकी देखभाल के लिए एक बाजार भी बसाया गया, जो आज भी वर्तमान है। इससे यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध, शैव एवं शाक्त तांत्रिक धर्म यहाँ एक साथ प्रचलित थे।

दूसरा राजा शिवकर देव द्वितीय (809 ई०) भी बौद्ध था। शान्तिकर देव प्रथम (829ई०) बौद्ध धर्म का संरक्षक माना जाता है। उसके काल में एक बौद्ध स्मारक का निर्माण हुआ था।[3] किन्तु, वह मात्र बौद्ध ही नहीं था, बल्कि उसने हिन्दू मन्दिरों को भी यथेष्ट संरक्षण दिया।[4] शुभाकर देव तृतीय (839ई०) इस वंश का एक शक्तिशाली राजा था जिसने परमेश्वर, महाराजाधिराज, परम भट्टारक की महत्वपूर्ण उपाधियाँ धारण की थी।

उड़ीसा के राज्य में प्रथम बार महारानी के रूप में त्रिभुवन महादेवी गद्दी पर बैठी। वह वैष्णव धर्म की अनुयायी थी, जैसाकि उसकी उपाधि "परमेश्वरी" से ज्ञात होता है। कर शासन के अन्तिम दिनों में कई रानियाँ बारी-बारी से गद्दी पर बैठी। वीरतवंश की शशिलेखा में उमा-माहेश्वर की उपासना हेतु एक मन्दिर बनवाया जो शैव एवं शाक्त धर्म के मिश्रण की ओर इगित करता है।[5] महारानी गौरी महादेवी के संरक्षण में शक्ति सम्प्रदाय का विशेष प्रचार-प्रसार हुआ। दण्डी महादेवी[6] के अभिलेख से ज्ञात होता है कि गौरी ने स्वयं को गौरी (पार्वती) का अवतार माना था तथा उनकी उपासना हेतु गौरी के एक मन्दिर का भी निर्माण करवाया था। उनकी पुत्री महारानी दण्डी महादेवी भी शक्ति कौल उपासना की अनुयायी थी। भौम वंशीय राज्य धर्ममहादेवी (948ई०) के साथ ही समाप्त हो गया।

---

1. विनायक मिश्र, **उड़ीसा अण्डर दी भूमकाराज**, पृ० 4
2. **एपीग्राफिया इण्डिका**, खण्ड 28, पृ० 180
3. एच०के० माहताब, **हिस्ट्री आफ उड़ीसा**, जिल्द 1, पृ० 130
4. **एपीग्राफिया इण्डिका**, खण्ड 28, पृ० 211
5. एच०के० माहताब, वही, पृ० 130
6. विनायक मिश्र, **उड़ीसा अण्डर दी भूमकाराज**, पृ० 62

भौमकरों के संरक्षण में धर्म, दर्शन, कला-स्थापत्य एवं भाषा-साहित्य के क्षेत्र में अप्रतिम उन्नति हुई।[1] यह राज्य विभिन्न दृष्टिकोणों से प्रसिद्ध था जिसमें तांत्रिक बौद्ध धर्म की उत्पत्ति तथा अन्त में शैव तथा शक्ति सम्प्रदायों के सम्मिश्रण के फलस्वरूप तांत्रिक उपासना का अभ्युदय उल्लेखनीय हैं। इस वंश की प्रसिद्धि उनके विश्वव्यापी धर्म, धार्मिक स्वतंत्रता, उदारता एवं चयन के लिये विशेष थी। कुछ अन्य राजा बौद्ध, वैष्णव, शाक्त एवं शैव धर्मों के अनुयायी और पोषक थे। इनका सम्पूर्ण काल विभिन्न धर्मों, दार्शनिक मतों, गूढ़ एवम् अन्य विद्याओं के समागम को प्रदर्शित करता है। इनसे मध्यकालीन कला एवं स्थापत्य पूर्णरूपेण प्रभावित थे। भौमकरों ने अनेक भवनों एवं मन्दिरों का निर्माण करवा कर इन धर्मों के प्रति अपनी आस्था व्यक्त किया। इन्हीं मन्दिरों में निर्मित हीरापुर का चौंसठ योगिनी मन्दिर भी हैं। भुवनेश्वर का वेताल मन्दिर इन सम्मिश्रणों का प्रतिनिधित्व करता है, जिसमें शाक्त, शैव एवं बौद्ध धर्म से सम्बन्धित अनेक मूर्तियां हैं।[2] तांत्रिक प्रभाव आरम्भ होने के पश्चात् इन मन्दिरों में कापालिकों की उपासना भी आरम्भ हो गई। वेताल का अर्थ है, वह मार्ग जिससे कपालिक सिद्धि प्राप्त करते हैं। कापालिक उपासना वेताल मन्दिर से आरम्भ हुई है, इसका प्रमाण उक्त मन्दिर की प्रमुख देवी चामुण्डा हैं जो साधारणतया कपालिनी भी कही जाती हैं। भौम करों के ही काल में निर्मित हीरापुर के चौंसठ योगिनी मन्दिर को श्री के एन० महापात्र आठवीं या नवीं शदी के आरम्भिक काल का मानते हैं।[3] उस समय उड़ीसा में हिन्दू-तांत्रिक धर्म चरमोत्कर्ष पर था, और इसी समय अनेक तांत्रिक मन्दिरों का भी निर्माण हुआ। सम्भवतः हीरापुर के योगिनी मन्दिर का निर्माण शान्तिकर की रानी हीरा महादेवी ने करवाया था। वर्तमान हीरापुर नामकरण उन्हीं के नाम से हुआ है।

सोमवंश

10वीं शदी के मध्य में महाकोसल के सोमवंशियों नें आधुनिक उड़ीसा के सम्भलपुर, पटना और सोनपुर जिलों पर अपना अधिकार स्थापित किया। इनकी राजधानी श्रीपुर (वर्तमान सिरपुर) थी। यह स्थान रायपुर (मध्य प्रदेश) से साठ किलोमीटर उत्तर-पूर्व दिशा में स्थित है।[4] उड़ीसा के इस सोमवंश का प्रथम शासक महाभवगुप्त (प्रथम) जनमेजय था,[5] जिसके अभिलेख पटना और सोनपुर से प्राप्त हुए हैं। सोमवंशी राजाओं के आरम्भिक इतिहास पर अभिलेखों एवं ताम्रलेखों द्वारा प्रकाश पड़ता है तथा यह भी ज्ञात होता है कि श्रीपुर पर क्रमशः बारह राजाओं ने शासन किया। कुछ राजाओं की उपाधि "त्रिकलिंगाधिपति" एवं "कौशलेन्द्र" थी जिससे यह प्रतीत होता है कि उनका राज्य क्षेत्र त्रिकलिंग एवं

1. एच०के० माहताब, **उड़ीसा अण्डर दी भूमिका राज्**, पृ० 145
2. के०सी० पाणीग्रही, **आर्कियोलाजिकल रीमेन्स ऐट भुवनेश्वर**, पृ० 232
3. के०एन० महापात्र, **उड़ीसा हिस्टॉरिकल रिसर्च जर्नल**, भाग 3, सं० 2, पृ० 65-75
4. एच०के० माहताब, **हिस्ट्री आफ उड़ीसा**, भाग 1, पृ० 171-172
5. दिनेशचन्द्र सरकार, लेखक ने प्रथम महाभवगुप्त का काल 935-70 ई० माना है। देखिए, **दि एज आफ इम्पीरियल कन्नौज**, पृ० 147

कोसल के कुछ हिस्सों (सोनपुर, पटना, संबलपुर आदि एवं वर्तमान पश्चिमी उड़ीसा के कुछ क्षेत्र) तक था। इन क्षेत्रों के स्थापत्य को देखकर यह स्पष्टतः कहा जा सकता है कि ये सोमवंशियों के आरम्भिक काल के हैं।

महाशिवगुप्त बालार्जुन अन्तिम राजा के पहले का एक शक्तिशाली राजा था। उसने अनेक भवनों का निर्माण करवाया था। आरम्भिक सोमवंशियों के अभिलेख अधिकतर आठवीं या नवीं शदी के प्राप्त होते हैं, इन अभिलेखों में श्रीपुर एवं पश्चिमी उड़ीसा के वर्णनों में महाशिवगुप्त बालार्जुन को कला एवं संस्कृति का पोषक, महान निर्माता एवं शिव-भक्त कहा गया है।[1] रानीपुर झरियल (बोलंगीर-जिला) का चौंसठ योगिनी मन्दिर सम्भवतः सोमवंशी राजाओं द्वारा निर्मित है। रानीपुर झरियल का शिल्प एवं स्थापत्य कला की दृष्टि से विशिष्ट महत्त्व रखता है। लक्ष्मण मन्दिर (सिरपुर) के अभिलेख[2] से ज्ञात होता है कि महाशिवगुप्त बालार्जुन की माता रानी वसता ने इसका निर्माण करवाया था। इसका निर्माण काल सातवीं शदी का उत्तरार्द्ध माना जाता है। कनिंघम ने रानीपुर झरियल के योगिनी मन्दिर को नवीं शताब्दी का कहा है,[3] यद्यपि रानीपुर झरियल समूह के मन्दिरों का निर्माण सातवीं से दसवीं शदी के मध्य हुआ था। इन मन्दिरों का निर्माण विष्णु, शिव एवं शक्ति की उपासना हेतु किया गया था। बेग्लर ने इस स्थान के सन्दर्भ में अपना मत व्यक्त करते हुये लिखा है कि यहाँ पर अनेक मन्दिरों एवं अभिलेखों की प्राप्ति से ज्ञात होता है कि यह एक "तीर्थ स्थान" रहा होगा।[4]

आरम्भिक सोमवंशी राज्य में प्रमुख रूप से वैष्णव धर्म प्रचलित रहा, परन्तु इन राजाओं की उदारता से अनेक शैव एवं तांत्रिक मन्दिरों का भी निर्माण हुआ। उड़ीसा के परवर्ती सोमवंशी शासक शैव धर्म के अनुयायी थे। उनकी "परममाहेश्वर" उपाधि इसका प्रमाण है। उन्हें साधारणतः "केसरी" कहा जाता था। इन्होंने अनेक महत्त्वपूर्ण कलाकृतियों एवं स्थापत्य का निर्माण करवाया था, जो आज भी अपनी उत्कृष्टता के लिए प्रसिद्ध हैं।

----
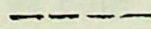
1. **एपिग्राफिया इण्डिका**, भाग 11, पृ० 184-85
2. के०एन० महापात्र, **उड़ीसा हिस्टॉरिकल रिसर्च जर्नल** भाग 3, संख्या 2, पृ० 65-67
3. ए० कनिंघम, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट**, भाग 9, पृ० 73
4. बेग्लर, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट**, नं० 2, भाग 13, पृ० 131

2

शक्ति-उपासना का क्रमशः विकास

शैव मत के साथ-साथ शिव की सहचरी देवी की स्वतन्त्र उपासना का भी विकास हो रहा था। आगे चलकर उसने एक मत का स्वरूप धारण कर लिया, जिसका अपना स्वतन्त्र साहित्य एवं श्रुति-ग्रन्थ भी था। इन्हीं श्रुति ग्रन्थों के अपरकालीन संस्करण "तन्त्र" कहलाए। इस मत में देवी को शक्ति के रूप में कल्पना किए जाने के कारण इसका नाम "शाक्त मत" पड़ा।

सिन्धु सभ्यता से पूर्व मध्य काल तक

भारतवर्ष में शक्ति के रूप में देवियों की पूजा वैदिक काल के पहले से ही होती रही है। प्रारम्भ में मातृदेवी या शक्ति के रूप में नारी की नग्न मूर्ति को प्रदर्शित किया जाता था। मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा[1] से अनेक मातृकाओं की मूर्तियां प्राप्त हुई हैं, जिनके बारे में यह कहा जाता है कि ये कौल के प्रभाव में बनी थीं। प्राचीन काल में विभिन्न स्थानों पर मातृदेवियां, विभिन्न स्वरूपों में पूजी जाती थीं। क्रमिक विकास के फलस्वरूप इस उपासना ने सम्प्रदायों का रूप ग्रहण कर लिया। समाज में मातृकाओं के महत्त्वपूर्ण स्थान के पीछे नारी की आर्थिक भूमिका, विवाह में किसी नियम का न होना, एवं बच्चे का मां के साथ जुड़ा होना ही प्रमुख कारण था। मां को अर्थ, शक्ति एवं समाज का प्रतीक माना जाने लगा तथा मातृकाओं की मूर्तियों में इस प्रकार के लक्षणों का समावेश होने लगा। आर्यों तथा अनार्यों के सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक सिद्धान्तों के सम्मिश्रण के फलस्वरूप इस विशेष सम्प्रदाय का उदय हुआ। सिन्धु सभ्यता में नारी मूर्तियों की प्राप्ति इस बात का द्योतक है कि इस धार्मिक विश्वास का बृहद् पैमाने पर प्रचार था। वैदिक उपासना दुष्कर एवं शीघ्र ग्राह्य होने वाली नहीं थी तथा उपनिषदों का दर्शन भी साधारण व्यक्ति की समझ के बाहर था। इन्हीं कारणों से तंत्र ने अपने दर्शन एवम् उपासना (जो सरलता से ग्राह्य था) से जनसाधारण को आकर्षित किया। तंत्र में वैदिक उपासना, उपनिषदों के दर्शन, पुराणों की भक्ति तथा पतंजलि की यौगिक क्रियाओं का मिश्रण तो था ही साथ ही अथर्ववेद की मंत्र विधि भी थी।[2] इसलिए यह जनसाधारण, विशेषतः समाज के पिछड़े वर्गों में अधिक

---

1. जान मार्शल, **मोहनजोदरो ऐण्ड इट्स सिविलाइजेशन,** भाग 1, पृ० 57-58 ; मैके, **इट्स सिविलाइजेशन,** पृ० 66-68
2. पुष्पेन्द्र कुमार, **शक्ति कल्ट इन ऐंशियेण्ट इण्डिया,** पृ० 149

प्रचलित हुआ। तंत्र का उपयोग धर्म, जादू, उपचार, मंत्र, यंत्र इत्यादि में होता था। उसकी प्रमुख विशेषता उसका सर्वसुलभ तथा सर्वगम्य होना था।

तंत्र की उत्पत्ति के सन्दर्भ में फारक्यूहर की मान्यता है कि शाक्त धर्म का आरम्भ एवं प्रचलन 500-900 ई० के मध्य हुआ। इसी समय पुराण, उपपुराण, उपनिषद् एवम् अनेक तंत्रों का अभ्युदय हुआ।[1] किन्तु चिन्ताहरण चक्रवर्ती[2] का मत है कि इनकी रचना का सही समय निश्चित कर पाना सम्भव नहीं है। तांत्रिक ग्रन्थों के विकास में काफी समय लगा है। इसलिये तांत्रिक ग्रन्थों की तिथियां प्राप्त प्रमाणों के आधार पर ही निश्चित की जा सकती हैं।

कुछ विद्वान् शाक्त धर्म की उत्पत्ति पूर्व एवं प्रागैतिहास काल में मानते हैं। सम्भवतः पूर्व इतिहास काल के लोग जादू-टोने से प्रभावित थे और उसका उपयोग वे शत्रुओं को नष्ट करने अथवा प्रभावहीन करने के लिए करते थे। फ्रेजर की भी मान्यता है कि जादू-टोने का प्रयोग लगभग सभी कालों में होता था, किन्तु विभिन्न कालों में इसके प्रयोग की मात्रा कमोबेश थी।[3] आरम्भ में लैंगिक उपासना प्रतीक के रूप में होती थी जिसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण भारत की शिवलिंग उपासना है। उनके धर्म में प्रयुक्त होने वाली वस्तुओं में मदिरा, गांजा, भांग आदि प्रमुख थे, जिनका प्रयोग मुख्यतः एकाग्रता हेतु किया जाता था। इनका उपयोग तंत्रोपासना में मुद्रा, आसन एवं न्यास आदि अनेक क्रियाओं हेतु भी किया जाता था।[4]

तंत्र का सम्बन्ध मात्र हिन्दू धर्म से नहीं था; बौद्ध धर्म में भी इसका महत्त्वपूर्ण प्रभाव था। बौद्ध धर्म सम्बन्धी तांत्रिक ग्रन्थ 'गुह्य समाज'' एवं ''मंजुश्री मूलकल्प'' में ध्यान के तांत्रिक स्वरूप का उल्लेख है।[5] इसमें मुद्रा, मण्डल, यंत्र, क्रिया, चर्या, शील, व्रत, शौचाचार, नियम, होम, जप, ध्यान तथा विभिन्न देवी-देवताओं के स्वरूपों का भी विशद वर्णन किया गया है।[6] बौद्ध धर्म के वज्रयान ने विभिन्न देवों की उपासना में काफी प्रसिद्धि पायी। इसमें स्त्री-पुरुष सम्बन्धों पर भी विचार व्यक्त किया गया है। वज्रयान ने मोक्ष प्राप्ति के नये तत्त्व के रूप में महासुख दिया।[7] बाद में स्त्री सिद्धान्त पर इसमें नये स्वरूपों का विकास भी हुआ।

---

1. जे० एन० फारक्यहर, ऐन आउट लाइन आफ दी रिलीजियस लिट्रेचर आफ इण्डिया, पृ० 200
2. चिन्ताहरण चक्रवर्ती, दि तन्त्राज्, पृ० 19
3. फ्रेजर, गोल्डेन बाऊ, भाग 1, पृ० 10.
4. चिन्ताहरण चक्रवर्ती, दि तन्त्राज्, पृ० 79
5. पी० वी० वापट, स्कूल्स एण्ड सेक्ट्स आफ बुद्धिज्म इन कल्चरल हेरिटेज आफ इण्डिया, भाग 1, पृ० 487
6. बी० भट्टाचार्या, दि इण्डियन बुद्धिस्ट आइक्नोग्राफी, पृ० 11
7. एच० सी० दास, तांत्रिसिज्म, पृ० 2

मोहनजोदड़ो एवं हड़प्पा के उत्खननों से प्रमाणित होता है कि मातृकाओं से ही शक्ति उपासना का उद्भव हुआ तथा शिव कौल से इसका निकट का सम्बन्ध रहा।[1] आर्यों के आगमन से पूर्व हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो के निवासियों का आध्यात्मिक सम्बन्ध शक्ति एवं शैव सम्प्रदायों से था। सिन्धुघाटी के अनार्य शैव एवं शाक्त धर्मावलम्बी थे तथा वे अपने बौद्धिक स्तर के अनुसार तंत्र साधना करते थे। शिव एवं शक्ति, ये दो सम्प्रदायों के प्रतीक हैं तथा इनकी उपासना प्रमुख देवता या देवी के रूप में होती रही है। विद्वानों की यह आम धारणा है कि शिव अनार्यों के देवता रहे हैं।[2] सिन्धु सभ्यता के लोग मातृकाओं, शिव, लिंग, स्वास्तिक आदि की उपासना करते थे जो प्रायः हर स्थान पर होती थी।[3]

उपर्युक्त ऐतिहासिक साक्ष्यों से यह प्रमाणित होता है कि प्राचीन भारत में तंत्र उपासना का पर्याप्त प्रभाव था। ऐसा कहा जाता है कि तंत्र एवं शक्ति अनार्यों की ही देन हैं। आर्यों की संस्कृति में तंत्र उपासना अनार्यों की तांत्रिक उपासना का ही रूपान्तरित स्वरूप है। अनार्यों के देवता शिव तंत्र के प्रमुख स्रोत हैं एवं सभी प्रक्रियायें उन्हीं पर निर्भर करती हैं। आर्यों ने विज्ञान का अध्ययन, तंत्र साधना एवं शिव को अनार्यों से ग्रहण किया। तंत्र की संस्थापना भगवान् शिव ने स्वयं किया था। इसीलिए उन्हें आदि गुरु भी कहते हैं। वे महायोगी एवं महाकौल भी कहे जाते हैं। उन्हें 'तन्त्र साधना' द्वारा आदि शक्ति प्राप्त है। शिव की आध्यात्मिक शक्ति एवं व्यक्तित्व का अनुमान कोई व्यक्ति नहीं लगा सकता। उन्हें गुणातीत एवं निर्गुण पुरुष कहा गया है।[4]

प्रागैतिहासिक काल से ही तांत्रिक सम्प्रदायों को विभिन्न स्वरूपों में विकास के विभिन्न स्तरों से होकर गुजरना पड़ा। आरम्भिक वैदिक कालीन समाज में पुरुषों को प्रधानता दी जाती थी। स्त्रियों का स्थान उनके बाद आता था। वैदिक काल के उत्तरार्द्ध में अम्बिका, काली, दुर्गा एवं अन्य देवियां पुरुष देवताओं की सहायिका के रूप में प्रकाश में आयीं। विकास की इस मन्द गति में शिव तो यथावत रहे परन्तु उनकी पत्नी उमा शक्तिशाली देवी के रूप में स्थापित हो गयीं।[5] शक्ति के अन्य स्वरूपों में दुर्गा महालक्ष्मी, महासरस्वती तथा वैष्णवी की पहचान विश्वरूपिणी के रूप में हुई। तांत्रिक शब्दों के रूप में बिन्दु, नाद, शक्ति, मन्त्र आदि का प्रचलन भी हुआ। शाक्त उपनिषदों में कहा है कि सम्पूर्ण विश्व

---

1. जान मार्शल, **मोहनजोदड़ो एण्ड इट्स सिविलाइजेशन**, पृ० 107 (पाद टिप्पणी)
2. एल० पी० सिंह, **तंत्रा-इट्स मिस्टिक एण्ड साइण्टिफिक बेसिस**, पृ० 3
3. बी० भट्टाचार्या (सम्पादित), **कल्चरर हेरिटेज आफ इण्डिया**, भाग 1, पृ० 123-24
4. एल० पी० सिंह, पूर्वोल्लिखित, पृ० 31
5. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 3

शक्ति द्वारा संचालित होता है, शक्ति के बिना ब्रह्माण्ड में कुछ भी नहीं है ।[1] यह देवियों के अद्भुत एवम् अज्ञात चरित्र की ओर संकेत करता है ।

पुराणों में शक्ति (योगिनी)

यह उल्लेखनीय है कि योगिनी कौल की उत्पत्ति आश्चर्यजनक है । योगिनियों की उत्पत्ति एवं विकास का अध्ययन प्रायः पुराणों, तंत्रों, प्रचलित कथाओं तथा पुरातात्त्विक अवशेषों के आधार पर किया जाता है । पुराणों में इनके विषय में अनेक उल्लेख प्राप्त होते हैं । पौराणिक ग्रन्थों में शिव, योगिनियों के संरक्षक के रूप में वर्णित हैं । मार्कण्डेयपुराण में शक्ति को ब्रह्माण्ड की जननी, उसकी रक्षा करने वाली तथा साथ ही उसे नष्ट करने वाली भी कहा गया है । शक्ति की उत्पत्ति राक्षस महिषासुर का वध करने हेतु देवताओं ने किया था । मातृकाओं (मूलतः योगिनियों) की उत्पत्ति के सन्दर्भ में मार्कण्डेयपुराण[2] में कहा गया है कि अम्बिका ने मातृकाओं की सहायता से रक्तबीज का वध किया । राक्षस शुम्भ के पास ऐसी शक्ति थी कि उसके खून के जमीन पर गिरते ही उसके प्रत्येक बूंद से एक राक्षस उत्पन्न हो जाता था । योगिनियों ने राक्षस के शरीर से निकला प्रत्येक बूंद खून जमीन पर गिरने से पहले ही पी लिया । इस प्रक्रिया से राक्षस खून द्वारा गुणात्मक प्रकार से अन्य राक्षस नहीं बना सका, अतः वह मृत्यु को प्राप्त हुआ ।

महाभागवतपुराण[3] में महादेव काली के निवास का वर्णन करते हुए कहते हैं. "वह एक विशाल नगर है, जिसके चार प्रवेश-द्वार हैं; मध्य में सिंह पर सवार देवी है तथा उनकी सहचारिका के रूप में चौंसठ योगिनियां तथा सहायकों के रूप में भैरव हैं । इन्हीं पर इस नगर की सुरक्षा का भार है । मत्स्य-पुराण[4] में भी इस संदर्भ में एक रोचक कथा वर्णित है, अन्धक नामक एक दैत्य था, जो अपनी तपस्या के कारण स्वर्गवासियों द्वारा नहीं मारा जा सका । उसने एक बार महादेव एवं पार्वती को क्रीड़ा करते देखा और पार्वती के अपहरण की चेष्टा करने लगा । इस घटना से अवन्ति प्रान्त के महाकाल वन में शिव तथा अन्धक के मध्य घनघोर युद्ध हुआ । शिव ने अन्धक पर अत्यन्त उग्र पाशुपत नामक अस्त्र का प्रयोग किया, इस आघात के फलस्वरूप अन्धक के शरीर से जो रक्त स्राव हुआ उससे अनेक अन्धक उत्पन्न हो गये । तब भगवान् शिव ने उसके रक्त को पीने के लिए अनेक मातृकाओं को उत्पन्न किया । इन भयानक मातृकाओं ने उन अन्धकों का रक्तपान करके परम तृप्ति का लाभ किया । उनके तृप्त होने के पश्चात् पुनः प्रचुर संख्या में अन्धक उत्पन्न हो गये । भगवान् शिव क्षुब्ध होकर विष्णु के पास गये, तब विष्णु ने शुष्क रेवती नामक देवी का सृजन किया । शुष्क रेवती ने क्षण भर में ही समस्त

---

1. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 3
2. **मार्कण्डेयपुराण**, अध्याय 88
3. **महाभागवतपुराण**, अध्याय 59
4. रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री (अनु०), **मत्स्यपुराण**, अध्याय 119, श्लोक 1-42, 55-74, 179

असुरों का रक्तपान कर लिया। उसके पश्चात् मातृकाओं ने उग्र रूप धारण करके तीनों लोकों का चरा-चर भक्षण आरम्भ कर दिया। शिव ने तब नरसिंह (जो कभी मृत्यु को नहीं प्राप्त होते) का ध्यान किया। तब नरसिंह रूपधारी विष्णु ने सर्वप्रथम जिह्वा से वागेश्वरी देवी को सृष्टि की और उसके बाद क्रमशः हृदय से माया, गुह्य प्रदेश से भगमालिनी तथा हड्डियों से काली की सृष्टि की। इस काली ने ही अन्धक के रक्त का पान किया और वे ही इस लोक में शुष्क रेवती के नाम से प्रसिद्ध हुईं। अन्त में विष्णु ने अपने अंगों से बत्तीस मातृकाओं को भी उत्पन्न किया। किन्तु उनके द्वारा उत्पन्न देवियां अति बलशालिनी तथा तीनों लोकों की सृष्टि और संहार में समर्थ थीं। वे सब इन मातृकाओं पर अत्यन्त क्रोध में विस्तृत नेत्रों के साथ दौड़ पड़ीं। इन्हें देखकर जगत् विनाश हेतु उद्यत मातृकायें नरसिंह की शरण में पहुंची। नरसिंह ने उन्हें समस्त लोक को पालन करने की सलाह दी। अन्त में शिव ने उन्हें अपना अति रौद्र दिव्य शरीर दिया और स्वयम् उनके मध्य भाग में अवस्थित हुये।

मातृकाओं की उत्पत्ति के सन्दर्भ में मत्स्यपुराण में जो कथाएं हैं उनसे स्पष्ट होता है कि ये योगिनियां थीं। पुराणों में उल्लिखित अधिकतर मातृकाओं के नामों को अन्य कई ग्रन्थों में योगिनी भी कहा गया है। मत्स्यपुराण, स्कन्दपुराण, गरुड़पुराण तथा देवी भागवतपुराण का काल लगभग 7वीं से 8वीं शती के मध्य का है।[1] महापुराण (जो लगभग 7वीं से 8वीं शती के मध्य की रचना है) से यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि योगिनी कौल इस काल में बहुप्रचलित था, परन्तु इनसे उसकी उत्पत्ति पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता।

अग्निपुराण[2] में इनकी संख्या चौंसठ होने का उल्लेख प्राप्त होता है। इसमें सर्वप्रथम मातृकाओं की संख्या आठ कही गई है। इसी ग्रन्थ के अन्य अध्याय[3] में अष्टाष्टक मातृकाओं का उल्लेख मिलता है, जिनकी संख्या (8 × 8) 64 कही गई है। साथ ही यह भी उल्लेख मिलता है कि इनकी उपासना मण्डल में होती थी।

स्कन्दपुराण[4] में योगिनियों की विभिन्न स्वरूपों में काशी में प्रवेश करने का विस्तृत वर्णन मिलता है। इन योगिनियों को शिव ने काशी भेजा था, परन्तु वे पुनः वापस न लौटकर काशी में ही वास करने लगीं। ये योगिनियाँ चौंसठ की संख्या में हैं तथा ये सभी मातृकाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं। ऐसा कहा गया है कि इनके जाप से बाधाएं दूर होती हैं तथा सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण होते हैं। धूप, दीप, बलि एवं उपहारादि द्वारा शरद काल में उनका पूजन-हवन करने से सिद्धि प्राप्त होती हैं। योगिनियाँ शम्भु की शक्ति हैं तथा दूसरों के लिए अगोचर हैं। शम्भु ही इनके परम सुख को जानते हैं।

---

1. आर० सी० हाजरा, **स्टडीज इन वि उपपुरानाज्**, भाग 1, पृ० 25
2. **अग्निपुराण**, अ० 52 एवं 146(अ० 146, भाग 1)
3. (मातृकाओं व योगिनियों की प्रतिमा का वर्णन किया गया है)उपर्युक्त, अ० 146, भाग 2
4. **स्कन्दपुराण**, काशी खण्ड, अ० 45

स्कन्दपुराण में[1] ही अन्यत्र वर्णन मिलता है कि योगिनियां अनेक हैं तथा इनके अलग-अलग गोत्र हैं। ये लोक देवियाँ होती हैं तथा सभी भयानक स्वरूप की हैं। उनके कुल देवता के रूप में कुछ प्रमुख देवियाँ प्रतिष्ठापित हैं जो श्रीमाता, तारणी, असापुरी, गोत्रपा, इच्छार्तिनाशिनी, पिप्पली, विकारवसा, जगन-माता, महामाता, सिद्धा, भट्टारिका, करम्दा, विकारा, मीथा, सुपर्णा, वसुजा, मातंगी, महादेवी, वाणी, मुक्तेश्वरी, भद्रा, महाशक्ति, संहारी, महाबला एवं चामुण्डा हैं।

कालिकापुराण[2] में देवी पूजन के साथ ही योगिनियों की पूजा की भी बात कही गई है तथा प्रमुख देवियों के साथ ही उनका भी नामोल्लेख हुआ है। इनकी पूजा का उल्लेख आठ दलों के साथ किया गया है। यहाँ पर योगिनियों को देवी की सखी की उपमा दी गई है। कालिकापुराण[3] में यह भी उल्लेख प्राप्त होता है कि भारत में प्रथम तांत्रिक पीठ की स्थापना जगन्नाथ देव एवं देवी कात्यायनी के साथ औद्रदेश में हुई थी। जाल शैल में चण्डी एवं महादेव, पूर्ण शैल में पूर्णेश्वरी एवं महानाथ तथा कामरूप में कामेश्वरी एवं कामेश्वर के पीठ थे।

महाराष्ट्र में श्रावण महीने में अमावस्या पर पिथौरी व्रत बहुप्रचलित है। यह व्रत चौंसठ योगिनियों के सम्मान में होता है। यह परम्परा यहां सम्भवतः उत्तर वैदिक काल से ही प्रचलित है। इस व्रत की उत्पत्ति के बारे में भविष्यपुराण[4] में उल्लेख प्राप्त होता है। यह व्रत योगिनियों द्वारा बच्चों की रक्षा हेतु सम्पन्न होता है।

ऐतिहासिक ग्रन्थों में योगिनियां

कल्हण की राजतरंगिणी[5] में योगिनियों को मद्यपद्देवता कहा गया है, जो रक्तपान करती हैं। वे अपनी इच्छापूर्ति में किसी का भी प्राण ले सकती हैं तथा मानव शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके भूख शान्त करती हैं। ये रणक्षेत्र में गले में मुण्डमाल एवं हड्डी के हथियार धारण करके नृत्य भी करती हैं।[6] योगिनियाँ भयानक स्वरूप की होती हैं तथा वे मनुष्य को पक्षी या पशु बनाने की क्षमता से युक्त होती हैं।[7] यदि कोई मनुष्य इनकी इच्छापूर्ति नहीं करता है, तो उसे अनेक कठिनाइयों का सामना

---

1. **स्कन्दपुराण**, ब्रह्मा खण्ड, धर्माण्यमहात्म्य (9.106)
2. **कालिकापुराण**, (अनु०. चमनलाल गौतम), भाग 2, कामाख्या महात्म्य
3. **कालिकापुराण**, (सं० पंचानन तारक रत्न), अ० 64, पृ० 410;
   कालिकापुराण, ए कम्पाइलेशन, **इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टली**, भाग 23, पृ० 322-326
4. **भविष्यपुराण**, सं० निर्णय सागर प्रेस, (पिथौरीव्रत कथा) शक 1828
5. कल्हण, **राजतरंगिणी**, भाग 2, पृ० 100-103
6. श्रीकृष्ण मिश्र, **प्रबोध चन्द्रोदय**, अंक 11
7. **कथासरित्सागर**, (सं० के० एस० सारस्वत), पुस्तक 7, अ० 3

करना पड़ता है । वे गले में जादुई धागा डालने के बाद किसी को भी तोता या मनचाहे प्राणी के रूप में परिवर्तित करके अपने वश में कर लेती हैं जब वे अपनी इच्छानुसार धागा हटा लेती हैं; तब वह पुनः मानवी रूप धारण कर लेता है । उनमें हवा में तैरने की क्षमता होती है तथा वे सदा समूह में भ्रमण करती हैं । कथासरित्सागर में "शरभानना योगिनी कथा"[1] में कहा गया है कि योगिनियों ने एक बार महाकाल स्वामी के आदेश से महाराजा विद्याधर की कन्या को आकाश में उड़ते हुए यात्रा करके तेज प्रभा से मुक्त कराया था । योगिनियों द्वारा भविष्यवाणी किए जाने के भी उल्लेख मिलते हैं । 'बेतालपंचविम्शति' के अनुसार जब विक्रमादित्य पेड़ पर बैठकर तोते की कथा सुन रहे थे, उस समय उन्होंने देखा कि योगिनियाँ एक मुर्दे को खा रही थीं, तथा वे एक बच्चे के आँत को चबा रही थीं । शेर एवं हाथी गर्जन तथा चिग्घाड़ कर रहे थे । (चित्र-2) इस ग्रन्थ में वर्णित कथाओं के अनेक चित्र भी मिलते हैं ।

योगिनियाँ आकाश में विचरण करने की अभ्यस्त होती हैं तथा ये मानव की सहायता करती हैं । वे सदा चक्र में विचरण करती हैं, और भैरव के पास रहती हैं । वे जब विचरण करती हैं तो घुंघरुओं एवं घण्टियों की ध्वनि होती है । इस प्रकार इनके सन्दर्भ में अनेकानेक कथाओं के उल्लेख प्राप्त होते हैं ।

'उत्तम चरित कथानक' में एक नृत्याँगना, 'अनंगसेना एवं राजकुमार' 'उत्तम चरित्र' की कथा वर्णित है। कहा गया है कि 'अनंगसेना' एक योगिनी थी, जो राजकुमार पर मोहित हो गई थी । उसने राजकुमार के शरीर पर जादुई धागा डाल कर उन्हें तोते के स्वरूप में कर लिया था । उसे जब राजकुमार के साथ संसर्ग की आवश्यकता पड़ती थी उस समय वह उनके शरीर से जादुई धागा हटा लेती थी । धागा हटते ही राजकुमार अपने मूल स्वरूप में हो जाते थे । संसर्ग करने के बाद वह पुनः राजकुमार के शरीर पर धागा डालकर उन्हें तोता बना देती थी ।[2]

'मालती-माधव' नाटक में 'सुदामिनी' नामक एक योगिनी को मांस भक्षण करते, एवं उड़ते हुए प्रदर्शित किया गया है ।[3]

ज्योतिष शास्त्रों में आठ योगिनियों मंगला, धन्या, पिंगला, भ्रमरी, भद्रिका, उलका, सिद्धिदा एवं संकटा का उल्लेख मिलता है । योगिनी दशा से सम्बन्धित अनेक पाण्डुलिपियाँ प्राप्त होती हैं । यह कहा गया है कि बाम दिशा में खुशहाली, दक्षिण में धन हानि, पीछे की ओर एवं सामने मृत्यु पर योगिनियाँ प्रभाव डालती हैं ।[4] योगिनियों के इस दशा से बचने के लिए उपासना का प्रावधान है ।

---

1. **कथा सरित्सागर**, (अनु० केदारनाथ शर्मा) भाग 2, पंचम तरंग, पृ० 383-85
2. एन०एम० पेंजर, **दी ओसीन आफ स्टोरी**, भाग 6, 1924-28, पृ० 60
3. लारेंजेन डेविड, **दी कापालिका एंड काल मुखाण**, पृ० 20
4. अगर चन्द नाहटा, **शोध पत्रिका** (योगिनी नामावली), 1962, 14:66-67

दक्षिण भारत के एक ग्रंथ "कलिंगातुपराणि" में यह उल्लेख प्राप्त होता है कि काली मन्दिर में योगिनियां आती रहती हैं। उनके दाहिने हाथ में खड्ग एवं बाएं हाथ में नर मुण्ड होता है।[1] एक अन्य ग्रंथ में योगिनियों का वर्णन करते हुए उन्हें चर्म का वस्त्र धारण करने के कारण चर्मिणी कहा गया है।[2]

वे स्त्रियां जो देवियों की सेवा करती थीं एवं जिनमें योगनिष्ठा होती थी, वस्तुतः उन्हें ही योगिनी कहा गया है। अथवा एक अन्य मान्यता के अनुसार वह स्त्री जो योग साधना के माध्यम से आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करके गुरु हो जाती है उन्हें योगिनी कहते हैं। योगिनियों की उपासना शिव के परिवार देवता के रूप में होती रही है। योगिनियां अपने भयानक स्वरूप एवं कार्यों से मानवीय बुराइयों एवं कमजोरियों को प्रदर्शित करती हैं। इन योगिनियों के नामों से मानव की कल्पना शक्ति तथा अन्य बातों यथा—काम, बुद्धि, अहंकार आदि का प्रदर्शन होता है, इनका नाम इनके आकर्षण शक्ति के कारण ही पड़ा है।[3] वे मस्तिष्क को स्वतन्त्र करके भक्तों की बातों को सुनाती हैं तथा अपने आदि शक्ति का समर्पण में उपयोग करती हैं। इनका नाम इनके स्वभावों पर आधारित है। वे सिद्धि, सम्पत्ति, मंगल, काम, दुःख, मृत्यु, विघ्न, सौन्दर्य, सौभाग्य एवं ज्ञानदात्री हैं।

शक्तिपीठ

मध्य काल में भारत में मुख्यतः चार प्रमुख शक्तिपीठ थे। इन पीठों की कल्पना सती के अंगों को गिरने की कथा से की गई है। सातवीं शती में सम्पादित 'हैवज्रतंत्र' के अनुसार उड़ीसा स्थित उड्डियान, कामरूप (कामाख्या), पूर्णगिरि (पूर्णशैल) और जालन्धर प्रमुख शक्तिपीठ थे। कालिकापुराण[4] में उल्लेख है कि प्रथम शक्तिपीठ भारत में औद्र देश में बना जिसके प्रमुख देवता जगन्नाथ थे। इसके अनुसार औद्र प्रथम केन्द्र है जहाँ देवी के रूप में कात्यायनी एवं देवता के रूप में जगन्नाथ को मान्यता मिली है। जालशैल देवी चण्डी और देव महादेव से सम्बन्धित पीठ हैं। 'पूर्ण शैल' देवी पूर्णेश्वरी एवं देवता महानाथ का पीठ है तथा 'कामरूप' देवी कामेश्वरी एवं देव कामेश्वर से सम्बन्धित पीठ हैं। बौद्ध ग्रन्थ साधन माला[5] में इसी परम्परा में चार पीठों के नाम उल्लिखित हैं। वे उड्डीयान, पूर्णगिरि, काम-

---

1 आर० नागास्वामी, **तांत्रिक कल्ट इन साउथ इंडिया**, पृ० 27

2 यू०वी० स्वामीनाथ अय्यर (सं०) **टक्यरप्पराणि**, श्लोक 88

3 बलराम श्रीवास्तव, **आइकनोग्राफी ऑफ शक्ति**, पृ० 110

4 **कालिकापुराण**, सं० पंचानन तारक रत्न, अ० 64, श्लोक 43, 44, पृ० 410

ओद्राक्षम् प्रथमम् पीठम् द्वितीय जालशैलकम्।
तृतीयं पुराणाप्तो हन्तुं कामरूपम् चतुर्थकम्।
उद्पीठम् पश्चिमे तु तथैव ईश्वरी शिव।
कात्यायनी जगन्नाथ मोदायै सम्प्रपूजयेत्॥

5 बी०सी० भट्टाचार्य, **साधनमाला**, पृ० 453-455

रूप एवं सिरिहट्ट हैं। यहाँ जालन्धर के स्थान पर सिरिहट्ट नाम आया है। परन्तु, मध्यकाल के उत्तरार्द्ध तक चार पीठों में एक पीठ जालन्धर प्रतिष्ठापित रहा है। 16वीं शताब्दी की एक इस्लामी गणना के अनुसार चार देवी पीठ इस प्रकार हैं—उत्तरी काश्मीर में सरदु, बीजापुर के समीप तुलजा, भवानी, कामरूप में कामाख्या, और पंजाब में जालन्धर।[1] दिनेशचन्द्र सरकार[2] बीजापुर को ही पूर्णगिरि कहते हैं। हैदराबाद के निकट प्रतापगढ़ किले में स्थित भवानी की मूर्ति के बारे में ऐसा कहा जाता है कि शिवाजी ने तुलजापुर की भवानी की याद में इसे स्थापित किया था। उड्डीयान उड़ीसा के रूप में था[3] जिसके प्रमाणस्वरूप पुरातात्त्विक साक्ष्य यह प्रदर्शित करते हैं कि उड़ीसा चौथी शदी से मध्यकाल तक तंत्र के प्रभाव में था। उड्डियन में ही बौद्ध वज्रयान की उत्पत्ति हुई जो आगे चलकर यहीं से देश के अन्य भागों में भी प्रसारित हुआ। कालिकापुराण[4] में आया है कि औद्र देश में भारत का प्रथम शक्ति-पीठ स्थापित हुआ था। वीरजा उड़ीसा की आरम्भिक शक्ति देवी रही है जिसे कात्यायनी भी कहा गया है।

उड़ीसा के अनेक शाक्त एवं शैव मन्दिर कालिकापुराण के इस कथन की पुष्टि करते हैं। यहां के राजा इन्द्रभूति एक महान तांत्रिक थे जिनके दत्तक पुत्र पद्मसम्भव थे। इन्हीं पद्मसम्भव नें सम्भवत: तिब्बत में बौद्ध तंत्र का प्रचार किया था। उड़ीसा का एक चौंसठ योगिनी मन्दिर पद्मसम्भव के काल का है।[5] इस प्रान्त के शाक्त एवं शैव मन्दिर मुख्यत: भुवनेश्वर, पुरी, जाजपुर तथा प्राची घाटी के क्षेत्रों में केन्द्रित हैं। यहां दो चौंसठ योगिनी मन्दिर, बारह सप्तमातृकाओं के स्थान तथा वाराही, चमुण्डा एवं इन्द्राणी व्यक्तिगत के मन्दिर बने हुए हैं।

11वीं शदी के तांत्रिक ग्रन्थ "रुद्रयामल" में दस प्रमुख पीठों का वर्णन है जिनमें उड्डियान भी एक पीठ के रूप में चित्रित है। इसी प्रकार "कुलार्णव तंत्र" में अठारह पीठों में कलिंग एवं उड्डियान का उल्लेख है। "ज्ञानार्णव तंत्र" में आठ पीठों में उड्डियान का तथा "कुब्जिका तंत्र" में बयालिस पीठों में वीरजा एवम् उड्डियान का स्पष्ट उल्लेख मिलता है।[6] इस ग्रन्थ की रचना सम्भवतः उत्तरी भारत में हुई थी। इस ग्रन्थ के शक्ति पीठों में देवी विन्ध्यवासिनी का भी नाम है, जिसका मन्दिर उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले में स्थित है। इसी प्रकार तंत्रसार की सूची में एकाम्र, जलेश्वर, उड़ीसा एवम् उड्डियान 51 पीठों की सूची में हैं।

---

1. एच०सी० दास, तांत्रिसिज्म, पृ० 6
2. दिनेशचन्द्र सरकार, दि शाक्त पीठाज्, जर्नल आफ एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल भाग 14, पृ० 17-21
3. निकडुगलस, तंत्रयोग, पृ० 7
4. कालिकापुराण, (त्रिनाथ शर्मा), इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टर्ली, भाग 23, पृ० 322-26
5. निकडुगलस, तंत्रयोग, पृ० 7
6. दिनेश चन्द्र सरकार, दि शाक्त पीठाज्, पृ० 17-21

ताड़पत्र बृहद् सूचियों द्वारा यह प्रमाणित होता है कि शक्ति-सम्प्रदाय का व्यापक क्षेत्र में विस्तार था। तंत्रसार के रूपान्तरित 1820 ई० के "पीठ निर्णय" में भी 51 शक्ति पीठों का उल्लेख मिलता है। मध्यकाल में पीठों की संख्या अनिश्चित हो गई थी। सम्भवतः 108 संख्या का महत्त्व 108 देवियों की उपासना से ही बढ़ा था।[1] मत्स्यपुराण[2] में 108 देवियों एवं उनके पूजा स्थलों का उल्लेख प्राप्त होता है। देवीभागवत, स्कन्द, मत्स्य एवं पद्मपुराणों में पीठों का उल्लेख उनके प्रमुख देवताओं के साथ हुआ है। देवियों के 108 नामों एवं इतने ही पीठों की संख्या का भी उल्लेख है, परन्तु पीठों के बारे में 108 की यह संख्या काल्पनिक प्रतीत होती है।[3]

———

1. तन्त्रसार, पृ० 48, 928
2. मत्स्यपुराण, अ० 13
3. दिनेशचन्द्र सरकार, दि शाक्त पीठाज्, पृ० 27-29

3

धार्मिक पृष्ठभूमि : मत्स्येन्द्रनाथ एवं योगिनी कौल

मत्स्येन्द्रनाथ :

मध्यकालीन भारत के धार्मिक इतिहास, विशेषतः नाथ सम्प्रदाय में मत्स्येन्द्रनाथ का नाम उल्लेखनीय है। इनके विषय में प्रामाणिक रूप से बहुत कम उल्लेख प्राप्त होते हैं। इन्हें गोरखनाथ का गुरु कहा जाता है। इनके नाम के सम्बन्ध में भी विवाद है। विभिन्न स्थानों पर इन्हें विभिन्न नामों से सम्बोधित किया गया है, जैसे मत्स्येन्द्र, मच्छेन्द्र, मच्छघ्न एवं मीन। तिब्बत में इन्हें 'लुई पा' और नेपाल में "अवलोकितेश्वर" कहा जाता है। नेपाल में आज भी इनकी उपासना "भृङ्गपाद"[1] के नाम से की जाती है। कश्मीर में इन्हें शैव आचार्य के रूप में पर्याप्त सम्मान प्राप्त है।[2] इनके बारे में उल्लेख है कि ये आदिनाथ (शिव) द्वारा निर्देशित होते हैं। "हठयोग प्रदीपिका" में इन्हें हठयोग का पथ प्रदर्शक कहा गया है।[3]

"कौल ज्ञान निर्णय" के अनुसार वे मूलतः ब्राह्मण थे। उनका नाम विष्णुशर्मन था। वे बंगाल स्थित चन्द्रद्वीप के निवासी थे। किंवदन्ती है कि उनके माता-पिता ने उन्हें समुद्र में फेंक दिया था जहाँ पर एक मछली ने उन्हें निगल लिया। मछली के पेट से ही उन्होंने ध्यानयोग तथा ज्ञानयोग की बातें सुना था। शिव को जब इस बात का ज्ञान हुआ, तो उन्होंने विप्र सम्बोधन के साथ उन्हें मत्स्येन्द्र-नाथ नाम दिया।[4] कौल ज्ञान निर्णय में ही आगे कहा गया है कि एक बार चन्द्रद्वीप में भैरव-भैरवी के पास शिष्य के रूप में कार्तिकेय पहुंचे। उन्होंने वहां कौलागम शास्त्र का ज्ञान प्राप्त किया। उन्हें इस

---

1. एस० लेवी, ला, नेपाल, भाग 1, पृ० 337, एवं प्रबोध चन्द्र बागची, **कौल ज्ञान निर्णय**, पृ० 58
2. **तन्त्रलोक**, अ० 1, पृ० 25
3. ब्रह्मानन्द, (सम्पादित), "**हठयोग प्रदीपिका**", भाग 1, (4, पादटिप्पणी) 1972 (हठा विद्या हि गोरक्षमत्स्येन्द्राद्या विजानते)।
4. प्रबोधचन्द्र बागची (सम्पादित), **कौल ज्ञान निर्णय**, अध्याय 16, श्लोक 34-35

शास्त्र से घृणा हो गई और उन्होंने उसे समुद्र में फेंक दिया, जहां एक मछली ने उसे निगल लिया। बाद में भैरव ने उसे मछली को जाल में फंसाकर तथा उसके पेट को फाड़कर उस शास्त्र को प्राप्त किया। इस प्रकार भैरव को ब्राह्मण स्वरूप त्याग कर शास्त्र प्राप्ति के लिए मछुआ बनना पड़ा। मछुआ का वह स्वरूप स्वयं मत्स्येन्द्रनाथ का भैरव के रूप में था।

बंगला ग्रंथों में मत्स्येन्द्रनाथ को मीननाथ कहा गया है। एक कथा के अनुसार एक बार जब शिव-गौरी को ध्यानयोग एवं ज्ञानयोग की बातें बता रहे थे तो उन्होंने एक मछली के रूप में उन गोपनीय बातों को सुना था। कथा में यह भी कहा गया है कि मीननाथ कदली वन में सोलह सौ स्त्रियों के साथ विहार किया करते थे। वहां योगियों तक को जाना मना था। उनका दर्शन मात्र नर्तकियां ही प्राप्त कर सकती थीं। वे स्त्रियों के साथ विहार आदि में आनन्द लेते थे। कई राजाओं के मृत्यु के बाद उनके शरीर में प्रवेश करके रानियों के संसर्ग का वे लाभ भी उठाते रहे[1]। दन्त कथाओं में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि मत्स्येन्द्रनाथ अपना असली मत त्याग कर कदली देश की स्त्रियों के माया जाल में फंस गये थे। कदली की स्त्रियां योगिनी थीं, जिसका उल्लेख "गोरक्ष विजय" आदि ग्रन्थों में मिलता है।[2] 'कौल ज्ञान निर्णय" से इस बात की भी पुष्टि होती है कि जिस शास्त्र की चर्चा हो रही है, वह कामरूप के योगिनियों के घर-घर में विद्यमान था और मत्स्येन्द्रनाथ ने वहीं से लब्धशास्त्र का सार संकलन किया था।[3] कामरूप की योगिनियों के माया-जाल से गोरक्ष नाथ ने मत्स्येन्द्रनाथ का उद्धार किया था, यह कई दन्तकथाओं से स्पष्ट है।

शेख फैजुल्लाह नामक बंगाली कवि की एक पुस्तक "गोरक्ष विजय" है। इस पुस्तक के सम्पादक श्री अब्दुल करीम का दावा है कि पुस्तक पांच या छः सौ वर्ष पुरानी होगी। इस पुस्तक में कदली देश की योगिनी द्वारा गोरक्षनाथ से संवाद उल्लेखनीय है। वह कहती है, "तुम जोगी हो, जोगी के घर जाओगे, इसमें भला सोचना-विचारना क्या है ? हमारा-तुम्हारा एक ही गोत्र है। तुम बलिष्ठ योगी हो, मैं जवान योगिनी हूं, फिर क्यों न हम अपना व्यवहार आरम्भ करें।" इस ग्रन्थ से तह प्रतीत होता है कि सम्भवतः प्राचीन काल से ही अधिकांश वन्य जातियां योगी एवं योगिनी रही हैं।

मत्स्येन्द्रनाथ के विषय में कही गई कहानियों के अनुशीलन से स्पष्ट होता है कि मत्स्येन्द्रनाथ एवं जालन्धरनाथ समसामयिक थे एवं वे गोरखनाथ के गुरु थे। वे कभी योगमार्ग के प्रवर्तक थे, किन्तु बाद में संयोगवश एक ऐसे आचार में सम्मिलित हो गये थे जिसमें स्त्रियों के साथ अबाध संसर्ग मुख्य कर्म था। सम्भवतः वह वामाचारी साधना थी।

---

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी, नाथ सम्प्रदाय, पृ० 45-51
2. वही, पृ० 51-63
3. अ० 20, श्लोक 10;

तस्य मध्ये इयं नाथ सारभूतं समुद्धृतं।
कामरूपे इदं शास्त्रं योगिनीनां गृहे-गृहे ॥

मत्स्येन्द्रनाथ द्वारा रचित "कौल ज्ञान निर्णय" ग्रन्थ की लिपि यह सिद्ध करती है कि वे ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हुए थे।[1] सुप्रसिद्ध कश्मीरी आचार्य अभिनव गुप्त ने "तन्त्रलोक" में मच्छन्द विभु को प्रणाम किया है। ये मच्छन्द विभु मत्स्येन्द्रनाथ ही हैं। अभिनवगुप्त ने "ईश्वर प्रत्यभिज्ञा की वृहति वृत्ति" की रचना 1015 ई० में और "क्रमस्तोत्र" की रचना 991 ई० में किया था। इस प्रकार अभिनवगुप्त 10वीं शताब्दी के अन्त एवं 11वीं शताब्दी के प्रारम्भ में विद्यमान थे।[2] अतः मत्स्येन्द्रनाथ अभिनवगुप्त के पहले थे। राहुल सांकृत्यायन ने 'गंगा के पुरातत्त्वांक' में वज्रयानी सिद्धों की सूची प्रकाशित की है। मीनपा नामक सिद्ध को, जिन्हें तिब्बती परम्परा में मत्स्येन्द्र नाथ का पिता कहा गया है, राहुल सांकृत्यायन ने मत्स्येन्द्र नाथ से अभिन्न माना है और उन्हें देवपाल का समकालीन (809 ई०—849 ई०) कहा है। इससे सिद्ध होता है कि मत्स्येन्द्रनाथ 9वीं शताब्दी के मध्य या अन्त तक वर्तमान थे।

मत्स्येन्द्रनाथ जिस कदली देश में नये आचार में फंसे थे, "मीन चेतन" एवं "गोरक्ष विजय" के अनुसार वह कदली देश ही है, किन्तु "योगिसम्प्रदाय विष्कृति" में उसे त्रियादेश अर्थात् सिंहल द्वीप कहा गया है। महाभारत (वनपर्व, अ० 146, में भी कदली वन का उल्लेख किया गया है। देहरादून से लेकर ऋषिकेश, बद्रीकाश्रम एवम् उसके उत्तर के हिमालय प्रान्त कजरी वन (कदली वन) कहे जाते हैं।[3]

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि स्त्रीदेश वस्तुतः "कामरूप" ही है। "तंत्रलोक" की टीका और "कौल ज्ञान निर्णय" से स्पष्ट है कि मत्स्येन्द्रनाथ ने कामरूप में ही कौल साधना की थी। अतः यह कदली देश या स्त्रीदेश वस्तुतः कामरूप है। अन्त में यह निष्कर्ष निकलता है कि मत्स्येन्द्रनाथ "चन्द्रागिरि" नामक स्थान में पैदा हुए थे जो कामरूप से बहुत दूर नहीं था। यह स्थान या तो बंगाल के समुद्री किनारे पर कहीं था, या जैसाकि तिब्बती परम्परा में कहा गया है, ब्रह्मपुत्र से घिरी हुई द्वीपाकार भूमि पर था। इनका प्रादुर्भाव 9वीं शताब्दी में कभी हुआ था तथा जिस स्थान पर वे नये आचार में व्रती हुए थे, वह स्थान स्त्री देश या कदली देश था जो सम्भवतः कामरूप ही है। उनके द्वारा संस्थापित "कौल ज्ञान निर्णय" में कौल मार्ग को योगिनी कौल के नाम से जाना जाता है। भैरवी के लिए ये भैरव और कोई नहीं स्वयं मत्स्येन्द्रनाथ थे। उल्लेखनीय है कि यह कौल आगे चलकर माबत कौल एवं सिद्धामृत के नाम से प्रचारित हुआ।[4]

---

1. हजारीप्रसाद द्विवेदी, **नाथ सम्प्रदाय**, पृ० 56
2. एस० के० डे, **संस्कृत पोएटिक्स**, भाग 1, पृ० 105
3. सुधाकर द्विवेदी, **सुधाकर चन्द्रिका**, (हिन्दी टीका)
4. प्रबोध चन्द्र बागची (सम्पादित) **कौल ज्ञान निर्णय**, **कलकत्ता संस्कृत टेक्स्ट, सीरीज सं० 3, अ० 16,** श्लोक 46-49

योगिनी कौल :

इस कौल की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कुछ निश्चित नहीं है, क्योंकि यह कौल पूर्ण रूप से गुप्त क्रियाओं पर आधारित था। यह पूर्णतः गुप्त था और कभी भी प्रचलित धार्मिक उपासना के रूप में नहीं रहा। इसकी उत्पत्ति आध्यात्म से सम्बन्धित है। जिसके विषय में विद्वानों ने विभिन्न मत प्रकट किए हैं, किन्तु इन मतों के आधार पर इस सम्बन्ध में कोई सन्तोषजनक समाधान नही प्राप्त होता। वैदिक एवम् उत्तर वैदिक कालीन ग्रन्थों में योगिनियों का वर्णन है, परन्तु योगिनियां कौल के स्वरूप से लगभग 9वीं शदी में आयी। इस कौल के आरम्भ होने का काल जो भी रहा हो, परन्तु यह सर्वदा शक्ति तंत्र के रूप में प्रभावी था। उसने योगिनियों के माध्यम से जादू एवम् अलौकिकता में स्थान ग्रहण कर लिया। इस कौल से सम्बन्धित प्राचीनतम् मन्दिर 9वीं शदी का प्राप्त हुआ है, परन्तु कौल का अस्तित्व इससे पहले भी था। 9वीं शदी में योगिनियां पारम्परिक हिन्दू धर्म में स्थान ग्रहण कर ली। लगभग इसी समय में संकलित अग्निपुराण[1] में चौंसठ योगिनियों का वर्णन प्राप्त होता है। संस्कृत ग्रन्थों में योगिनियों को प्रमुख देवियों (शक्ति) के रूप में चित्रित किया गया है। इन्हें सहायक देवियों के रूप में भी जाना जाता था। पौराणिक परम्पराओं में योगिनियों को दुर्गा, गौरी, कात्यायनी, भगवती एवं अन्य स्वरूपों में भी चित्रित किया गया है।[2] योगिनियों को प्राप्त कुछ सूचियों में प्रमुख मातृकाओं (ब्राह्मी, माहेश्वरी, वैष्णवी, कौमारी, ऐन्द्री, वाराही व चामुण्डा) का उल्लेख है। इनके देवी स्वरूप से सम्बन्धित कपड़े पर बना एक राजस्थानी चित्र (19वीं शदी) (चित्र सं०-3) उल्लेखनीय है।[3] इस चित्र में मुख्य देवी अपने बीस भुजाओं में विभिन्न आयुध धारण की है तथा वह एक लेटे हुए पुरुष पर खड़ी हैं। उसके सामने चौंसठ योगिनियों का एक बड़ा वृत्त है, जिस पर विभिन्न योगिनियों के नाम भी उल्लिखित हैं। इस चित्र से ऐसा प्रतीत होता है कि देवी से ही इनकी उत्पत्ति हुई है और सम्भवतः इसीलिए इन्हें देवी से सम्बन्धित प्रदर्शित किया गया है। योगिनियां देवी के विभिन्न स्वरूप एवं शक्ति को भी प्रदर्शित कर रही हैं।

एक अन्य पारम्परिक ग्रन्थ में ये प्रमुख देवी की सहायिकाओं के रूप में वर्णित हैं।[4] जिस प्रकार शिव के विभिन्न गण पशु-पक्षियों के सिरयुक्त वर्णित हैं उसी प्रकार स्वाभाविक रूप से देवी की भी सहायिकाओं का वर्णन किया गया है। इन सहायिकाओं का वर्णन मात्र ग्रन्थों में ही नहीं, बल्कि मूर्तियों एवं चित्रकला में भी है (चित्र-4)। कला में इन्हें पशु-पक्षियों के सिर से युक्त प्रदर्शित किया गया है। इन्हें शिव के गणों से अधिक शक्तिमान और दैवीय स्वरूप में भी प्रदर्शित किया गया है। इन

---

1. **अग्निपुराण**, अ० 52, व 146;
   यहाँ योगिनियों के मूर्त रूप का वर्णन किया गया है।
2. उदाहरणार्थ देखें, **स्कन्दपुराण** प्रभास खण्ड, 7, 119
3. विद्या दहेजिया **आर्ट इन्टरनेशनल**, मार्च-अप्रैल, 1982, पृ० 11
4. **महाभागवतपुराण**, अ० 59; यहां योगिनियों को देवियों की सहचरी के रूप में कहा गया है।

योगिनियों के नामों से सम्बन्धित पौराणिक एवं तांत्रिक ग्रन्थों को सूचियों में अनेक विभिन्नताएं हैं। इन विभिन्नताओं के अध्ययन हेतु परिशिष्ट(1) में वर्णित विषय को देखा जा सकता है। योगिनी शब्द की व्याख्या विभिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न प्रकार से की गयी है। यहां हम मात्र योगिनी कौल से सम्बन्धित व्याख्याओं को साहित्य एवं मूर्ति के आधार पर देखेंगे। विभिन्न क्षेत्रों में संकलित ग्रन्थ स्थानीय मान्यताओं पर आधारित हैं जिसका प्रभाव योगिनी मन्दिरों पर भी पड़ा है। प्रत्येक योगिनी मन्दिर क्षेत्रीय विशेषताओं के साथ निर्मित हैं।

योगिनी कौल का विस्तृत एवं गहन अध्ययन मत्स्येन्द्रनाथ ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ "कौल ज्ञान निर्णय" में किया है। यह योगिनी कौल का एकमात्र प्रामाणिक ग्रन्थ है। डा० बागची का अनुमान है कि मत्स्येन्द्रनाथ सिद्ध या सिद्धामृत मार्ग के अनुवर्ती थे एवम् उन्होंने योगिनी कौल मार्ग का प्रवर्तन किया था। कौल मार्ग सम्भवत: उनके परवर्ती एवं मध्यवर्ती जीवन का ज्ञान है। यह धारणा है कि मत्स्येन्द्रनाथ का योगिनी कौल, शैव धर्म से शाक्त धर्म में एक परिवर्तित रूप है। इस विशेष कौल का उत्सर्जन चन्द्रद्वीप में भैरव तथा कामरूप में भैरवी के रूप में जनसाधारण में हुआ। भैरव स्वयं मत्स्येन्द्र नाथ थे। इसे मत्स्येन्द्रनाथ कौल भी कहते हैं। इस कौल का अभ्यास स्त्रियों के साथ किया जाता है। यह उल्लेख प्राप्त होता है कि आगे चलकर यह गुप्त उपासना महत कौल सिद्धामृत के नाम से प्रचलित हुई।[1] कौल मार्ग के उपासक देवी की उपासना कुल के रूप में तथा शिव की उपासना अकुल के रूप में करते हैं। इस उपासना में योगिनी का प्रमुख स्थान होता है। योगिनियां साधक के शरीर के विभिन्न भागों में स्थित होतो हैं तथा ये यौगिक नाड़ियों से सम्बन्धित होती हैं। शरीर की बत्तीस (32) धमनियों के मध्य प्रत्येक धमनी पर दो की संख्या में योगिनियां स्थित होती हैं।[2] परा देवी असीमित उर्जा का स्रोत होती है। कुछ देवियां परा देवी के सिद्धान्त का पूर्ण, आंशिक अंशरूपिणी, शक्ति खण्ड (कला रूपिणी) तथा मानवी स्त्रियों के साथ विभिन्न अंशों में भी प्रदर्शन करती हैं[3] (चित्र 5)।

कौल ज्ञान निर्णय में योगिनियों को सहजा, कुलजा, पीठजा एवं अन्त्यजा कहा गया है। ये आन्तरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार के ध्यान के योग्य होती हैं। इनकी संख्या चौंसठ है। कुछ अन्य वर्गीकरण में उन्हें क्षेत्रजा, पीठजा, योगजा एवं मंत्रजा भी कहा गया है। ये विभिन्न सिद्धान्तों पर आधारित हैं तथा उनमें से प्रथम दो प्रमुख पवित्र पीठों से सम्बन्धित हैं।[4] यौगिक अभ्यास से सन्तुष्ट होने वाली योगिनियां, योगजा एवं मंत्रों द्वारा सन्तुष्ट होने वाली योगिनियां मंत्रजा कहलाती हैं। योगिनियों के इन स्वरूपों की उपासना अकेले या समूह में चक्र में होती है। उपासक को योगिनियों की

---

1. डब्ल्यू० वी० करम्बेलकर, **इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टर्ली**, भाग 31, सं० 4, पृ० 365
2. निकडुगलस, **तंत्रयोग**, पृष्ठ 26
3. मधु खन्ना, **यन्त्र**, पृ० 56-57
4. डी० सी० सरकार, **"दि शाक्त पीठाज्"**, **जनरल आफ एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल**, भाग 14, सं० 1

उपासना मां, बहन या पत्नी के रूप में करनी होती है ।[1] मातृ स्वरूप में उपासना करने पर वह बहुत सी सामग्री यहां तक कि दान के रूप में राज्य तक दे देती हैं । उसके साथ ही वे नित्य आकर मां के समान उपासक की रक्षा भी करती हैं । बहन के समान उपासना करने पर वे अन्य वस्तुओं के साथ दैविक वरदान देती हैं तथा भाई की तरह उपासक पर ध्यान रखती हैं। पत्नी के समान उपासना करने पर उपासक को भूत, भविष्य एवं वर्तमान जानने की शक्ति प्राप्त होती हैं एवं उसके तेज से वह राजा से भी श्रेष्ठ हो जाता है । वह आकाश, पाताल एवं मृत्युलोक का विचरण कर सकता है । योगिनी के साथ सम्भोग करने से वह परम सुख प्राप्त कर सकता है, परन्तु ऐसी स्थिति में उपासक को अन्य स्त्रियों के साथ संसर्ग का परित्याग करना पड़ता है । ऐसा कहा जाता है कि पूरे माह के ध्यानावस्था एवं प्रमुख दिनों की उपासना के पश्चात् योगिनी उपासक के समक्ष अर्धरात्रि में प्रकट होती है । जब उसे विश्वास हो जाता है कि उपासक दृढ़ है तभी वह दर्शन देती हैं ।[2] कुल एवम् अकुल के मिलन से परम सुख की प्राप्ति होती है । चक्र पूजा से भी इसे प्राप्त किया जा सकता है । यहाँ हम इस उपासना के आवश्यक अंगों का वर्णन कर रहे हैं ।

कौल-अभ्यास :

योगिनी कौल के अभ्यास के पीछे उपासकों की रुचि मुख्यतः सिद्धि प्राप्त करने में रही है। इस कौल के उपासना में मोक्ष प्राप्ति का कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता । योगिनी कौल उपासना के विभिन्न चरणों को 'महायाग' कहा गया है ।[3] इस गुप्त उपासना के ही उद्देश्य से योगिनी मन्दिरों को बन्द एवं एकान्त स्थान पर निर्मित किया गया है । यहां हम उपासना के विभिन्न क्रियाओं का वर्णन करेंगे ।

मद्य, मांस एवं रक्त : तंत्रों के विभिन्न पाण्डुलिपियों में योगिनी को मद्य, माँस एवं रक्त से सन्तुष्ट होने का उल्लेख प्राप्त होता है । एक पाण्डुलिपि में महाकाली के समक्ष सोलह मद्य से भरे हुए पात्रों का उल्लेख किया गया है[4], जिससे देवो उपासना में मद्य का महत्त्व ज्ञात होता है । देवी महात्म्य में चाण्डिका द्वारा अनेक मद्य भरे पात्रों को पान करके महिषासुर से युद्ध करने का उल्लेख मिलता है। ग्रन्थों में योगिनियों को मद्यपान करने के बाद प्रसन्नचित्त, एवं चढ़ी हुयी आंखों के साथ उल्लिखित किया गया है ।[5] एक अन्य उल्लेख में योगिनियों के पेय पदार्थों के विषय में कहा गया है कि वे मोठ, नारंगी के छिलके, गोल मिर्च, फूल, शहद, अशोधित भूरी शक्कर एवं पानी के मिश्रण का पेय ग्रहण करती हैं ।[6] इसके साथ ही विभिन्न स्थानों से प्राप्त योगिनी मूर्तियों में उन्हें मद्यपान करते हुए

---

1. विश्वनारायण शास्त्री, **योगिनीतंत्रम्**, व्याख्या (35) ।
2. डी० सी० बनर्जी, **तंत्रा इन बंगाल**, पृ० 54-55
3. अनन्त कृष्ण शास्त्री सं०, **ललित सहस्रनाम**, पृ० 127
4. **महाकाली षोडश पात्र**, पाण्डुलिपी सं० 858/बी० डी०, 189, एशियाटिक सोसाइटी, बम्बई ।
5. जनार्दन पाण्डेय, सं०, **गोरक्षसंहिता**, अ० 20
6. आर्थर एवोलोन, सं० **कुलार्णव तंत्र**, अ० 5, श्लो० 21-23

(चित्र-6) प्रदर्शित किया गया है। कभी-कभी उन्हें हाथ में प्याला लिए हुए भी प्रदर्शित किया गया है। कुछ योगिनियों के नामों से ही उनके मद्य प्रेम की झलक मिलती है, यथा उनमें सुरा-प्रिया, पीसितासव लोलुपा (मद्य की लालची) प्रमुख हैं।

योगिनियों द्वारा पशुओं के मांस का भक्षण, एवं रक्त पान करने के भी अनेक उल्लेख मिलते हैं। एक ग्रन्थ में उन्हें मद्य एवं रक्त पीकर नृत्य करने का उल्लेख प्राप्त होता है।[1] योगिनियों एवं भैरव के उपासना में रक्त एवं मांस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कहा गया है।[2] रक्तपान करने वाली योगिनी को 'रुधिर पायिनी तथा मांस भक्षण करने वाली को 'मांस प्रिया' कहा गया है। रक्त एवं मांस का देवियों से सम्बन्ध हमारे प्राचीन उल्लेखों में भी मिलता है एवं इस सम्बन्ध में अनेक कथाएं भी प्राचीन साहित्यों एवं चित्रों में (चित्र 90) वर्णित हैं। कामाख्या में चौंसठ योगिनियों की उपासना में आज भी प्रथा के रूप में पशुओं की बलि दी जाती है। इसी प्रकार दुर्गा देवी की उपासना हेतु बकरे की बलि देने को भी विभिन्न स्थानों पर परम्परा है। वैताल पंचिशमति कथा में योगिनी को मुर्दे का मांस भक्षण करने का उल्लेख किया गया है। तांत्रिक उपासना में मांस, मद्य एवं रक्त इन तीनों की परम्परा हमेशा रही है। इस प्रकार के उदाहरण के रूप में अनेक योगिनी मूर्तियां प्राप्त हुयी हैं जिनमें भेड़ाघाट की, सिंहसिहा, तथा लोखरी से अश्व के समान मुख वाली योगिनी, मूर्तियां प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। (चित्र-49-41)

शवसाधना : तंत्र सम्बन्धी उपासना में शवसाधना का भी प्रावधान है। एवं यह योगिनी उपासना का एक अभिन्न अंग है।[3] इस सन्दर्भ में वाराही तंत्र में योगिनियों को सिर कटे मानव शरीर, एवं कटे हुए सिर से सम्बन्धित कहा गया है।[4] शवसाधना मृत शरीर या शव के साथ आरम्भ होती है। इससे सम्बन्धित योगिनियों के नाम नरभोजिनी, मुण्डधारिणी, शवहस्ता आदि उल्लेखनीय हैं। शवसाधना के सम्बन्ध में विभिन्न तंत्रों में यह कहा गया है कि, "यह उपासना श्मसान भूमि पर की जाती है।" इस शवसाधना में योगिनियों को प्रसन्न करने के लिए सुरा एवं खाद्य पदार्थ आवश्यक है।[5] इस साधना में पुरुष एवं उसकी स्त्री साथी विवस्त्र शव के ऊपर बैठकर मैथुन क्रिया सम्पन्न करते हैं।[6] श्री मत्तोत्तरे तंत्र में कहा गया है कि यह साधना भैरव के समक्ष की जाती है तथा वहां भैरव मातृकाओं के मध्य विद्यमानहोते हैं। यह भी कहा गया है कि शव सुन्दर एवं कहीं से भी क्षत नहीं होना चाहिए। उसके शरीर से दुर्गन्ध नहीं आना चाहिए तथा उसके सभी बत्तीस दांत होने

---

1. हरप्रसाद शास्त्री, सं० **वृहद्धर्मपुराण**, अ० 23, श्लोक 17
2. सी० एल० गौतम, **तंत्र महासाधना**, पृ० 369
3. जनार्दन पाण्डेय, सं० **गोरक्षसंहिता**, अ० 40
4. बुद्धि सागर शर्मा, **वृहद् सूची पत्रम्**, भाग 3, पृ० 139
5. धाना शमशेर, **वृहद् पुरश्चर्यार्णव** भाग 2, पृ० 348
6. उपर्युक्त पृ० 354-56।

चाहिए।[1] इस क्रिया में शव को स्नान कराकर तथा चन्दन का लेप लगा कर मण्डल के मध्य रखा जाता है। उसके बाद भैरवमंत्र का जाप करते हैं। साधक शव का सिर पकड़ कर एक ही प्रहार से काटता है। इस प्रकार की क्रिया मध्य रात्रि में की जाती है। इसी प्रकार की क्रिया से सम्बन्धित कटे हुए मुण्ड योगिनियों से सम्बन्धित कहे गए हैं। यह भी कहा गया है कि योगिनियां आकाश से साधक की इस क्रिया को देखती हैं तथा साधक को आठ सिद्धियां प्रदान करती हैं। अनेक योगिनी मूर्तियों की नरमुण्ड; कपाल, शव एवं चाकू के साथ प्रदर्शित किया गया है। शहडोल से प्राप्त एक योगिनी मूर्ति 'मानवी' की जिसके हाथ में नरमुण्ड है तथा इसी मूर्ति के पीठिका पर सहायक आकृतियों के हाथों में नरमुण्ड तथा चाकू है एवं अन्य स्त्री को मानव का एक हाथ चबाते हुए प्रदर्शित किया गया है। नरेसर के साथ ही अधिकांश स्थानों से प्राप्त योगिनी मूर्तियों के हाथों में नरमुण्ड एवं वाहन के स्थान पर शव अंकित हैं। (चित्र 67, 73) इस उपासना में मुर्दे का मांस भक्षण करना भी गुप्त साधना का अंग माना गया है। इस साधना से सम्बन्धित अनेक चित्र भी विभिन्न, स्थानों पर प्राप्त होते हैं यहां हम एक चित्र का रेखांकन प्रस्तुत कर रहे हैं जिसमें योगिनी को शवासन में प्रदर्शित किया गया है (चित्र सं० 91)।

मांस भक्षण करने का उल्लेख भी अनेक स्थानों पर किया गया है। इस विषय में 'वैतालपंचिशतमी' पर आधारित कुछ चित्र भारत कला भवन-काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में संग्रहित हैं। प्रस्तुत चित्र में योगिनियों को मांस भक्षण करते हुए प्रदर्शित किया गया है। (चित्र-2)

मैथुन : योगिनी चक्र उपासना में मैथुन क्रिया सबसे महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक होती है। कुलार्णव तंत्र में भैरव को योगिनियों से आलिंगन बद्ध होने के उल्लेख प्राप्त होते हैं।[2] प्रत्येक समूह के भैरव को उस समय के योगिनियों के साथ आलिंगन बद्ध होने का भी वर्णन प्राप्त होता है। इस क्रिया में पुरुषों व स्त्रियों की संख्या में समानता आवश्यक है। इस उपासना में पुरुष साधक के साथ स्त्री भाग लेती हैं। उपासना के समय पुरुष शिव एवं स्त्री देवी सदृश होते हैं।[3] इस उपासना में पांच आवश्यक तत्त्व; मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा एवं मैथुन आवश्यक कहे गए हैं। इसमें प्रत्येक का नाम 'म' अक्षर से आरम्भ होता है तथा इसमें पांच 'म' प्रचलित हैं। इसमें मध्य स्थान पर साधक युगल के साथ आठ योगिनियों के चक्र से घिरा होता है। योगिनी चक्र के अभ्यास में आठ स्त्रियाँ घूम-घूम कर स्वयं को पुरुष साधकों पर सम्पादित करती हैं। नौवीं स्त्री साधक की प्रशिक्षित सहायिका उन्हें चरम स्थिति में पहुंचने में सहायता करती है।[4] चौंसठ की संख्या में भाग लेने वाले युगलों द्वारा भी इस उपासना में चक्र बनाकर मैथुन क्रिया करने के उल्लेख मिलते हैं। यह मैथून क्रिया शरीर के आन्तरिक भाग में स्थित चक्र द्वारा

---

1. जनार्दन पाण्डेय, **गोरक्षसंहिता**, अ० 4
2. आर्थर एवोलोन, सं० **कुलार्णव तंत्र**, अ० 10, श्लोक 84-85
3. उपर्युक्त, अ० 5
4. निकडुगलस एवं पेनी स्लिगर; **सेक्रेसुअल सिक्रेट्स**, पृ० 139

कुण्डलिनी जागृत होने से सम्बन्धित हैं। कौल-अभ्यास में मैथुन क्रिया सबसे महत्वपूर्ण होती है। तथा यह योगिनी मन्दिर में सम्पन्न की जाती थी। इस क्रिया के सम्बन्ध में योगिनियों से सम्बन्धित ग्रन्थ मौन हैं किन्तु इसके प्रतीकात्मक अंकन मिलते हैं। एक ग्रंथ में सहज को चक्र कहा गया है, किन्तु अकुलवीर तंत्र में सहज के विषय में विशेष वर्णन किया गया है। कहा गया है कि चक्र में पहुंचने के बाद योगिनी वाह्य उपासना एवं सांसारिक मोह से कारक की शृंखला में मुक्त हो जाती है।[1] कौल ज्ञान निर्णय के आठवें अध्याय में कहा गया है कि, 'इस विद्या के अभ्यास हेतु आठ मार्ग हैं, जिनमें प्रथम 'योगिनी चक्र' से सम्बन्धित है। योगिनी चक्र उपासना तंत्रों में प्रतीक के रूप में भी प्रचलित रही है। यह चन्द्र सम्बन्धी स्वरूपों का ध्यान है तथा प्रत्येक स्वरूप में काम सम्बन्धी देवियों विशेष गुण एवं मुद्राएं भी हैं। इस उपासना में गुरु की भूमिका प्रमुख होती है तथा योगी एवं योगिनियाँ तांत्रिक गुरु होते हैं। जब योगिनी कौल उपासना में चक्र पूजा से कुण्डलिनी जागृत होती है उस समय उपासकों को चरमसुख की प्राप्ति होती है। इस उपासना के बाद साधकों को सिद्धियां प्राप्त होती हैं जिनका वर्णन हम आगे करेंगे।

सिद्धियां :

योगिनो जागृति करके सिद्धि प्राप्त करने हेतु आठ विद्याओं के अनेकों मंत्र हैं। इस उपासना में जादुई शक्ति प्राप्त करने का भी प्रावधान है। किसी भी ग्रन्थ में योगिनी के साथ मोक्ष प्राप्ति का उल्लेख नहीं मिलता। इसका उद्देश्य जादुई शक्ति प्राप्त करना तथा दूसरों पर प्रभाव एवं नियंत्रण स्थापित करना होता है। इससे हवा में उड़ने की क्षमता भी प्राप्त होती है।[2] योगिनी चक्र उपासना से आठ सिद्धियां या जादुई शक्ति प्राप्त होती हैं[3], जो निम्न हैं—

1. अनिमा — (आकार में सूक्ष्म होना)
2. महिमा — (विशाल होने की शक्ति)
3. लघिमा — (इच्छा द्वारा प्रकाशमय होना)
4. गरिमा — (शक्तिशाली होना)
5. प्रकाम्य — (दूसरों की इच्छापूर्ण करने की शक्ति)
6. ईसित्व — (दूसरों के मस्तिष्क एवं शरीर पर नियंत्रण)
7. वसित्व — (प्राकृतिक तत्वों पर नियंत्रण)
8. कामावसायिता — (सबकी इच्छा पूर्ण करने की शक्ति)

---

1. **अकुलवीर तंत्र**, श्लोक 33-34; 8?-84 आर० डी० बनर्जी, **शैविज्म-वैष्णविज्म ऐण्ड अदर सेक्ट्स**, पृ० 365
2. **श्री मत्तोत्तरे तन्त्र**, (नेपाल, नेशनल आरकाइव, पाण्डुलिपि), अ० 20, पृ० 235; **विद्या दहेजिया, आर्ट इन्टर नेशनल**, पृ० 10
3. तथैव, अ० 19 व 20, 24, 27; तथैव, पृ 10

इन आठ सिद्धियों के साथ ही ग्रन्थों में अन्य शक्तिशाली योग्यताओं का वर्णन किया गया है, जिसमें काला जादू प्रमुख हैं। इसका उपयोग दुश्मन पर विजय प्राप्त करने, उसे निष्क्रिय करने, बेहोश करने तथा मृत्यु प्रदान करने हेतु किया जाता है। इससे किसी स्त्री को सम्मोहित करके आकर्षण शक्ति द्वारा उसके साथ स्वतंत्र व्यवहार करने की क्षमता प्राप्त होती है। यह आग एवं पानी पर नियंत्रण तथा दूर दृष्टि और दूर तक की आवाज सुनने की शक्ति प्रदान करता है।[1] भूत डामर तंत्र[2] में आठ विभिन्न योगिनीं साधना का वर्णन किया गया है। कहा गया है कि जब कोई साधक सिद्धि प्राप्त कर लेता है तो योगिनी से उसे मनचाही वस्तु मिल जाती है।

स्कन्दपुराण[3] में, योगिनियों का आगमन' अध्याय में योगिनियों के जादुई शक्ति का उल्लेख मिलता है। सिद्धियों में वशीकरण, आकर्षण, संहार, उच्चाटन आकाश में उड़ने की क्षमता, पानी एवं आग को रोकने की क्षमता, तथा किसी को भी अपनाने की शक्ति आदि प्रमुख हैं। ये सिद्धियां योगिनियां अपने भक्तों से प्रसन्न होकर प्रदान करती हैं। योगिनियां राजाओं को जो वरदान देती हैं उनमें धन एवं साम्राज्य सुरक्षा प्रमुख हैं। स्कन्दपुराण के इसी अध्याय में योगिनी चक्र एवं 64 योगिनियों के नाम भी उल्लिखित हैं।

कालिका पुराण[4] में भी सिद्धियों का उल्लेख प्राप्त होता है। इसमें एक 'पादलेप' का उल्लेख है जिसे पैर में लगाने पर कहीं भी आने-जाने की क्षमता प्राप्त होती है।

कौल ज्ञान निर्णय में भी सिद्धियों का वर्णन किया गया है, जिनमें दूर तक देखने की क्षमता, ऐच्छिक गति, दूसरे के शरीर में प्रवेश करने की क्षमता, क्षय एवं मृत्यु पर नियन्त्रण, सर्वप्रिय होने की क्षमता प्रमुख हैं। ऐसा कहा गया है कि ये सभी योग्यताएं एवं आनन्द योगिनियों के साथ समागम करने से मिलती हैं।[5]

कुलार्णव तंत्र में कहा गया है कि योगिनी उपासना से सिद्धि प्राप्त होती है। इसके साथ ही दोष शान्ति, रोगमुक्ति तथा सभी प्रकार के आपदाओं से मुक्ति प्राप्त होने का भी उल्लेख मिलता है।[6]

मत्तोतरे तंत्र में यह कहा गया है कि जो राजा 81 योगिनियों के मूल चक्र की उपासना करता है उसे युद्ध में अवश्य विजयश्री मिलती है, किन्तु वहीं कुलार्णव तंत्र में 64 योगिनियों के चक्र की उपासना राजाओं के लिए उपयोगी उल्लिखित की गई है।

---

1. **श्री मत्तोत्तरे** तन्त्र, (नेपाल, नेशनल आरकाइव, पाण्डुलिपि), अ० 7 व 24; स्कन्दपुराण, काशी खण्ड, अ० 45
2. विश्वनारायण शास्त्री (सं०), **योगिनी तन्त्रम्**, व्याख्या (XXXIII)
3. के० डी० वेदव्यास, **स्कन्दपुराण**, अ० 45, श्लो० 13-16 एवं 34-42
4. विश्वनारायण शास्त्री, सं०, **कालिकापुराण**, अ० 56, श्लो० 57
5. प्रबोध चन्द्र बागची, **कौल ज्ञान निर्णय**, अ० 7
6. वी० तरनाथ एवं आर्थर एवलोन, **कुलार्णव तन्त्र**, अ० 10

योगिनी साधना में कहा गया है कि, "योगिनी की उपासना पत्नी के रूप में करने पर उसे राजाओं में अग्रणी होने का सौभाग्य प्राप्त होता है। तथा इसी प्रकार युद्ध में विजय एवं धन प्राप्ति के उल्लेख स्कन्दपुराण में प्राप्त होता है।

इन सिद्धियों के विषय में एक ग्रन्थ 'उड़ीसा तंत्र'[1] में शिव द्वारा कुछ अध्यायों में विभिन्न मंत्रों का उल्लेख मिलता है। इन मंत्रों के अलग-अलग प्रभाव भी वर्णित हैं। अध्याय (1) एवं (2) में मारण मोहनम् (अ० 3), स्तम्भनम् (अ० 4), विद्वेशनम् (अ० 5), उच्चाटनम् (अ० 6), वशीकरणम् (अ० 7), आकर्षणम् (अ० 8) आदि का वर्णन किया गया है तथा ये प्रमुख सिद्धियां हैं। ऐसा मत है कि ये जादुई शक्तियाँ विभिन्न प्रकार के उपासना से प्राप्त होती हैं। इन सभी उल्लिखित जादुई शक्तियों एवं सिद्धियों को प्राप्त करने के उद्देश्य से योगिनियों की उपासना की जाती रही है।

विभिन्न चौंसठ योगिनी मन्दिरों में योगिनी मूर्तियों के दैवीय स्वरूप के अलावा उनके कार्यों एवं स्वभाव को भी प्रदर्शित किया गया है। योगिनी कौल की गुप्त उपासना को भी विभिन्न योगिनी मूर्तियों में प्रदर्शित किया गया है। इनकी विभिन्न उपासना की क्रियाओं को प्रदर्शित करने वाली प्रमुख योगिनी मूर्तियों का उदाहरण स्वरूप यहां वर्णन किया गया है। हीरापुर के योगिनी मन्दिर में कुछ मूर्तियों को देखने से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि योगिनियां अपने आकर्षक सौन्दर्य एवं विभिन्न मुद्राओं से उकसाने की प्रवृत्ति का प्रदर्शन कर रही हैं। रानीपुर झरियल के मन्दिर में योगिनियाँ विभिन्न भावों में नृत्यरत हैं। योगिनियों के नृत्य करने का वर्णन ग्रन्थों में भी मिलता है। योगिनी कौल उपासना में मद्यपान, शवसाधना, मांस भक्षण के साथ ही चक्र पूजा में होने वाली लैंगिक क्रियाओं का प्रदर्शन भेड़ाघाट के कामदा की मूर्ति में किया गया है। ":कामदा" की पीठिका पर योनिपूजा का दृश्य (चित्र-46) अंकित है। इस देवी के वारे में कालिकापुराण में भी उल्लेख प्राप्त होता है। सम्भवतः यह चक्र उपासना के अन्तर्गत कामकला द्वारा चरमसुख प्रदान करने वाली देवी है। भेड़ाघाट से ही प्राप्त "विभत्सा" की मूर्ति में पीठिका पर एक नर कंकाल को तने हुए लिंग के साथ प्रदर्शित किया गया है। यह देवी चक्र उपासना (चित्र-7)के अन्तर्गत होने वाली मैथुन क्रिया को प्रदर्शित करती है। योगिनी कौल उपासना से प्राप्त होने वाली जादुई शक्ति का भी प्रदर्शन किया गया है। (भेड़ाघाट (चित्र-8) की "इन्द्रजाली" उपासकों को जादुई शक्ति प्रदान करने वाली देवी है। इसका गुण नाम से ही स्पष्ट होता है। लोखरी की एक योगिनी शवसाधना को प्रदर्शित करती है। इस प्रकार अनेक योगिनी मूर्तियां अपने विभिन्न स्वरूपों द्वारा योगिनी कौल उपासना के विभिन्न क्रियाओं को प्रदर्शित करती हैं। इन योगिनी मूर्तियों से योगिनी कौल उपासना पर भी प्रकाश पड़ता है तथा ग्रन्थों में उल्लिखित विभिन्न क्रियाओं की भी पुष्टि होती है।

गुप्त उपासना के इस प्रकृति के कारण ही योगिनी मन्दिरों के निर्माण-स्थलों का चयन एकांत में जंगलों या पहाड़ियों पर किया गया है। मानव के कटे हुए सिर, रक्त से भरे हुए पात्र एवं मैथुन

---

1. श्याम बिहारी मिश्र, उड़ीसा तन्त्र वाराणसी

क्रिया में बस्ती के समीप कठिनाइयों तथा स्थानीय विरोध का सामना करना पड़ता था। इस उपासना में मैथुन क्रिया के कारण गोपनीयता आवश्यक थी "कौलावलिनिर्णय" में कहा गया है कि मैथुन से ही उपासक सिद्ध हो सकता है।[1] सम्भवतः इसीलिए इस कौल से सम्बन्धित योगिनी मन्दिरों का निर्माण प्रकृति के समीप किया जाता था।

उड़ीसा के भौम एवं सोमवंशी तथा मध्य भारत के चन्देल एवं कल्चुरि राजाओं ने कौल कापालिक अभ्यास से सम्बन्धित योगिनी कौल की प्रतिष्ठा में चौंसठ योगिनी मन्दिरों का निर्माण करवाया था। इन मन्दिरों के अवशेष 9वीं-13वीं शदी के मध्य निर्मित प्राप्त होते हैं। योगिनी मंदिरों में योगिनियों की 64 संख्या यहां पर चौंसठ भैरव, चौंसठ कलाओं एवं 64 रतिबंध (लैंगिक सुख) से सम्बन्धित हैं।[2]

रात्रि एवं दिन के समय को तीस मुहूर्तों में विभक्त किया गया है, जिनमें पन्द्रह दिन एवं पन्द्रह रात्रि हेतु होते हैं। दिन का अधिष्ठाता रुद्र और रात्रि की अधिष्ठात्री कालरात्रि देवी हैं। प्रत्येक मुहूर्त दो योगिनियों द्वारा संचालित होता है, इस प्रकार रात्रि एवं दिन हेतु 60 योगिनियां होती हैं। ऊषा एवं सन्ध्या प्रत्येक की चार योगिनियाँ होती हैं, अतः हम योगिनियों की सख्या चौंसठ पाते हैं।[3]

चौंसठ भैरव

योगिनियों से सम्बन्धित "शिव कौल" भारत के विभिन्न भागों में काफी प्रचलित हुआ, जिसका उल्लेख पौराणिक गाथाओं में प्राप्त होता है। शिव कौल के दो स्वरूप हैं, जिसमें प्रथम "सौम्य" और द्वितीय "उग्र" हैं। शिव का उल्लेख विभिन्न प्रकार के उग्र स्वरूपों, यथा भैरव, अघोड़, वीरभद्र एवं विरुपाख्या आदि में प्राप्त होता है। आगम ग्रंथों के अनुसार भैरव की संख्या चौंसठ है।[4] यह चौंसठ संख्या आठ भागों में विभक्त है तथा ये चौंसठ योगिनियों की प्रतिमूर्ति हैं।

दैवी भैरव की उत्पत्ति के सन्दर्भ में "वामन पुराण" की एक कथा का उल्लेख आवश्यक है। प्राचीन काल में एक बार महादेव एवं अन्धकासुर के बीच घनघोर युद्ध हुआ। अन्धक ने अपने गदे से शिव के मस्तक पर प्रहार किया, जिससे सिर से रक्त की धारा चारों दिशाओं में फूट पड़ी। इस बाहर आये हुए रक्त से भैरव उत्पन्न हुए। पूर्व दिशा में बहे रक्त से जो भैरव उत्पन्न हुए उन्हें विदुराज(अग्नि

---

1. **कौलावलि निर्णय**, भाग 2, पृ० 101-105
2. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 4
3. रामचन्द्र कौलाचार, अनु० एलिस बोर्नर व सदाशिव रथ शर्मा, **"शिल्प प्रकाश"** पृ० 133
4. नरेन्द्रनाथ भट्टाचार्य, **हिस्ट्री आफ दी शाक्त रीलिजन्स**, पृ० 104-105

शिखा के समान आभूषण से सुसज्जित) कहा गया। दक्षिण दिशा में बहे हुए रक्त से उत्पन्न भैरव रामराज (प्रेतों के साथ श्याम वर्ण के) तथा पश्चिम दिशा के रक्त से उत्पन्न भैरव नागराज (पत्तियों से आच्छादित, अत्सि कुसुम रंग के) कहलाए। उत्तर दिशा में बहे रक्त से उत्पन्न भैरव श्याम वर्ण के त्रिशूलधारी स्वच्छन्दराज और सम्पूर्ण बहे हुए रक्त से उत्पन्न भैरव लम्बितराज कहे गये।[1]

शरद ऋतु की देवी उपासना में भैरव के आठ स्वरूपों की उपासना की जाती है। ये महाभैरव, संहार भैरव, असितांग भैरव, रुरु भैरव, काल भैरव, क्रोध भैरव, कपाल भैरव, एवं रुद्र भैरव हैं। तंत्रसार के अनुसार असिताँग, रुरु, चण्ड, क्रोध उन्मक्त, कपाली, भीषण एवं संहार ये आठ भैरव हैं। भैरव का उल्लेख महाविद्याओं के साथ भी मिलता है।[2] इन आठ भैरव असिताँग, रुरु, चण्ड, क्रोध, उन्मक्त, कपाल, भीषण एवं संहार की समयानुसार गुणात्मक वृद्धि होती रही एवं इनकी संख्या बढ़कर चौंसठ हो गई।[3] इन आठों भैरवों का संक्षिप्त उल्लेख इस प्रकार है।

(1) असितांग

ये सुनहले वर्ण के होते हैं तथा इनके हाथों में त्रिशूल, खड्ग, पाश एवं डमरू होता है। इनका वर्गीकरण निम्नलिखित है—

असितांग, विशालाक्ष, मार्तण्ड, मोदक प्रिय, स्वच्छन्न, विघ्नसंतुष्ट, खेचर एवं सचराचर।

(2) रुरु

ये श्वेत वर्ण के होते हैं तथा हाथों में माला, बैल हांकने की छड़ी, वीणा और पुस्तक धारण करते हैं। इनका वर्गीकरण निम्नलिखित है—

रुरु, क्रोधदंष्ट्र, जटाधर, विश्वरूप, नानारूपधर, वीरुपाक्ष, महाकाया, वज्रहस्त।

(3) चण्ड

ये नील वर्ण के होते हैं तथा इनके हाथों में अग्नि, भाला, गदा एवं कुण्ड होता है। इनका वर्गीकरण निम्नांकित है—

चण्ड, प्रलयांतक, भूमि कम्प, नीलकण्ठ, विष्णु, कुलपालक, मुण्डपाल, कामपाल।

(4) क्रोध

ये राख सदृश वर्ण के होते हैं तथा इनके हाथों में खड्ग, ढाल और कुल्हाड़ी होती है। क्रोध, पिंगलक्षण, अभ्ररूप, धरापाल, कुटिल, मंत्रनायक, रुद्र, पितामह, इनके वर्गीकरण हैं।

---

1. नरेन्द्रनाथ वसु, (सम्पादित), "**विश्वकोश**" (बंगला), भाग 13, पृ० 548
2. तथैव, भाग 13, पृ० 549
3. आर० एस० गुप्त, **आइक्नोग्राफी आफ दी हिन्दूज, बुद्धिस्ट एण्ड जैनाज**, बम्बई, 1974, पृ० 76

(5) उन्मक्त

ये श्वेत वर्ण के होते हैं तथा हाथों मे कुन्त, ढाल, परिध व भिन्दिपाल धारण करते हैं। उन्मक्त, बटुक नायक, शंकर, भूत, वेताल, वरद, पर्वत वसु, त्रिनेत्र, त्रिपुरांतक, इनके प्रमुख भेद हैं।

(6) कपाल

ये सुनहले पीत वर्ण के होते हैं तथा इनके हाथों में कुन्त, ढाल, परिधि एवं भिन्दिपाल होता है। इनका वर्गीकरण इस प्रकार है—

कपाल, शशिभूषण, हस्ति चर्माबर धर, योगीश, ब्रह्म राक्षस, सर्वज्ञ, सर्वदेवेश एवं सर्वभूत-हृदिस्थित।

(7) भीषण

ये लाल वर्ण के होते हैं तथा हाथों में कपाल, भैरव के समान वस्तुएं होती हैं। भीषण, भयहर, सर्वज्ञ, कालाग्नि, महारौद्र, दक्षिणा, मुखरा एवं अस्थिर, इनके मुख्य वर्गीकरण माने जाते हैं।

(8) संहार

ये विद्युत सदृश वर्ण के समान हाथों में कपाल भैरव के समान वस्तु धारण करते हैं। इनका वर्गीकरण इस प्रकार किया जाता है—संहार, अतिरिक्तांग, कालाग्नि, प्रियंकार, घोरनाद, विशालाक्ष, योगीश व दक्षसंस्थित।

उपर्युक्त भैरव के आठ स्वरूपों के विभिन्न बर्गीकरण से चौंसठ संख्या को प्रदर्शित किया गया है।

कात्यायनी

कात्यायनी शक्ति की एक स्वरूप है तथा इसका सम्बन्ध योगिनियों से भी होता है। इस कौल की उत्पत्ति भी यौगिनी कौल की तरह अलौकिक है। कात्यायनी एवं योगिनियाँ शक्ति की सहायिका स्वरूप होती है। ऐसा कहा गया है कि इनकी उत्पात्त भयानक राक्षस की हत्या के लिए हुई थी। उड़िया भाषा में लिखित कालिकापुराण के अनुसार देवी दुर्गा ने 64 योगिनियों एवं नव दुर्गा (भयानक स्वरूप की) को राक्षस का वध करने के लिए उत्पन्न किया था।[1]

देवी कात्यायनी का सर्वप्रथम उल्लेख तैत्तिरीय आरण्यक में किया गया है। वैदिक काल के उत्तरार्द्ध में कात्यायनी देवी काफी प्रसिद्ध हुयी एवं उनमें से कुछ ने बौद्ध एवं जैन धर्मों के देवकुल में

---

1. कालिकापुराण (उड़िया); एच० सी० दास तांत्रिसिज्म, दिल्ली; 1981, पृ० 29

भी स्थान प्राप्त कर लिया ।[1] मार्कण्डेयपुराण में देवी कौशिकी की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है । यह कौशिकी कात्यायनी के रूप में भी प्रचलित रही हैं । कालिकापुराण[2] में राम-रावण के युद्ध में कात्यायनी का उल्लेख किया गया है एवं कहा गया है कि कात्यायन मुनि ने उस शक्ति को जागृत किया जो देवताओं के क्रोध से महादेवी के रूप में उत्पन्न हुयी थी । जागृत होने के बाद वे कात्यायनी कहलायीं । रुद्रयामल में दुर्गा की उपासना अन्य देवियों के साथ वर्णित है, जिनमें कात्यायनी भी सम्मिलित है ।[3] स्कन्दपुराण में उल्लेख है कि विन्ध्य पर्वत की निवासी देवी ने महिषासुर का वध किया था । वह ईश्वर की शक्ति से उत्पन्न हुयी देवी कात्यायनी थी जिसकी बारह भुजायें एवं ईश्वर प्रदक्त आयुध हैं ।[4] मत्स्यपुराण में देवों एवं ऋषियों द्वारा की गई देवी कात्यायनी की उपासना के उल्लेख हैं ।[5] इसी प्रकार अन्य पुराणों में भी कात्यायनी के उल्लेख मिलते हैं तथा उनकी उपासना के भी विवरण उपलब्ध हैं ।

पुराणों के साथ ही कात्यायनी के सन्दर्भ में अभिलेखों में भी उल्लेख प्राप्त होते हैं। मौखरि वंश के प्रमुख अनन्तवर्मन के नागार्जुन पहाड़ी के अभिलेख में देवी पार्वती को कात्यायनी के नाम से मन्दिर में प्रतिष्ठापित करने एवम् उसके देखभाल हेतु एक गांव दान में देने का उल्लेख है ।[6] नीमच रेलवे स्टेशन के पास एक मन्दिर के अभिलेख में देवी कात्यायनी मन्दिर के निर्माण का उल्लेख किया गया है जिसका काल 491 ई० है ।[7]

उड़िया ग्रन्थ "बटावकाश"[8] (16वीं शदी) में कहा गया है कि भगवान् जगन्नाथ के चारों ओर चौंसठ योगिनियाँ, कात्यायनी, सप्त मातृकाएं, विरजा, विमला एवं बहत्तर स्थानीय देवियाँ होती थीं जो निम्नलिखित हैं—

शाकम्भरी, कांतानि, दुर्गेश्वरी, काली, रणचण्डी, कोटेश्वरी, भगवती, वाशेलि, हादिमाक्षी, कोटमां चण्डी, ब्रह्मायणी, इन्द्राक्षी, सावित्री, सरलाचण्डी, जेयूनेही, अपराजिता, रुपाइ, चम्पायी, पिंगला, सारकमा, मारकमा, भगवती, हेन्गुला, कलापाती, काली-काक्षी, कालरात्री, कालिका, पातेलि, माधविश्वरी, कला सुणि, कासिका, छाया, माया, विजया, चण्ड घण्ड, कारेणि, कालघण्ट, कालमुखि, खाखयि, एक्यमहि, शोसिनि, पिशाचयी, त्रुटिखयी, हेमा, शान्ति- सर्पमुखि, जागुलयी, हादबायी,

---

1. एन० एन० भट्टाचार्य, **हिस्ट्री आफ दि शाक्त रिलोजन**, पृ० 30-42
2. **कालिकापुराण**, बंगवासी प्रति, सम्पादित (पंचानन तारक रत्न,) कलकत्ता
3. एन० एन० भट्टाचार्य, तथैव, पृ० 134
4. **स्कन्दपुराण**, गुरुमण्डल सीरीज, भाग 5, 1962, पृ० 6, 115, 116
5. पुष्पेन्द्र कुमार, **शक्ति कल्ट इन ऐंश्येण्ट इण्डिया** पृ० 254
6. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 34
7. एन० एन० भट्टाचार्य, **हिस्ट्री आफ दि शाक्त रीलिजन** पृ० 81
8. बलरामदास, **बटावकाश** (उड़िया), कटक, 1930, पृ० 20-21

सामलायी, सोमसनि, स्थिति, अबला, महासर्वणि, तरसुनि, बिम्चबासिन, मंगला, सारंगयी, न
संचोयि, बिम्चोयी, ओलमायि, पोलमायि, करुणायि, वरुणायि, रत्नकान्ति, रत्मनाला, च
जितायि, विरोजायि, केतुकायि, रावणायि, महमायि, वीरसोहन्ता, कालतुण्डि, दोकुणि,
ऐलासुणि, तारेणि, जारेणि, मारेणि, सपनचेति, नारायणि, कंकेश्वरि।

योगिनी कात्यायनी सम्बन्धों के उदाहरण हीरापुर के चौंसठ योगिनी मन्दिर में देखे ज
हैं, जिनका वर्णन एक अन्य अध्याय में किया गया है। अभी तक यह ज्ञात नहीं हो सका है
योगिनी मन्दिर कात्यायनी से क्यों नहीं सम्बन्धित हैं। सम्भवतः जब योगिनी मन्दिरों का
आरम्भ हुआ उस समय देवी कात्यायनी का प्रभाव उच्च शिखर पर पहुंच चुका था। हीर
योगिनी मन्दिर में बाह्य दीवाल में कात्यायनी की नौ मूर्तियाँ लगी हैं जो साधारणतः योगि
सम्बन्धित है। कात्यायनी मूर्त्तियों का यहाँ अंकन स्थानीय प्रभावों के कारण हुआ प्रतीत
(चित्र-9)।

चौंसठ कलायें :

चौंसठ के समूहों के सन्दर्भ में शक्ति की सहचरी देवियों को अलंकरण, आयुध, वा
गोत्र के साथ चित्रित किया गया है तथा इन चौंसठ देवियों को चौंसठ कलाओं का विभिन्न स्व
गया है। ये चौंसठ कलाएं निम्नलिखित हैं—

1. पिंगलाक्षी
2. विशालाक्षी
3. स्मृद्धि
4. वृद्धि
5. श्रद्धा
6. स्वाहा
7. स्वधा
8. माया
9. संज्ञा
10. वसुन्धरा
11. त्रैलोकधात्री
12. सावित्री
13. गायत्री
14. त्रिदशेश्वरी
15. सुरूपा
16. बहुरूपा
17. स्कन्दमाता
18. अच्युतप्रिया
19. विमला
20. अमला
21. अरुणी
22. प्रकृति
23. विकृति
24. सृष्टि

25. संहृति
26. सन्ध्या
27. माता
28. सती
29. हंसी
30. मर्दिका
31. वज्रिका
32. परा
33. देवमाता
34. भगवती
35. देवकी
36. कमलासना
37. त्रिमुखी
38. सप्तमुखी
39. सुरसुराविमर्दिनी
40. लम्बोष्ठी
41. उर्धकेशी
42. बहुशीर्षा
43. विक्रोदरी
44. रथरेखाह्वया
45. शशिरेका
46. गगनवेगा
47. पवनवेगा
48. भुवनपाला
49. मदनातुरा
50. अनंगा
51. अनंगमथना
52. अनंगमेखला
53. अनंग कुसुमा
54. विश्वरूपा
55. सुरादिका
56. क्षयंकारी
57. अक्षोभ्या
58. सत्यवादिनी
59. बहुरूपा
60. सुचिव्रता
61. उदरा
62. वागिशी
63. मृगाक्षी
64. स्थिति।

ये सभी शक्ति स्वरूप में हैं तथा इनका चेहरा प्रकाशयुक्त (चमकीला) है। इनकी जिह्वा लपलपाती हुई तथा लम्बी है और उनके चेहरे से आग की लपटें उठ रही हैं। आंखें क्रोध से लाल हैं तथा ऐसा प्रतीत हो रहा है कि वे सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को भस्म कर देंगी। उनके दाँतों से कटकटहट की ध्वनि निकल रही है। दूसरे रूप में वे आनन्द देने की कलाओं में भी दक्ष हैं। सभी नवयौवना तथा सुन्दर हैं तथा ये 8 शक्तियों के साथ विभिन्न आयुधों से युक्त एवं विभिन्न मुद्राओं में स्थित हैं। उनके ऊपर जब प्रकाश पड़ता है तो ये चारों ओर से जगमगाती हुई प्रतीत होती हैं।[1]

---

1. श्री मद्देवीभागवतम्, अनुवादक, स्वामी विज्ञानानन्द, इलाहाबाद, 1977 अ० 11, पृ० 1179-81

यक्षिणी :

कौल ग्रन्थों में यक्षिणियों एवं योगिनियों में आपसी साम्यता प्रदर्शित किया गया है। कहा गया है कि दोनों ही उत्पादकता एवं वृक्षों से सम्बन्धित हैं। कुलार्णव तंत्र में कुल वृक्षों का वर्णन किया गया है तथा कहा गया है कि इनमें योगिनियाँ निवास करती हैं।[1] आनन्द कुमार स्वामी[2] का यह मत है कि यक्षिणियाँ ही मूलतः योगिनी थीं। तंत्रों में यक्षिणियों एवं योगिनियों के उपासना विधानों का विभिन्न स्थानों पर वर्णन आपस में काफी सामंजस्यता रखता है।

हिन्दू तंत्र जिसमें पद्मावती का वर्णन किया गया है उसमें कहा गया है कि इनके उपासना से जादुई शक्ति प्राप्त होती है। पद्मावती यक्षिणी से योगिनियों की तरह आठ सिद्धियाँ प्राप्त होने का उल्लेख किया गया है।[3] इस संदर्भ में एक पाण्डुलिपि[4] में यक्षिणियों के क्रम एवं उनको जागृत करने के विधान का उल्लेख किया गया है। यक्षिणियों का वर्णन शृंखलाबद्ध देवियों के रूप में नहीं किया गया है। कहा गया है कि वे भक्तों को रसायन, दूर दृष्टि के साथ ही अन्य सिद्धियाँ प्रदान करती हैं।

इन साहित्यिक उल्लेखों के साथ ही योगिनी मन्दिरों से जैन धर्म से सम्बन्धित देवियाँ एवं यक्षिणियाँ योगिनियों के रूप में प्राप्त हुयी (चित्र 63) हैं। इससे यह प्रतीत होता है कि योगिनियों एवं यक्षिणियों में अवश्य कोई संबंध रहा। विशेष उल्लेखों के लिए मूर्तिकला संबंधी अध्याय को देखना होगा।

— · · —

1. एम० पी० पण्डित, **कुलार्णव तन्त्र**, अ० 11, श्लोक 66-68
2. आनन्द कुमार स्वामी, **यक्षाज्**, पृ० 91
3. एन० बी० झावेरी, **भैरव पद्मावती कल्प**, पृ० 334-35
4. पाण्डुलिपि, बम्बई विश्वविद्यालय, सं० 1897

4

योगिनी मन्दिर-स्थापत्य

1. उत्तर प्रदेश—वाराणसी, रिखियां, दुधई

2. मध्य प्रदेश—भेड़ाघाट, मितावली, बदोह एवं खजुराहो

3. उड़ीसा—हीरापुर एवं रानीपुर झरियल

मन्दिरों के स्थापत्य मानव संस्कृति के विभिन्न कालों के विकास को प्रदर्शित करते हैं। विश्व स्थापत्य के उदाहरणों में भारतीय स्थापत्य कला का महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारतीय स्थापत्य विभिन्न कालों में क्षेत्रीय विशेषताओं को समाहित करते हुए विकसित हुआ है। भारतीय स्थापत्य के उदाहरणों में योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य की अपनी एक विशिष्टता है। योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य का उल्लेख किसी भी शिल्प ग्रन्थों में नहीं मिलता। इन मन्दिरों के अवशेष पूर्व एवं मध्य भारत के विभिन्न क्षेत्रों में आज भी विद्यमान हैं। विद्वानों ने योगिनी मन्दिरों का निर्धारण नौवीं से बारहवीं शताब्दी के मध्य किया है। इन मन्दिरों के प्राप्त अवशेषों से यह ज्ञात होता है कि पूर्व एवं मध्य भारत में 9वीं-12वीं सदी के मध्य योगिनी कौल उपासना प्रचलित रही है।

योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य अवशेष चौकोर व वृत्ताकार भू-निवेश योजना के अन्तर्गत निर्मित प्राप्त हुए हैं। इन मन्दिरों की संरचनाओं पर विभिन्न विद्वानों ने अपने अलग-अलग मत प्रकट किए हैं। चार्ल्स फाब्री[1] ने कहा है कि इन मन्दिरों की संरचना हिन्दू मन्दिरों से भिन्न है। इस सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने आगे कहा है—

"इन मन्दिरों में विमान एवं शिखर का अभाव है, तथा इनमें मण्डप एवं गर्भगृह भी नहीं हैं। यहां किसी भी मूर्ति के ऊपर छत नहीं है। मन्दिरों के बाह्य दीवाल की तरह अन्य कोई उदाहरण नहीं मिलता। मन्दिरों में अलंकृत मूर्तियों का साम्य किसी भी हिन्दू या बौद्ध संरचना से नहीं मिलता। इनकी छतविहीन संरचना से न तो बौद्ध स्तूप का भास होता है, न ही हिन्दू मन्दिर का।"

---

1. चार्ल्स फाब्री, हिस्ट्री आफ आर्ट आफ उड़ीसा, पृ० 76-77

एच० सी० दास[1] चार्ल्स फाब्री के उपयुक्त विचारों से सहमत नहीं है। उनका कथन है कि "भारत का स्थापत्य अपने भीतर नानाप्रकार के तत्त्वों को समाहित करता हुआ विकसित हुआ है। क्षेत्रीय विशेषताओं ने मन्दिरों के स्थापत्य को प्रभावित करते हुए जटिल बना दिया है। विभिन्न कालों में विभिन्न शैली के मन्दिरों का निर्माण हुआ जिनमें योगिनी मन्दिर विशिष्ट शैली के हैं। इन पर तत्कालीन साहित्य एवं पुरातात्त्विक आधारों को दृष्टिगत रखते हुए विचार किया जा सकता है। योगिनी कौल शाक्त तांत्रिक मार्ग का एक अभिन्न अंग है एवं यह हिन्दू कौल से भिन्न नहीं है। योगिनी कौल का ब्राह्मण कौल की तरह साम्यता रखते हुए सदियों से विकास का इतिहास है, अतः योगिनी कौल शाक्त तांत्रिक मार्ग का प्रत्यावर्तित रूप है।"

प्राप्त योगिनी मन्दिरों की बाह्य दीवाल सादी हैं एवं वे छत विहीन हैं। ये मन्दिर आकाश की ओर पूर्णरूपेण खुले हुए हैं। यह कहा गया है कि योगिनियां आकाश में विहार करती हैं और नीचे आने पर चक्र का निर्माण करती हैं। इसीलिए योगिनी मन्दिरों के छत खुले हुए हैं।[2] इन मन्दिरों के भीतर आगन की ओर आले बने हुए हैं जिनमें योगिनी मूर्तियाँ स्थापित हैं। इन आलों को एक दूसरे के बगल में स्तम्भों या दीवाल द्वारा विभाजित किया गया है। इनके प्रवेश द्वार सादे बने हैं। अधिकांश मन्दिरों के मध्य में मण्डप निर्मित हैं जिनमें शिव या भैरव की मूर्तियां स्थापित हैं।

डा० लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी[3] योगिनी मन्दिर स्थापत्य के सन्दर्भ में कहते हैं "इसप्रकार के मन्दिरों की दो प्रमुख विशेषताएं हैं। प्रथम यह कि इनमें आले बरामदे की ओर चारों ओर निर्मित हैं तथा द्वितीय इनके द्वार भी बरामदे की ओर बने हैं। वे आगे कहते हैं कि यह परम्परा उस समय से चली आ रही है, जब मनुष्य सुरक्षा की दृष्टि से सुविधानुसार भवनों का निर्माण करता था। बौद्ध-मठों या विहारों में इसप्रकार की संरचनाओं के लक्षण स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। यह एक प्रश्न चिह्न है कि योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य में इनका कितना समावेश हुआ? उन्होंने पुनः कहा है कि मेरे विचार से इस प्रकार के मन्दिरों का निर्माण एक सीमित क्षेत्र में प्रचुर संख्या में आलों को व्यवस्थित करने हेतु किया जाता था। इन मन्दिरों का भाव जाने-अनजाने में प्राचीन भारतीय वेदिका से लिया गया प्रतीत होता है।"

योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य पर विचार करने के पश्चात् जे० एन० बनर्जी[4] ने अपने विचार इसप्रकार व्यक्त किए हैं "योगिनियों को उपासना मण्डल में होने का उल्लेख पुराणों में मिलता है। इस सन्दर्भ में मात्र पुराण एवं कुछ अन्य ग्रन्थ ही नहीं अपितु योगिनो मन्दिरों को प्राप्त चौकोर एवं

1. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 18
2. वी० डब्ल्यू० करम्बेलकर, **इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टली भाग 31, सं० 4, पृ० 373.**
3. लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी, जरनल आफ इण्डियन सोसायटी आफ ओरियन्टल आर्ट, जिल्द 6, पृ० 33-40
4. जे० एन० बनर्जी, **पुराणिक एण्ड तांत्रिक रिलीजन**, पृ० 129

वृत्ताकार संरचनाएं भी प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। इन मध्यकालीन मन्दिरों से मण्डल क्रम विधा के भाव स्पष्ट होते हैं, जिसका वाराहमिहिर ने आध्यात्मिक देवियों की उपासना हेतु उल्लेख किया है।" इस सम्बन्ध में मधु खन्ना[1] ने अपना मत व्यक्त करते हुए लिखा है, 'देवी मन्दिरों का स्थापत्य यन्त्र पर आधारित होता है, जिसका उल्लेख शिल्पशास्त्र में भी मिलता है। इनकी चौकोर संरचनाएं शक्ति के संरचनात्मक क्रियाशीलता तथा जीवन एवं प्रकृति पर अजेय शक्ति की प्रतीक हैं।" निक डुगलस[2] के विचार से "ये मन्दिर (शक्ति चक्र) जिसकी संरचना खुले छत की है, पूर्णरूप से खगोल विद्या से सम्बन्धित हैं। इन मन्दिरों के मध्य विश्वव्यापी भैरव चारों ओर योगिनियों से घिरे हुए हैं। शिव योगिनियों के मण्डल के मध्य बिन्दु के समान है।" एच० सी० दास[3] का कहना है, "यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य पर योगिनी कौल उपासना के मण्डल, यंत्र एवं चक्र का प्रभाव है।"

उपरोक्त विभिन्न विद्वानों के मतों पर विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि प्रामाणिक ग्रन्थों के अभाव में मात्र तर्कों के आधार पर ही इन विद्वानों ने अपने अनुमान लगाये हैं। यहां सर्वप्रथम हम प्राप्त योगिनी मूर्तियों पर विचार करें तो यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न मन्दिरों से प्राप्त योगिनी मूर्तियों का निर्माण योगिनी कौल उपासना के अनुरूप किया गया है। प्राप्त मूर्तियां योगिनी कौल उपासना के विभिन्न विधाओं को भी प्रदर्शित करती हैं। इन मूर्तियों पर बौद्ध तथा जैन धर्मों का प्रभाव भी हिन्दू धर्म के साथ ही स्पष्ट परिलक्षित होता है। इसी प्रकार योगिनी मन्दिरों का निर्माण भी योगिनी कौल उपासना के अनुरूप किया गया है, जिनके स्थापत्य में हिन्दू, बौद्ध एवं जैन कला के कुछ अंश यत्र-तत्र दृष्टिगत होते हैं। यहाँ योगिनी मन्दिरों के निर्माण के सन्दर्भ में एच० सी० दास का मत अधिक उपयुक्त प्रतीत होता हैं। जिस प्रकार विभिन्न कालों में क्षेत्रीय विशेषताओं को समाहित करता हुआ भारतीय स्थापत्य विकसित हुआ, उसी प्रकार विभिन्न क्षेत्रीय विशेषताओं को समाहित करता हुआ योगिनी मन्दिरों का स्थापत्य भी विकसित हुआ है। इन्हीं क्षेत्रीय विशेषताओं के प्रभाव में विभिन्न स्थानों पर चौकोर एवं वृत्ताकार योगिनी मन्दिरों के निर्माण हुए। भारत में प्राप्त सभी योगिनी मन्दिरों पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक संरचना की अपनी कुछ अलग विशेषता है। हीरापुर का योगिनी मन्दिर सभी मन्दिरों से भिन्न है। यहां मन्दिर के बाह्य दीवाल में भी मूर्तियां लगी हुई हैं। भेड़ाघाट मन्दिर में दो प्रवेश द्वार हैं एवं मध्य स्थान पर मण्डप न होकर गौरी-शंकर मन्दिर है। खजुराहो के चौकोर मन्दिर में प्रत्येक आले छोटे मन्दिर का स्वरूप प्रदर्शित करते हैं। ये द्रबिड़ शैली के मन्दिरों के समान हैं।[4] रिखियां में गुफा काटकर चौकोर कमरे का निर्माण किया गया है, जिसमें पत्थर के बड़े-बड़े शिलापट्टों पर चार की संख्या में योगिनियां उत्कीर्ण हैं। बदोह में दीवाल से सटकर पीठिका बनी है जिसपर मूर्तियां स्थापित थीं। वाराणसी के मन्दिर में बाह्य दीवाल में बरामदे की ओर चौकोर आले बने हुए हैं। इसी प्रकार प्रत्येक मन्दिर अपनी अलग विशिष्टता के साथ निर्मित

1. मधु खन्ना, यंत्र, "दि तांत्रिक सिम्बल आफ कास्मिक यूनिटी," पृ० 145
2. निक डुगलस, तन्त्रयोग, पृ० 25.
3. एच० सी० दास, तांत्रिसिज्म, पृ० 18.
4. स्टेला क्रैमरिश, दि हिन्दू टेम्पल, भाग 1, पृ० 200

हैं। इन मन्दिरों के स्थापत्य पर विभिन्न क्षेत्रीय विशेषताओं का व्यापक प्रभाव है। इन सम्पूर्ण तथ्यों पर विचार करने से स्पष्ट होता है कि इन मन्दिरों का निर्माण योगिनी कौल उपासना के अनुरूप मण्डल, यंत्र एवं चक्र के प्रभाव में हुआ है।

देवियों के मण्डल में विद्यमान होने से उनकी उपासना की जाती थी। सर्वप्रथम इस कौल उपासना में प्रस्तर पर चौकोर एवं वृत्ताकार मण्डल का निर्माण करके उपासना की जाती थी। इसी उपासना के क्रम में कालान्तर में सम्भवतः स्थापत्य का निर्माण आरम्भ हुआ। शक्ति से सम्बन्धित मन्दिरों में यंत्र के प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया जाता था। इस सम्बन्ध में यह कहा गया है कि यंत्र देवता का शरीर होता है।[1] इन्हीं आधारों पर योगिनी मन्दिरों में योगिनी यंत्र का उपयोग किया जाता था। और योगिनी मन्दिरों का स्वरूप चक्र की तरह है। और चक्र अनवरत गति का द्योतक है। इन मन्दिरों में चक्र शिव एवं शक्ति के रूप में तथा मण्डल असमाप्ति के सिद्धान्त के रूप में स्थित है।[2] शिव एवं शक्ति के प्रतीक स्वरूप ये मन्दिर भारतीय स्थापत्य कला के एक स्वरूप को प्रदर्शित करते हैं।[3] इन मन्दिरों को देखने से यह स्पष्ट होता है कि मध्य स्थान में बिन्दु के रूप में शिव अपने चारों ओर योगिनियों (शक्ति चक्र) से घिरे हुए हैं।

मण्डल :

विभिन्न स्थानों पर मण्डल शब्द का प्रयोग वृत के लिए किया गया है। तैत्तिरीय संहिता में वृताकार ईटों का उल्लेख किया गया है तथा ऋग्वेद से सूर्य मण्डल को चक्र कहा गया है।[4] अग्नि-पुराण में आठ मण्डलों का उल्लेख प्राप्त होता है, जिनमें सर्वतोभद्र मुख्य है।[5] प्रसिद्ध तांत्रिक ग्रन्थ "शारदा तिलक" में अनेक मण्डलों का वर्णन किया गया है।[6] ज्ञानार्णव तंत्र में मण्डल को चन्द्रमा का पर्यायवाची कहा गया है।[7] विभिन्न बौद्ध तंत्रों में अनेक मण्डलों के उल्लेख मिलते हैं। बंगाल के राजा रामपाल (1084-1130 ई०) के समकालीन अभयकर गुप्त की "निष्पन्नयोगावलि" में 26 मण्डलों का उल्लेख है जिसमें मध्य देवता एवं देवियाँ हैं :[8] हेवज्रतंत्र[9] में कहा गया है कि मण्डल के मध्य पांच

---

1. रामचन्द्र कौलाचार, **शिल्प प्रकाश**, (अनु०, एलिस बोर्नर एण्ड सदाशिव रथ शर्मा', पृ० 18.
2. एस० शंकर नारायन, **श्री चक्र**, पृ० 10-11
3. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 20
4. **तैत्तिरीयसंहिता**, श्लोक 3, 9, 12; **ऋग्वेद**, अ० 4, 28.2, अ० 5, 29.10
5. बलदेव उपाध्याय **अग्निपुराण**, अ० 320
6. **शारदा तिलक**, अ० 3, श्लोक, 113, 118, 133-134, 135-39
7. **ज्ञानार्णव तन्त्र**, अ० 24, 8-10, अ० 26, 15-17
8. एन० एल० डेविड, **दि कापालिक एण्ड काल मुखाज**, पृ० 22
9. डी० एल० स्नेयग्रोव, अनुवादक "**हेवज्रतन्त्र**", पृ० 74

योगिनियां होती हैं तथा वे पांच स्कन्धों को प्रदर्शित करती हैं। पूर्व दिशा में वज्र, पश्चिम दिशा में वज्रयोगिनी, उत्तर में वज्रडाकिनी तथा दक्षिण में गौरी स्थित हैं। मध्य स्थान में नैरात्म तथा बाह्य मण्डल में आठ योगिनियों का वर्णन किया गया है। ये देवियां काले रंग की भयानक चेहरे वाली होती हैं। इनकी आंखें ढंकी रहती हैं तथा इनके हाथों में विभिन्न आयुध होते हैं।

देवीपुराण में बारह मण्डलों का उल्लेख मिला है जिसमें विमला, विजया, रुद्रा, विमाना, शुभदा, शिवा तथा लटाक्ष मुख्य हैं। इसमें मण्डल के आकार, उसके निर्माण की विधि एवं प्रभाव का भी वर्णन किया गया है। ये मण्डल देवी-देवताओं के संग्राहक कहे जाते हैं। मण्डल की उपासना ही सभी देवों की उपासना होती है।[1]

मण्डल स्वरूपों के निर्माण में सर्वोच्च चेतन का प्रतिनिधित्व होता है। प्रतीकात्मक स्वरूप में यही मण्डल तांत्रिक उपासक अपनाते थे। योगिनी उपासना में मण्डल का प्रचलित महत्त्व रहा है। यह उपासना का आरम्भिक चरण है। बाद में ये वृत्ताकार एवं चौकोर रूप में कपड़े, जमीन तथा धातु पर बनाए जाने लगे, और मन्दिरों में प्रस्तर पर मण्डल बनाकर उनकी उपासना होने लगी। योगिनी कौल के स्थापत्य की उत्पत्ति इसी विन्यास से हुई है। कुलार्णव तंत्र के अनुसार बिना मण्डल के उपासना उद्देश्यहीन एवं फल रहित होती है।[2] आरम्भ में मण्डल की प्रतीकात्मक रेखाचित्र द्वारा उपासना होती थी और कालान्तर में इसी परम्परा के अन्तर्गत मन्दिरों का निर्माण हुआ।

यंत्र :

तांत्रिक उपासना की दूसरी महत्त्वपूर्ण वस्तु यंत्र है। यह ज्यामितीय चित्र होता है और इसका निर्माण विशेष देवता की उपासना हेतु धातु, प्रस्तर एवं कागज पर किया जाता था।[3] कुलार्णवतंत्र के अनुसार मंत्र से ही यंत्र की उत्पत्ति हुई है। मंत्र से ही देवता को पक्ष में किया जा सकता है। आगे इस ग्रन्थ में यह भी कहा गया है कि यंत्र, यम एवम् अन्य भयावह वस्तुओं से उपासक की रक्षा करता है।[4] यंत्र को देवता के शरीर की भी संज्ञा दी गई है। मन्दिरों के स्थापत्य में यंत्रों के उपयोग पर विशेष ध्यान दिया गया है। यंत्र का प्रयोग मन्दिरों के भू-निवेश योजना हेतु ही नहीं अपितु सम्पूर्ण संरचना हेतु भी किया जाता था।[5] इसके अतिरिक्त यंत्रों का उपयोग मन्दिरों के गर्भ गृह निर्माण के अलावा अन्य दृष्टिकोणों से भी किया जाता था। इनका प्रभाव मन्दिरों के बाह्य एवं भीतरी दीवाल पर बनी मूर्तियों पर भी होता है।[6]

---

1. नगेन्द्रनाथ वसु, संपादित, "**विश्वकोश**" भाग 13, पृ० 735; एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म** पृ० 18
2. उपेन्द्र कुमार दास, **भारतीय शक्ति साधना**, पृ० 824
3. पी० वी०, काणे **हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र**, जिल्द 5, भाग 2, पृ० 1135
4. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 19.
5. मधु खन्ना यंत्र, "**दि तांत्रिक सिम्बल आफ कास्मिक यूनिटी**, पृ० 144
6. उपर्युक्त, पृ० 144

योगिनी यंत्र :

उड़ीसा के एक (9वीं-12वीं सदी) पाण्डुलिपि "शिल्प प्रकाश"[1] में वामाचारी उपासना के तांत्रिक मन्दिरों एवम् उनके स्थापत्य पर प्रकाश डाला गया है। इसमें यह कहा गया है कि जमीन पर उचित स्थान पर एक बिन्दु होता है, जो ब्रह्माण्ड के केन्द्र बिन्दु का प्रतीक होता है। इस ग्रन्थ में योगिनी यंत्र का भी उल्लेख किया गया है। साठ मातृकाओं का यह योगिनी यंत्र बिन्दुओं से युक्त होता है। प्रत्येक विन्दु पर चार योगिनियां प्रतिष्ठापित होती हैं। कहा गया है कि यंत्र, न्यास एवम् उपासना राजा के साथ होनी चाहिए। यंत्र के प्रत्येक बिन्दु पर योगिनियों की उपासना की जाती है।

यह मन्दिरों के निर्माण के समय कर्मकाण्ड में शक्ति के प्रबलन पर आधारित होता है। मध्य रेखा पर तीन बिन्दु उत्तर से दक्षिण दिशा में तीन स्वरूपों को प्रदर्शित करते हैं। इसका माध्यम सत्व, रज एवं तम, गुण हैं। सृजन के पीछे क्रियात्मकता, प्रतिरोधी शक्तियों का सन्तुलन तीन रजों के त्रिकोण को प्रदर्शित करता है। देवी के गुणों के सात त्रिकोण होते हैं, जो सभी प्रकार के सृजन के आरम्भिक स्रोत हैं।

प्रत्येक त्रिकोण के बाह्य बिन्दु पर चौंसठ योगिनियों का समूह होता है। ये योगिनियाँ मुहूर्तों में विभक्त, रात्रि एवं दिन के तालबद्ध चक्र को प्रदर्शित करती हैं। तीस मुहूर्तों में पन्द्रह दिन के लिए एवं पन्द्रह रात्रि के लिए होते हैं। प्रत्येक मुहूर्त पर दो योगिनियां प्रतिष्ठापित होती हैं। इसके अतिरिक्त दो योगिनियां प्रातः एवं दो सायं हेतु भी होती हैं। यंत्र में स्थित समूह में असंख्य देवियाँ ब्रह्माण्ड का निर्माण करती हैं। प्रत्येक प्रमुख देवी का अपना समूह होता है जो साथ-साथ विचरण करता है। इनकी उपासना यंत्र के पीठ स्थान में होती है। सूर्य की तरह वे शक्ति समूह के दीप्त क्षेत्र को संचालित करती हैं तथा यंत्र के मध्य कमलदल एवं चौकोर पट्टी पर स्थित रहती हैं। ये सभी देवियां शिव से सम्बन्धित होती हैं।[2]

यंत्र उच्च आध्यात्मिक एवं रहस्यात्मक शक्तियों के प्रतीक होते हैं। ये मूल रूप से विभिन्न शक्ति केन्द्रों के मानचित्र के समान होते हैं। इनके द्वारा एक स्थान पर दैविक शक्ति को केन्द्रित किया जाता है। इनके निर्माण से ही तांत्रिक सिद्धांतों को दृश्य प्रतीकों के रूप में अभिव्यक्ति मिलती है।[3] शिल्प-शास्त्र[4] के अनुसार देवी मन्दिरों का यंत्र चौकोर होता है। यह शक्ति के संरचनात्मक क्रीड़ा का प्रतीक होता है तथा साथ ही यह जीवन तथा प्रकृति पर अजेय शक्ति का भी प्रतीक होता है (चित्र-10, 11)।

---

1. रामचन्द्र कौलाचार, **शिल्प प्रकाश**, अनु० एलिस बोर्नर एण्ड सदाशिव रथ शर्मा, श्लोक 61-85, 90-106
2. मधु खन्ना, **यंत्र**, पृ० 56-57
3. रवीन्द्रनाथ मिश्र, **तंत्र कला में प्रतीक"**, शोध-प्रबन्ध, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, 1980, पृ० 14-15, 25 व 192
4. मधु खन्ना, **यंत्र** पृ० 145

चक्र

चक्र का निर्माण विशेष देवता हेतु किया जाता है। यह अनवरत गति को प्रदर्शित करता है। योगिनी मन्दिरों के स्वरूप चक्र सदृश हैं। वृत्त या चक्र यहां सूर्य, खुले हुए नेत्र, राशि चक्र एवम् अनन्त काल को प्रदर्शित करते हैं।[1] एक वृत्त अपने आप में पूर्ण होता है तथा वह स्वयं का प्रतीक भी है। यह वाह्य वस्तुओं से भेद एवं प्रकृति के सम्बन्धों को प्रकट करता है।

विश्व में प्राचीन काल से ही पवित्र स्थानों को घेरने हेतु वृत्त का प्रयोग किया जाता रहा है। इससे वाह्य बाधाओं को रोकने में मदद मिलती थी। सम्भवतः इसीलिए अधिकांश योगिनी मन्दिरों को वृत्ताकार दीवाल से घेरा जाता था। अधिकांश योगिनी मन्दिरों से उनकी परम्परागत चौकोर एवं वृत्ताकार भू-निवेश योजना प्रमाणित होती है। चक्र शिव एवं शक्ति के रूप में तथा मण्डल असमाप्ति के सिद्धांत के रूप में होते हैं।[2] कमल प्रतीक के साथ सीधी रेखाएं त्रिकोण एवं चौकोर बनाई जाती हैं, जो चक्र के रूप में सौन्दर्य, एकरूपता एवं सुडौलपन को प्रदर्शित करती हैं। विष्णुपुराण में लिंग एवं योनि का वर्णन शैव प्रतीकों में उत्पादकता की शक्ति के रूप में किया गया है।[3] स्त्री-पुरुष के सिद्धांत ब्रह्माण्ड में एक साथ शिव-शक्ति के रूप में मिलते हैं। यह विचार प्रतीकात्मक रूप से लिंग एवं योनि के रूप में एक साथ प्रदर्शित किया गया है। शिव के चारों ओर बने शक्ति चक्र योगिनियों को प्रदर्शित करते हैं।

योगिनी चक्र

योगिनी चक्र[4] का निर्माण वास्तविक एवं प्रतीकात्मक स्वरूपों में होता है। वास्तविक योगिनी चक्र उपासना में पुरुष अपने स्त्री सहयोगी के साथ मध्य स्थान में होता है। उनके चारों ओर आठ योगिनियों का वृत्त होता है। योगिनी चक्र में एक पुरुष के साथ पन्द्रह स्त्रियां (योगिनियाँ) भाग लेती हैं। स्त्रियां काम, कला में निपुण होती हैं तथा चन्द्र रूप में कान्ति प्रतिपादित करने की क्षमता रखती हैं। योगिनी चक्र का प्रतीकात्मक रूप चन्द्रमा सम्बन्धी स्वरूपों का ध्यान है। प्रत्येक स्वरूप में काम सम्बन्धित देवियों के विशेष गुण एवं मुद्राएं हैं। इनमें पन्द्रह देवियां संस्कृत वर्णाक्षरों से सम्बन्धित हैं। प्रत्येक स्वर एवं ध्यान से शक्ति को क्रमबद्ध एवं रूपान्तरित किया जाता है। (चित्र-12)

संस्कृत स्वर

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, री,
लृ, लृी, अल, ओ, औ, अं, अदम।

---

1. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 19
2. एस० शंकर नारायन, **श्री चक्र**, पृ० 10-11
3. टी० ए० गोपीनाथ राव **एलीमेन्ट आफ हिन्दू आइक्नोग्राफी**, भाग 2, पृ० 54
4. निक डुगलस एवं पेनी स्लींगर, **सेक्सुअल सिक्रेट्स**, पृ० 137-39

ये एक श्वास में बोले जाने वाले प्रत्येक योगिनियों के स्वर हैं। योगिनियों के साथ मध्य स्थान पर महायोगी एवं महायोगिनी अनन्त मिलन की मुद्रा में होते हैं। विभिन्न ग्रन्थों में हमें विभिन्न प्रकार के योगिनी चक्रों के उल्लेख मिलते हैं। चित्र-13)

1-81 योगिनियों का चक्र

वाराह मिहिर के 'वृहद्संहिता' में कहा गया है कि, "ऐसा भी मन्दिर निर्मित हो सकता है जिसका भू-निवेश 81 वर्गों का हो। 99वीं शती के ग्रन्थ 'ईशान शिवगुरुदेव पद्धति' में कहा गया है कि 81 भागों के मण्डल की उपासना मात्र राजा ही कर सकता है।[1] इससे यह प्रतीत होता है कि 81 मण्डलों पर आधारित मन्दिरों का निर्माण राजाओं द्वारा ही करवाया जाता था।

मत्तोतरे तंत्र[2] में यह कहा गया है कि 81 योगिनियों के विधा को मूलचक्र कहते हैं। यह नौ मातृकाओं के विधानों पर आधारित होता है। यहाँ प्रत्येक मातृका को योगिनी कहा गया है तथा वे ऊन्य आठ योगिनियों में सम्मिलित होकर नौ योगिनियों के नौ समूहों का निर्माण करती हैं। इसके पश्चात् मूल चक्र में कुल योगिनियों की संख्या 81 हो जाती है। नौ योगिनियों के प्रत्येक समूह की अलग-अलग उपासना भी की जाती है।

81 योगिनियों के इस चक्र की उपासना के बाद योगिनियों द्वारा भक्तों को सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। इन सिद्धियों में युद्ध में विजय, साम्राज्य-सुरक्षा, राज्यसीमा विस्तार करने की क्षमता आदि प्रमुख हैं। संभवत: इन्हीं सिद्धियों से प्रेरित होकर राजा 81 योगिनियों के मण्डल की उपासना करते थे। प्रसिद्ध कल्चुरि नरेश युवराजदेव ने 81 योगिनियों के चक्र उपासना की परम्परा में भेड़ाघाट में योगिनी मन्दिर (वृत्ताकार) का निर्माण कराया। इस मन्दिर में 81 योगिनी मूर्तियों को स्थापित करने हेतु आले भी बने हैं। इस मन्दिर के निर्माण के बाद कल्चुरियों को परमारों से युद्ध में पराजित होना पड़ा था।

2. चौंसठ योगिनियों के चक्र

साधारणत: प्राप्त विभिन्न उपासना उल्लेखों एवं योगिनी मन्दिरों से यह प्रतीत होता है कि चौंसठ की संख्या में योगिनियों की उपासना आम प्रचलन में रही है। चौंसठ संख्या को हमारे देश में प्राचीन काल से ही शुभ एवं अतिविशिष्ट माना जाता है। तंत्रों एवं आगमों के परिपेक्ष में भी इस संख्या का अत्यन्त महत्त्व है। ऐसा कहा गया है कि तंत्रों एवं आगमों की संख्या चौंसठ है। तांत्रिक ग्रन्थों में प्राचीन आठ भैरवों की परम्परा बढ़कर चौंसठ हो गई इसी परम्परा में चौंसठ मंत्रों एवं चौंसठ पीठों का भी उल्लेख मिलता है।[3] उल्लेखों के अनुसार सिद्धियों की संख्या भी चौंसठ है सम्भवत: वर्णित चौंसठ योगिनियों के उपासना से ये सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

---

1. स्टेला क्रैमरिश, **दि हिन्दू टेम्पुल**, पृ० 46
2. जनार्दन पाण्डेय, सं०, **गोरक्ष संहिता**, अ० 76
3. पं० गोपीनाथ कविराज, **तांत्रिक साहित्य**, पृ० 19-23 (चौंसठ भैरव); पी० सी० बागची, **कौलज्ञाननिर्णय**, पटल. 8 (मंत्र); **कुलार्णवतन्त्र**, अ० 10 श्लोक 102-103 (चौंसठ पीठ)।

चौंसठ योगिनियों के चक्र का उल्लेख मत्तोतरे तंत्र[1] में भी प्राप्त होता है। इस संख्या को यहां आठ भागों में विभक्त किया गया है। इन भागों की अधिष्ठात्री देवियां डाकिनी, राकिनी, लाकिनी, काकिनी, शाकिनी, हाकिनी, याकिनी एवं कुसुमा उल्लिखत हैं। शेष योगिनियां इन्हीं देवियों द्वारा उत्पन्न मानी गई हैं। सम्बन्धित देवियों के सभी गुण इन योगिनियों में पाए जाते हैं। प्रत्येक समूह की योगिनी आठ दल वाले कमल पर विराजमान कही गई है। इन योगिनियों की विभिन्न दिशाएं एवं क्षेत्र होते हैं। इनका प्रत्येक समूह एक भैरव से सम्बन्धित होता है। इन योगिनियों का वर्णन नवयौवनाओं के रूप में किया गया है जो विभिन्न प्रकार के आयुध धारण की हैं।

चौंसठ योगिनियों की उपासना (बाह्य) एक बड़े चक्र में या आठ योगिनियों के आठ छोटे चक्रों में की जाती थी। मत्तोतरे तंत्र[2] में कहा गया है कि आन्तरिक भागों में भी ये योगिनियां स्थित होती हैं। कहा गया है कि इनके आठ पवित्र क्षेत्र होते हैं जिसमें सिर भाग पर डाकिनी, भौं पर राकिनी, नाक के ऊपर लाकिनी, हृदय पर काकिनी, नाभी पर शाकिनी, गुप्त स्थान पर हाकिनी, लिंग स्थान पर याकिनी एवं पैर पर कुसुमा स्थित होती हैं। शरीर के विभिन्न भागों में स्थित योगिनियों के इस स्थिति से किसी भी अन्य तंत्र योग की विधि में समानता नहीं है।

इसी चौंसठ योगिनियों के चक्र विधा पर अनेक साहित्यिक उल्लेख मिलते हैं। देश के विभिन्न भागों से प्राप्त अनेक योगिनी नामावलियों एवं योगिनी मन्दिरों में निर्मित आलों से यह स्पष्ट होता है कि चौंसठ की संख्या में योगिनियों के उपासना का आम प्रचलन था। प्राप्त आरम्भिक काल के साहित्यिक उल्लेख एवं योगिनी मन्दिर भी इस उपासना को चौंसठ की संख्या में आरम्भ होने की पुष्टि करते हैं। कालान्तर में स्थानीय परम्पराओं में कहीं-कहीं परिवर्तन के भी उल्लेख मिलते हैं। (चित्र-13)

3. बयालिस योगिनियों का चक्र

बयालिस संख्या प्राचीन भारतीय परम्परा में एक शुभ संख्या है किन्तु इसका प्रचलन 81 एवं 64 की अपेक्षा कम रहा है। साधारणत: तंत्रों की संख्या चौंसठ कहा गया है किन्तु कुछ सम्प्रदायों में उनकी संख्या बयालिस होने का उल्लेख मिलता है।[3]

संस्कृत अक्षरों के विशेष 42 अक्षरों के समायोजन को भूतलिपि कहा गया है।[4] इन्हें योगिनी चक्र का विशेष लक्षण भी कहा गया है। इसके साथ ही इन्हें सजीव अक्षर या अक्षरों से सम्बन्धित जीव

---

1. जनार्दन पाण्डेय, सं० **गोरक्षसंहिता**, अ० 20।
2. वही ,, ,,
3. गोपीनाथ कविराज, **तांत्रिक साहित्य**, 216; **सर्वोल्लास तन्त्र** एवं **तोदलोत्तर तन्त्र** में 42 तंत्रों की सूची मिलती है।
4. बृज वलल्भ द्विवेदी, **नित्य षोडशी कर्णव**, पृ० 68

की संज्ञा प्रदान की गई है। मत्तोतरे तंत्र में इस प्रकार संस्कृत अक्षरों को मातृकाओं से सम्बन्धित होने का उल्लेख मिलता है।[1] कहा गया है कि इनकी उपासना एक चक्र में की जाती है। इसमें मन्दिर या कपड़े पर इन अक्षरों की प्रतीकात्मक रचना करके उपासना की जाती है। ऐसा कहा गया है कि इस प्रकार के उपासना से सिद्धि प्राप्त होती है।

42 संस्कृत अक्षरों एवं उनसे निर्मित चक्र के परिकल्पना के आधार पर योगिनी मन्दिरों का भी निर्माण किया गया जो 42 योगिनियों के मण्डल को प्रदर्शित करते हैं। इन मन्दिरों के निर्माण के पीछे सिद्धि प्राप्त करना ही प्रमुख उद्देश्य प्रतीत होता है। इस प्रकार के योजना के अन्तर्गत निर्मित दो उदाहरण वृत्ताकार दुधई का मन्दिर एवं चौकोर बदोह का मन्दिर प्राप्त हुआ है। ये दोनों ही मन्दिर इस समय भग्नावस्था में हैं। किन्तु योजना देखने पर इनमें 42 योगिनी मूर्तियाँ स्थापित होने का प्रावधान स्पष्ट परिलक्षित होता है।

उपर्यूक्त विचारों को संभवतः योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य में समाहित किया गया है। संरचना के मध्य प्रमुख देवता के रूप में शिव तथा मण्डल में पार्वती को सहचरी योगिनियां होती हैं। उपर्युक्त तथ्यों पर विचार करने के बाद स्पष्टतः यह कहा जा सकता है कि योगिनी मन्दिर शिव एवं शक्ति के मूर्त प्रतीकात्मक स्वरूप हैं। तंत्र कला के इन उपलब्ध उदाहरणों से यह भी ज्ञात होता है कि इनमें ज्यामितीय आकारों एवं प्रतीकों का महत्त्व अधिक है।[2] प्राप्त योगिनी मन्दिरों से यह स्पष्ट होता है कि परम्परानुसार वृत्ताकार एवं चौकोर मन्दिरों का निर्माण किया जाता था। परन्तु, इस परम्परा में वृत्ताकार योजना का प्रचलन अधिक रहा है। आरम्भ में इस कौल की उपासना कागज, कपड़ा, पत्थर या धातु पर मण्डल, यंत्र एवं चक्र (वृत्ताकार एवं चौकोर) बनाकर की जाती थी।[3] बाद में इसी परम्परा में विकास के अन्तर्गत मन्दिरों का निर्माण आरम्भ हुआ। (चित्र-.0, 11, 12, 13)। यह उल्लेखनीय है कि उनके स्थापत्य-निर्माण राज्याश्रयों में हुए हैं। इस तथ्य के अनेक प्रमाण हैं कि राजाओं के विचारों के अनुरूप देवालयों के निर्माण हुए हैं। सम्भवतः योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य में भिन्नता के ये भी कारण रहे होंगे। इस उपासना में प्रयुक्त गोपनीय क्रियाओं के कारण ही इन मन्दिरों को भीतर की ओर खुला हुआ एवं बस्ती से दूर बनाया जाता था। इनके अभ्यासों में गोपनीयता पर विशेष ध्यान दिया जाता था। ब्रह्माण्डपुराण में इस बात का स्पष्ट उल्लेख किया गया है कि योगिनी कौल उपासना के गुप्त भेद खोलने वाले व्यक्ति को योगिनियों का कोपभाजन बनना पड़ता है।[4] इसकी पुष्टि कुछ अन्य ग्रन्थों से भी होती है। सम्भवतः इन्हीं कारणों से शदियों तक यह कौल रहस्यमय बना रहा।

---

1. जनार्दन पाण्डेय, सं० **गोरक्षसंहिता**, अ० 7
2. रवीन्द्र नाथ मिश्र, **"तंत्र कला में प्रतीक"**, शोध-प्रबन्ध, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, 1980, पृ० 194
3. विद्या दहेजिया, **आर्ट इन्टरनेशनल**, मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 8
4. अनन्तकृष्ण शास्त्री, सम्पादित; **ललिता सहस्र नाम**, अ० 3, श्लोक 83; (यह **ब्रह्माण्डपुराण** का एक भाग है)

भू-निवेश योजना :

(1) चौकोर मन्दिर :

इसप्रकार के मन्दिरों के अवशेष उत्तर प्रदेश में वाराणसी एवं रिखियां, मध्य प्रदेश में खजुराहो एवं बदोह नामक स्थानों से प्राप्त हुए हैं। ये मन्दिर चौकोर भू-निवेश योजना के अन्तर्गत निर्मित हैं। खजुराहो के अतिरिक्त अन्य सभी मन्दिर अपने मूल स्वरूप में नहीं है। खजुराहो योगिनी मन्दिर का भग्नावशेष ही मात्र मूल स्वरूप को प्रकट करता है। इन मन्दिरों का निर्माण सादे वाह्य दीवाल द्वारा घेरकर लिया गया है। इनमें योगिनी मूर्तियों की स्थापना हेतु आंगन की ओर बाह्य दीवाल में आलों या पीठिका का निर्माण किया गया है। बाह्य दीवाल में ये आले एवं पीठिका चारों ओर निर्मित हैं। इन मन्दिरों में मध्य स्थान पर मण्डप के अवशेष नहीं मिलते, परन्तु योगिनी कौल उपासना के विधान एवं वृत्ताकार मन्दिरों पर विचार करने के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि इन मन्दिरों के मध्य स्थान पर मण्डप अवश्य रहा होगा। चौकोर मन्दिरों की संरचनाओं से उनका मूल स्वरूप नहीं स्पष्ट होता, अतः मण्डप की सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता। वाराणसी के योगिनी मन्दिर में बाह्य दीवाल के एक आले में भैरव की प्रतिमा स्थापित है। यह मन्दिर का मूल स्थान नहीं हैं, मूर्तियां किसी अज्ञात स्थान से स्थानान्तरित हैं। सम्भवतः यह मूर्ति मूल मन्दिर में मध्य स्थान पर स्थापित रही होगी। आलों एवं पीठिका पर स्थापित मूर्तियों के मुख आंगन की ओर हैं। इन मन्दिरों की सम्पूर्ण संरचना सादी है। मन्दिर में प्रवेश के लिए केवल एक ही प्रवेश द्वार बना हुआ है। खजुराहो के मन्दिर में निर्मित आले छोटे मन्दिरों का स्वरूप प्रस्तुत करते हैं तथा ये द्रविड़ शैली के मन्दिरों के समान हैं।[1] खजुराहो का मन्दिर अन्य सभी चौकोर मन्दिरों से भिन्न प्रकार का है। वाराणसी का योगिनी मन्दिर यद्यपि अपने मूल स्थान पर नहीं है परन्तु इस समय यह एक चौकोर भू-निवेश योजना में निर्मित संरचना में वर्तमान है। इस मन्दिर में बाह्य दीवाल में भीतर की ओर समानान्तर पीठिका चारों ओर निर्मित हैं। इस पीठिका पर मूर्तियों को स्थापित करने हेतु चूल कटा हुआ है। रिखियां में पत्थर के बड़े-बड़े शिलापट्टों पर पांच की संख्या में योगिनियां उत्कीर्ण हैं। इसप्रकार इन प्राप्त मन्दिरों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि ये मन्दिर स्थानीय विशिष्टताओं एवं मान्यताओं से पूर्णरूपेण प्रभावित थे।

योगिनी मन्दिर की संरचनाओं के सन्दर्भ में खजुराहो के मन्दिर का उल्लेख करते हुए डॉ० लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी[2] ने लिखा है कि इसप्रकार के निर्माण बौद्ध मठों अथवा विहारों आवासीय व्यवस्था हेतु पहाड़ों को काटकर किया जाता था। उन्होंने यह भी कहा है कि सम्भवतः सीमित स्थान में प्रचुर संख्या में आलों को व्यवस्थित करने हेतु इस प्रकार की संरचना निर्मित की जाती थी। इस प्रकार के मन्दिर की योजना पर विचार करते हुए फरगुसन एवं बर्गिज ने इनके जैन संरचना के समान

1. स्टेला क्रैमरिश, दि हिन्दू टेम्पुल, भाग 1, पृ० 200
2. लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी, जर्नल आफ इण्डियन सोसाइटी आफ ओरियण्टल आर्ट जिल्द 6, पृ० 40

होने का उल्लेख किया है।[1] इसी प्रकार कुमारस्वामी ने भी योगिनी मन्दिर को गिरनार के जैन मन्दिर एवं मैसूर के सोमनाथ चालुक्य मन्दिर की संरचना के समान चौकोर कहा है।[2]

उपरोक्त विद्वानों द्वारा प्रकट किए गए मतों से यह स्पष्ट होता है कि योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य के विभिन्न भागों में विभिन्न बौद्ध, जैन एवं हिन्दू धर्म से सम्बन्धित स्थापत्य विशेषताओं का समावेश हुआ है। इन विशेषताओं के समावेश की पुष्टि योगिनी मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियां भी करती हैं, जिनमें हिन्दू, बौद्ध एवं जैन धर्मों से सम्बन्धित देवियां योगिनियों के रूप में प्रदर्शित हैं। विभिन्न विद्वानों ने इन मन्दिरों की समानता अन्य धर्मों के मन्दिरों से की है परन्तु जिन आधारों पर योगिनी मन्दिरों का निर्माण हुआ है उनका उन लोगों ने उल्लेख नहीं किया है। इस सन्दर्भ में योगिनी कौल उपासना में प्रयुक्त मण्डल, यन्त्र एवं चक्र पर विचार करना होगा। यहां पर हम जे० एन० बनर्जी के इस कथन का उल्लेख करेंगे, जहां पर उन्होंने कहा है कि योगिनी मन्दिरों की प्राप्त चौकोर एवं वृत्ताकार संरचनाएं मण्डल क्रम विधा के भावों को प्रस्तुत करती हैं।[3]

इस सम्बन्ध में मधु खन्ना का कथन है कि चौकोर संरचनाएं यंत्र पर आधारित हैं एवं ये शक्ति के संरचनात्मक क्रियाशीलता तथा जीवन एवं प्रकृति पर अजेय शक्ति को प्रतीक हैं।[4] विद्या दहेजिया के अनुसार आरम्भ में मण्डल, यन्त्र एवं चक्र का निर्माण वृत्ताकार एवं चौकोर कागज, कपड़ा, धातु एवं पत्थर के ऊपर करके योगिनी कौल की उपासना की जाती थी। बाद में इन्हीं आधारों पर योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य का निर्माण आरम्भ हुआ।[5]

इस सन्दर्भ में जे० एन० बनर्जी, मधु खन्ना, एवं विद्या दहेजिया के सन्दर्भ में विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि वृत्ताकार योगिनी मन्दिरों की तरह चौकोर योगिनी मन्दिरों का भी स्थापत्य मण्डल, यंत्र एवं चक्र पर आधारित हैं। चौकोर योगिनी मन्दिरों का निर्माण स्थानीय प्रभावों के समावेश से परम्परानुसार होता रहा है। वृत्ताकार भू-निवेश योजना की अपेक्षा चौकोर भू-निवेश योजना का प्रचलन कम रहा है।

2. वृत्ताकार मन्दिर :

इस प्रकार के वृत्ताकार भू-निवेश योजना के अन्तर्गत निर्मित योगिनी मन्दिर उत्तर प्रदेश में दुधई, मध्य प्रदेश में भेड़ाघाट एवं मितावली तथा उड़ीसा में हीरापुर एवं रानीपुर झरियल नामक

---

1. जेम्स फरगुसन, **हिस्ट्री आफ ईस्टर्न इण्डियन, आर्किटेक्चर** पृ० 51 और 110
2. आनन्दकुमार स्वामी, **हिस्ट्री आफ इण्डियन ईस्टर्न आर्किटेक्चर**, पृ० 110
3. जे० एन० बनर्जी, **पुराणिक एण्ड तांत्रिक रिलीजन**, पृ० 129
4. मधुखन्ना, **यंत्र**, पृ० 145
5. विद्या दहेजिया, **आर्ट इन्टरनेशनल**, मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 8

स्थानों पर स्थित हैं। वृत्ताकार भू-निवेश योजना के अन्तर्गत निर्मित कुल पांच मन्दिरों के अवशेष प्राप्त हुए हैं यद्यपि इन मन्दिरों की संरचनाओं के सन्दर्भ में प्रामाणिक ग्रन्थों का अभाव है। इन संरचनाओं के सभी पहलुओं पर विचार करने से एच० सी० दास के इस कथन की पुष्टि होती है कि इन मन्दिरों के स्थापत्य मण्डल, यन्त्र एवं चक्र पर आधारित है।[1] प्राप्त सभी मन्दिर वृत्ताकार बाह्य दीवाल को घेरकर खुले हुए छत के नीचे निर्मित हैं। इनमें बाह्य दीवाल में भीतर आंगन की ओर द्वार से युक्त आले निर्मित हैं। इन आलों को स्तम्भों के सहारे अगल-बगल निर्मित किया गया है। आलों का उपयोग योगिनी मूर्त्तियों को स्थापित करने हेतु किया गया है इन मन्दिरों में प्रवेश द्वार सादे बने हैं। तथा संरचनाओं की बाह्य दीवाल पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़ों को जोड़कर निर्मित की गई है। दुधई के योगिनी मन्दिर को छोड़कर अन्य सभी मन्दिरों में मध्य स्थान पर स्तम्भों पर आधारित मण्डप बने हुए हैं। मण्डप का उपयोग शिव मुर्ति स्थापित करने हेतु किया गया है। दुधई के मन्दिर में मण्डप का कोई भी अवशेष नहीं मिलता किन्तु अन्य मन्दिरों में निर्मित मण्डपों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि दुधई के मन्दिर में भी मण्डप रहा होगा। मन्दिर खण्डित अवस्था में प्राप्त हुआ है, अतः इस बात की सम्भावना प्रबल होती है कि यहां मण्डप खण्डित हो चुका है। भेड़ाघाट के मन्दिर में मण्डप के स्थान पर गौरी शंकर मन्दिर बना हुआ है। यह गौरी शंकर मन्दिर मण्डप को तोड़कर बनवाया गया प्रतीत होता है।[2] अन्य मन्दिरों के मण्डप ऊँची जगती पर स्तम्भों पर आधारित निर्मित हैं। अधिकांश मन्दिर जंगलों में पहाड़ियों पर बने हुए हैं, अतः इनके प्रवेशद्वार तक पहुंचने हेतु सोपान मार्ग या पगडण्डी बनी हुई है। मन्दिरों में अधिकांशतः एक प्रवेशद्वार है, पर कहीं-कहीं अन्य छोटे प्रवेशद्वार भी बने हुए हैं।

योगिनी मन्दिरों के वृत्ताकार स्वरूप भारतीय स्थापत्य कला के रूप में शिव एवं शक्ति के प्रतीकात्मक मूर्त स्वरूप हैं।[3] निक डुगलस ने कहा है कि ये शक्ति चक्र जिनकी संरचना खुले छत के साथ वृत्ताकार है, पूर्णरूपेण खगोल विद्या से सम्बन्धित है। इनमें मध्य स्थान पर विश्वव्यापी भैरव बिन्दु के समान है तथा चारों ओर योगिनियों (शक्ति मण्डल) से घिरे हुए हैं।[4] मण्डल में देवियों के विद्यमान होने के कारण उसकी उपासना की जाती है। इन्हीं मण्डल क्रम विधा के आधार पर योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य की भी उत्पत्ति हुई है। यंत्र के उपयोग के सम्बन्ध में कहा गया है कि "यंत्र देवता का शरीर होता है"।[5] अतः इनमें यंत्रों का भी उपयोग किया जाता है। मन्दिरों का अन्य आधार चक्र अनवरत गति का द्योतक हैं। सम्भवतः इसीलिए योगिनी मन्दिरों के स्वरूप चक्र की तरह हैं। विश्व में प्राचीन काल से ही पवित्र स्थानों को घेरने हेतु वृत्त का उपयोग होता रहा है। कहा गया है कि इससे बाह्य बाधाएं रोकी जाती हैं अतः सम्भवतः इन्हीं आधारों पर योगिनी मन्दिरों को वृत्ताकार दीवाल से

---

1. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 18
2. आर० डी० बनर्जी, **हैहयाज आफ त्रिपुरी एण्ड देअर मानुमेण्ट्स**, पृ० 67-78
3. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 20
4. निक डुगलस, **तन्त्रयोग** पृ० 25
5. रामचन्द्र कौलाचार, **"शिल्प प्रकाश"** अनुवादक एलिस बोर्नर तथा सदाशिव रथ शर्मा, पृ० 18.

घेरा जाता था। इसमें चक्र, शिव एवं शक्ति के स्वरूप में तथा मण्डल असमापित् के सिद्धांत के रूप में होता है।[1] मध्य स्थान में शिव अपने चारों ओर शक्ति चक्र से घिरे प्रतीत होते हैं।

ये मन्दिर पूर्णरूपेण योगिनी कौल उपासना के आधारों पर निर्मित हैं। योगिनी कौल उपासना सर्वप्रथम कागज, कपड़ा, धातु एवं प्रस्तर पर मण्डल, यंत्र एवं चक्र बनाकर की जाती थी। कालांतर में इन्हीं आधारों पर योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य का अभ्युदय हुआ। वृत्ताकार भू-निवेश योजना में निर्मित मन्दिरों का प्रचलन चौकोर भू-निवेश योजना से अधिक रहा है। इन संरचनाओं में आपस में भिन्नता भी है। हीरापुर के मन्दिर के बाह्य दीवाल में भी मूर्तियां स्थापित की गई हैं, जबकि अन्य मन्दिरों में ऐसा नहीं हुआ है। इनमें आलों की संख्या में भी विभिन्नता है। सम्भवतः ये विभिन्नताएं स्थानीय मान्यताओं के कारण हैं। यंत्र, मण्डल एवं चक्र पर आधारित इन मन्दिरों के स्थापत्य को विभिन्न क्षेत्रीय मान्यताओं ने प्रभावित किया है। ये विभिन्नताएं मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों में भी दृष्टिगत होती हैं। विभिन्न राजाओं से संरक्षण प्राप्त इन मन्दिरों में उनके विचारों का भी समाहित होना स्वाभाविक है। इन्हीं कारणों से मन्दिरों के स्थापत्य में आंशिक भिन्नताएं दृष्टिगत होती हैं। प्राप्त विभिन्न योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य विशेषताओं का वर्णन आगे विस्तारपूर्वक क्रमशः किया गया है।

योगिनी कौल उपासना पूर्णरूपेण गोपनीय अभ्यासों पर आधारित होती थी, जिससे विस्तृत विवरणों का अभाव है। उपासना के विभिन्न क्रियाओं पर आधारित योगिनी मन्दिरों का निर्माण बस्ती से दूर निर्जन स्थानों पर किया गया है। बस्ती के समीप इस उपासना की विभिन्न गोपनीय क्रियाओं का जन विरोध भी सम्भवतः इसका कारण रहा होगा। योगिनियों के सन्दर्भ में जनसाधारण में काफी भय का वातावरण था, अतः यह कौल कुछ ही लोगों में सीमित रहा। योगिनी मन्दिरों के निर्माण के समय सभी सम्भावनाओं पर विचार करते हुए इनके स्थान का चुनाव हुआ है। इनकी क्रियाओं के गोपनीयता के सन्दर्भ में ब्रह्माण्डपुराण के साथ ही कई अन्य ही ग्रन्थों में भी उल्लेख प्राप्त होते हैं। कहा गया है कि योगिनियों के गोपनीयता को भंग करने वाले को उनका कोपभाजन बनना पड़ता है।[2] इन्हीं कारणों से यह कौल सदियों तक गोपनीय बना रहा है।

उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश में अब तक चार योगिनी मन्दिरों के अवशेष प्राप्त हुए हैं, जो दुधई, लोखरी, रिखियां एवं वाराणसी में स्थित हैं। इस प्रदेश में दुधई, लोखरी एवं वाराणसी में योगिनी मन्दिरों के भग्नावशेष तथा मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। इनमें लोखरी एकमात्र ऐसा स्थान है जहां एक वृक्ष के नीचे

---

1. एस० शंकरनारायन, **श्री चक्र**, पृ० 10-11
2. अनन्तकष्ण शास्त्री, संपादित-**ललिता सहस्रनाम**, अ० 3, श्लोक 83; (यह **ब्रह्माण्ड पुराण** का एक भाग है)

चबूतरे पर योगिनी मूर्तियां रखी हुई हैं। दुधई का मन्दिर वृत्ताकार भू-निवेश योजना में निर्मित है। यहां के अन्य दो मन्दिर रिखियां एवं वाराणसी चौकोर भू-निवेश योजना में निर्मित हैं। मध्य प्रदेश की तरह उत्तर प्रदेश में भी चौकोर एवं वृत्ताकार योगिनी मन्दिरों के अवशेष मिले हैं। इन मन्दिरों की संरचनाएं पूर्णरूपेण सुरक्षित नहीं है। इनके अधिकांश भाग खण्डित हो चुके हैं। यहां वाराणसी, का मन्दिर अपने मूल स्थान पर नहीं है। भवन को देखने से प्रतीत होता है कि यह बाद के कालों में निर्मित हुआ है। रिखियां का मन्दिर पत्थर के टुकड़ों को जोड़कर चौकोर बनाया गया है। यहां योगिनियां शिलापट्ट पर चार की संख्या में उत्कीर्ण हैं। लोखरी से मात्र मूर्तियाँ ही प्राप्त हुई हैं। यहां से मन्दिर संरचना का कोई अवशेष नहीं मिलता। उत्तर प्रदेश के योगिनी मन्दिर मध्यकालीन भारतीय कला विशेषताओं के साथ निर्मित हैं। उत्तर प्रदेश में बांदा से दो योगिनी मन्दिरों के अवशेष मिले हैं, जिससे यह प्रमाणित होता है कि इस प्रदेश में योगिनी कौल उपासना सबसे प्रमुख केन्द्र बाँदा था। इस प्रदेश में योगिनी कौल उपासना 9वीं—11वीं सदी के मध्य प्रचलित होने के प्रमाण मिलते हैं। मध्य प्रदेश के समकालीन उत्तर प्रदेश में भी योगिनी मन्दिर निर्मित हुए हैं, जो निम्नलिखित हैं।

1. वाराणसी

वाराणसी में चौंसठ योगिनियों का वास माना जाता है। योगिनयों के वाराणसी क्षेत्र में आगमन के विषय में "स्कन्दपुराण" (काशी खण्ड) में उल्लेख है। यहाँ कहा गया है कि वाराणसी के राजा दिवोदास को मोहित करने हेतु भगवान् शिव ने योगिनियों को भेजा। ये योगिनियां योग एवं माया की शक्ति थीं। यह स्थान योगिनियों को पसन्द आ गया। योगिनियों ने अपनी माया शक्ति से विभिन्न स्वरूप धारण कर लिया तथा वे नर्तकी, साध्वी, मालिन, जादूगरनी आदि रूपों में रहने लगीं। शिव की इच्छा के विपरीत भी योगिनियां वाराणसी में रहने लगीं, और वे कभी वापस नहीं लौटीं"[1] शिव द्वारा वाराणसी भेजी गयी योगिनियाँ यहां की सभी मातृकाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं। ये सदा विशेष स्थानों से सम्बन्धित रही हैं, यथा पहाड़ी, चौराहा, ग्राम, नदी तथा गुफा। इनके पीठ भी विभिन्न स्थानों पर प्राप्त होते हैं। कहा गया है कि वाराणसी में योगिनियों के अनेक पीठ थे।[2]

1530 ई० में कुछ योगिनी मूर्तियाँ दुर्गाकुण्ड के समीप थीं, जिनका उल्लेख "त्रिस्थली सेतु" में किया गया है। 'त्रिस्थली सेतु" एवं "वीरमित्रोदय"[3] ग्रन्थों में योगिनी पूजन एवं उससे सम्बन्धित यात्रा का भी उल्लेख किया गया है। परन्तु इस स्थान पर अब न तो कोई योगिनी मूर्ति है, और न उपासना स्थल का ही कोई अवशेष। इस समय वाराणसी के बंगालीटोला स्थान की एक गली में चौसट्ठीघाट पर राणा महल (मकान नं० डी० 21/.2) में चौंसठ योगिनी मन्दिर स्थित है। स्थानीय नाम से इसे 'चौसट्ठी देवी' का मन्दिर कहते हैं। चौसट्ठी घाट पर स्थित यह मन्दिर पक्का बना हुआ है। इस मन्दिर का मूल स्थापत्य अन्य स्थान पर था, जिसका अवशेष प्राप्त नहीं हो सका है। इस

---

1. के० डी० वेदव्यास, सम्पादित, **स्कन्दपुराण**, (काशी खण्ड), अ० 45; साथ ही योगिनियों की सूची भी उल्लिखित है।
2. डायना एलेक, **वाराणसी सिटी आफ लाइट**, पृ० 157
3. काशी नारायण भट्ट (सं०) **त्रिस्थली सेतु** (काशी खण्ड); मित्र मिश्र, (सं०) **वीरामित्रोदय**।

वर्तमान मन्दिर के साथ बने घाट का निर्माण बंगाल के राजा दिक्पति द्वारा कराया गया था।[1] यह चौसट्ठी देवी का मन्दिर दो मंजिले भवन में भू-तल पर स्थित है। मन्दिर की सम्पूर्ण संरचना चौकोर भू-निवेश योजना पर आधारित है। मन्दिर में चारों ओर दीवाल में चौकोर आले बने हुए हैं, जिसमें मूर्तियाँ स्थापित हैं, (चित्र सं० 14, 15)। इनमें एक आले में सम्प्रति भैरव की मूर्ति स्थापित है, जो मूल मन्दिर में संभवतः मध्य मण्डप में रहा होगा। मन्दिर में पूर्व एवं पश्चिम की दीवालों की ओर दो बड़ी चौकोर संरचनाएं निर्मित हैं जिनमें काली एवं दुर्गा की मूर्तियाँ (चित्र-34) स्थापित हैं। मन्दिर का प्रवेश द्वार दक्षिण दिशा की ओर बना हुआ है। इस मन्दिर में शास्त्रानुसार योगिनियों की चौंसठ मूर्तियां होनी चाहिए, परन्तु इस समय मात्र तीन ही मूर्तियां अवशिष्ट हैं। इस मन्दिर की काली एवं दुर्गा की मूर्तियां ढंकी हुई हैं जिससे उनका प्रामाणिक अध्ययन संभव नहीं हैं (चित्र सं०-34)। मन्दिर की संरचना से ही स्पष्ट होता है कि यहां मूर्तियां अन्य स्थान से स्थानान्तरित हैं। वर्तमान मन्दिर की संरचना स्थानीय विशेषताओं के साथ हुई है। अतः इससे योगिनी मन्दिर संरचना का भास नहीं होता कुबेर नाथ सुकुल ने चार अन्य योगिनी मूर्तियों को भी वाराणसी में स्थित माना है।[2] ये मूर्तियां है—वाराही, मीरघाट, मयूरी, लक्ष्मीकुण्ड, शूकिका—ड्योढ़ियावीर तथा कामक्षा (कमच्छा)

योगिनियों के वाराणसी आगमन के उपलक्ष में चैत्र मास में यहाँ मेला लगता है। चैत्र कृष्ण-प्रतिपदा को इससे सम्बन्धित यात्रा का आयोजन अब भी किया जाता है। इनकी आराधना आश्विन नवरात्र में विशेष फलदायिनी कहा गया है। योगिनियों से सम्बन्धित मेले के अवसर पर मन्दिर में अनेक भक्तगण एकत्रित होते हैं। यहां देवी की उपासना के पश्चात् एक दूसरे पर रंगों एवं अबीर का प्रयोग करते हैं। इस अवसर पर नर-नारी दोनों सम्मिलित होते हैं। वाराणसी की यह परम्परा रही है कि होली के दिन सायंकाल रंगीले, रईस तथा वेश्याएं चौसट्ठी मन्दिर में उपासना करते एवं गुलाल खेलते रहे हैं।

2. रिखियां

यह स्थान बांदा जिले में मऊ तहसील से 13 मील दक्षिण-पूर्व की ओर स्थित है। यहां पर दो बड़ी गुफाएं हैं जिसे रिखियां नाम से सम्बोधित किया जाता है। पुरानी गुफा के सामने सम्भवतः पत्थर के टुकड़ों से दीवाल बनाकर कोठरी का स्वरूप प्रदान किया गया है।[3] इसमें छत को आधार प्रदान करने के लिए स्तम्भों का प्रयोग किया गया है। बड़ी गुफा लगभग 34½ फुट लम्बी, 17½ फुट चौड़ी और 6½ फुट ऊंची है। गुफा के भीतर पीछे की दीवाल के सामने योगिनी मूर्तियां रखी हुई हैं। इनमें अधिकतर योगिनी मूर्तियां पशु सदृश सिर युक्त हैं। ये मूर्तियां चौंसठ योगिनियों से सम्बन्धित हैं।[4]

---

1. डा० रामबचन सिंह, "**वाराणसी**", पृ० 46
2. कुबेरनाथ सुकुल, **वाराणसी वैभव**, पृ० 99
3. एकनिंघम, **आर्कियोलॉजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट**, भाग 21, पृ० 7
4. **वि मानुमेण्टल एन्टीक्विटीज**, पृ० 147

यहां पर दो प्रकार की योगिनी मूर्तियाँ हैं, जिनमें एक तरह की मूर्तियाँ वे हैं जो सम्भवतः समीप के लोखरी मन्दिर से स्थानान्तरित हैं।

इनके अतिरिक्त जो अन्य प्रकार की योगिनी मूर्तियाँ यहां से प्राप्त हुई हैं वे चौकोर शिलापट्ट पर चार-चार की संख्या में उत्कीर्ण हैं एक ही (चित्र-16)। शिलापट्ट पर चार की संख्या में बैठी हुई योगिनियों को प्रदर्शित किया गया है। बैठी हुई योगिनियों को वाहनों के पीठ पर बैठे हुए प्रदर्शित किया गया है। कुछ योगिनियाँ नृत्यरत भी हैं। इस प्रकार के कई शिलापट्ट हैं। जिनपर योगिनियाँ उत्कीर्ण हैं। योगिनियों से युक्त शिलापट्ट का निर्माण मूलतः रिखियां के योगिनी मन्दिर हेतु किया गया था। इस प्रकार के शिलापट्ट पर उत्कीर्ण योगिनी मूर्तियां भारत के अन्य स्थानों पर नहीं प्राप्त होती। ये बलुवे पत्थर से निर्मित हैं। इस स्थान पर चौंसठ योगिनी मंदिर की संरचना के रूप में चौकोर कोठरी एवं मूर्तियों के आलों के रूप में शिलापट्ट विद्यमान हैं। शिलापट्ट मन्दिर के चौकोर संरचना की ओर संकेत करते हैं। इस मन्दिर की मूर्ति शैली एवं संरचना (भग्न) से इसका निर्माण 10वीं सदी में हुआ प्रतीत होता है। प्राप्त अवशेषों से स्पष्ट होता है कि बांदा जिले के एक ही क्षेत्र में आस-पास दो योगिनी मन्दिरों का निर्माण हुआ था। ये मन्दिर समकालीन थे। इनके अवशेष आज भी विद्यमान हैं। यह उत्तर प्रदेश में योगिनी उपासना का सर्वप्रमुख केन्द्र रहा है। मध्य प्रदेश का शहडोल नामक स्थान इस केन्द्र से समानता रखता है, क्योंकि वहां भी दो योगिनी मन्दिरों के पुरातात्त्विक अवशेष प्राप्त हुए हैं। इस मन्दिर से प्राप्त मूर्तियों का विस्तृत विवरण मूर्तिकला से सम्बन्धित अध्याय में दिया गया है।

3. दुधई

"दुधई" उत्तर प्रदेश के ललितपुर जिले में पाली नामक स्थान के निकट स्थित है। समीप के पहाड़ी की चोटी पर जंगल के मध्य चौंसठ योगिनी मन्दिर की संरचना प्राप्त हुई है। स्थानीय निवासी इस स्थान को "बड़ी दुधई" नाम से जानते हैं। यहां स्थित योगिनी मन्दिर वृत्ताकार है (चित्र सं०-17) इसका निर्माण अन्य योगिनी मन्दिरों की तरह छोटे-छोटे पत्थर के टुकड़ों से किया गया है। इस समय मन्दिर अपनी जीर्णावस्था में है तथा इसका कुछ अंश (आधार) ही शेष बचा है (चित्र सं०-18)। मन्दिर में प्रवेश हेतु दक्षिण दिशा में सीढ़ियां बनी हुई हैं जिनमें अब कुछ ही अवशिष्ट हैं। मुख्य प्रवेश-द्वार पूर्व दिशा में है। मन्दिर की बाह्य दीवाल भी अन्य योगिनी मन्दिरों की तरह ही है।

मन्दिर में भीतर आंगन की ओर छोटे-छोटे आले बने हुए थे जिसमें योगिनियों की मूर्तियां स्थापित थीं। इन आलों के छत आंगन की ओर स्तम्भों के सहारे बने हुए हैं। आलों का प्रवेश द्वार आंगन की ओर है (चित्र सं०-19)। इस समय दक्षिण दिशा में चार एवम् उत्तर दिशा में मात्र बारह आले ही बचे हैं। पी०सी० मुखर्जी ने इस मन्दिर में चालीस आलों के निर्मित होने की सम्भावना व्यक्त की है।[1] बी०एल० धामा ने इस मन्दिर में कुल चौंसठ आलों के निर्मित होने की संभावना व्यक्त किया

---

1. पी० सी० मुखर्जी, **रिपोर्ट आन दि एन्टीक्विटीज आफ ललितपुर**, पृ० 12; आपने अपने रिपोर्ट में कुल 17 आलों के अवशिष्ट होने की बात कही है।

है।[1] किन्तु धामा महोदय के विचार पर सहमत होना कठिन है। यहां मन्दिर के योजना एवं आलों के आकार पर विचार करने पर स्पष्ट रूप से यह कहा जा सकता है कि इस मन्दिर में 42 आले निर्मित हुए थे। यहां हम पी०सी० मुखर्जी के विचारों को अधिक तर्कसंगत मानते हैं। संभवतः यह मन्दिर बदोह मन्दिर की तरह बयालिस योगिनियों के चक्र उपासना की विधा पर निर्मित किया गया है। इस विषय में यह भी कहा जा सकता है कि स्थानीय विभिन्न मान्यताओं एवं निर्माताओं के विचारों ने इसको निश्चित रूप से प्रभावित किया है।

दुधई मन्दिर में आलों के छज्जे भी साधारण प्रकार के बने हुए हैं। इन छज्जों के ऊपर पतली सीधी धारियां काटकर बनाई गई हैं। इसी प्रकार के छज्जे भेड़ाघाट के योगिनी मन्दिर में भी मिलते हैं। मन्दिर की ऊंचाई भूमि की सतह से 6 फुट 5 इंच है। मन्दिर में आंगन की ओर बने आले स्तम्भों को समाहित करते हुए निर्मित किए गए हैं। प्रत्येक स्तम्भ की लम्बाई 3 फुट 2 इंच है और इनकी बनावट भेड़ाघाट के योगिनी मन्दिर में प्रयुक्त स्तम्भों की तरह है। मन्दिर के आलों में स्थापित योगिनी मूर्तियां अब अपने स्थान पर नहीं हैं। मन्दिर के प्रवेशद्वार की चौड़ाई 4 फुट 1 इंच है। मन्दिर के प्रांगण में कुछ टूटे-फूटे स्तम्भ, छज्जे तथा अन्य भाग पड़े हुए हैं। इस मन्दिर के अवशेष समीपवर्ती जंगल में दूर तक बिखरे हुए हैं। इस मन्दिर को स्थानीय निवासी 'अखाड़ा' या "भीमसेन का अखाड़ा" नाम से जानते हैं। मन्दिर के प्रांगण के मध्य में किसी भी संरचना के होने का प्रमाण नहीं मिलता।[2] शास्त्रानुसार एवं परम्परागत दृष्टिकोण से विचार करने पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि मन्दिर के मध्य आंगन में अवश्य कोई संरचना रही होगी जिसमें शिव की मूर्ति स्थापित हुयी होगी।

किसी भी निश्चित प्रमाण के अभाव में इस मन्दिर के निर्माण काल के विषय में कुछ कह पाना सम्भव नहीं है। यशोबर्मन के पुत्र धंग के काल में (950 ई०-1008 ई०) चन्देल राज्य अपार शक्तिशाली था। धंग एक महान निर्माता था, अतः सम्भव है कि धंग ने ही दुधई के योगिनी मन्दिर का भी निर्माण करवाया हो।[3] इसप्रकार यह कहा जा सकता है कि यह मन्दिर 10वीं सदी के आरम्भिक काल में निर्मित हुआ होगा।

मध्य प्रदेश :

भारत में सर्वाधिक योगिनी मन्दिरों के अवशेष मध्य प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त होते हैं। प्राप्त अवशेषों से यह स्पष्ट होता है कि 9वीं-12वीं सदी के मध्य यहां चौंसठ योगिनियों की उपासना का विशेष प्रचलन था, जिसके फलस्वरूप इतनी बड़ी संख्या में योगिनी मन्दिरों के निर्माण हुए। योगिनी मन्दिरों का यह निर्माण मध्य प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में हुआ। यहां के मन्दिर भी वृत्ताकार एवं

---

1. बी० एल० धामा, **ए गाइड टू खजुराहो**, पृ० 8।
2. बी० एल० धामा, **ए गाइड टू खजुराहो**, पृ० 8; पी० सी० मुखर्जी ने अपनी पुस्तक "**रिपोर्ट आन दि एन्टिक्विटीज आफ ललितपुर**", पृ० 16 पर इस कथन की पुष्टि किया है।
3. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 9,

चौकोर भू-निवेश योजना के अन्तर्गत ही निर्मित हैं। वृत्ताकार भू-निवेश योजना में निर्मित मन्दिर भेड़ाघाट एवं मितावली तथा चौकोर योजना में निर्मित मन्दिर खजुराहो एवं बदोह नामक स्थानों पर स्थित हैं। ये मन्दिर अधिकांशत: भग्नावस्था में हैं। इनमें से सबसे अच्छी अवस्था में भेड़ाघाट का योगिनी मन्दिर है। मध्य प्रदेश में कुल चार योगिनी मन्दिरों की संरचनाएं अवशिष्ट हैं। शेष स्थानों से मात्र योगिनी मूर्तियां ही प्राप्त हो सकी हैं जिससे संरचनाओं के स्वरूप की कल्पना मात्र हो सकती है। विभिन्न संग्रहालयों एवं स्थानों से प्राप्त योगिनी मूर्तियों का विस्तृत वर्णन मूर्तिकला सम्बन्धित अध्याय में किया गया है।

मध्य प्रदेश में भी उत्तर प्रदेश की ही भांति भू-निवेश योजना में निर्मित परम्परागत योगिनी मन्दिरों का निर्माण हुआ है। इन मन्दिरों का निर्माण कल्चुरी एवं चन्देल वंश के राजाओं के संरक्षण में हुआ है। ये मन्दिर भी उत्तर प्रदेश एवं उड़ीसा के समकालीन हैं। विभिन्न क्षेत्रों में निर्मित इन मन्दिरों में क्षेत्रीय विशेषताओं ने भी अपना प्रभाव डाला है। मध्य प्रदेश में जिन प्रमुख स्थानों से योगिनी मूर्तियां प्राप्त हुई हैं, उनमें शहडोल, हिंगलाजगढ़ एवं नरेसर उल्लेखनीय हैं। इनमें अधिकांश मूर्तियों की पीठिका पर योगिनियों के नाम खुदे हुए हैं। इस प्रकार संरचनाओं एवं मूर्तियों के आधार पर मध्य प्रदेश से कुल सात योगिनी मन्दिरों का प्रमाण मिलता है। प्राप्त मूर्तियां विभिन्न क्षेत्रों में स्थित योगिनी मन्दिरों के समकालीन हैं। योगिनी मूर्तियां विभिन्न क्षेत्रों के शैलीगत विशेषताओं से युक्त निर्मित हैं। इस प्रकार प्राप्त मूर्तियों एवं मन्दिरों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि भारत में योगिनी कौल उपासना का सर्वाधिक प्रचलन मध्य प्रदेश में था। मध्यकालीन कल्चुरी एवं चन्देल वंश के राजाओं का भी संरक्षण योगिनी कौल उपासना को प्राप्त था, जिसके फलस्वरूप विभिन्न क्षेत्रों में योगिनी मन्दिरों का निर्माण हुआ। योगिनी कौल उपासना में रानियां भी काफी रुचि लेती थीं। मन्दिरों को सीमित क्षेत्रों में निर्मित होने से यह स्पष्ट होता है कि विशेष प्रकार के लोग ही इस कौल उपासना में भाग लेते थे और यह जनसाधारण के बीच प्रचलित नहीं रहा। सम्भवत: इसके पीछे योगिनी कौल अभ्यास की गोपनीय क्रियायें प्रभावी रही हैं। यहां हम मध्य प्रदेश के विभिन्न स्थानों से प्राप्त योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य अवशेषों का वर्णन कर रहे हैं।

1. भेड़ाघाट :

भेड़ाघाट मध्य प्रदेश में जबलपुर के पास स्थित है। यहां पर पहाड़ी की चोटी पर एक वृत्ताकार योगिनी मन्दिर है (चित्र सं०-20 अ)। भारत में प्राप्त सभी चौंसठ योगिनी मन्दिरों में इस मन्दिर की संरचना सबसे अच्छी है, जबकि शेष अन्य मन्दिर जीर्णावस्था में हैं (चित्र सं०-२०ब)। यह मन्दिर कणाश्म के छोटे-छोटे टुकड़ों से बना है। इस मन्दिर की बाह्य दीवाल पत्थर के इन्हीं छोटे टुकड़ों को जोड़कर निर्मित की गई है। मन्दिर की बाह्य दीवाल मोटी है तथा इसका वृत्ताकार बरामदा आज भी विद्यमान है। वृत्ताकार बरामदे में आंगन की ओर स्तम्भ हैं जिस पर छत आधारित है। स्तम्भों के ऊपर सीधे सपाट छज्जे बने हैं। बरामदे का भीतरी व्यास 116 फुट 2 इंच तथा बाहरी व्यास 103 फट 9 इंच है। कुल स्तम्भों की संख्या 84 है तथा इतने ही स्तम्भ पीछे दीवार से सटकर

भी बने हुए हैं। बरामदे की चौड़ाई 4 फुट 9 इंच तथा ऊँचाई 5 फुट 3. इंच है। यह भूमि से 8½ इंच ऊंचा है। छज्जे लगभग 8½ इंच मोटे पत्थर के बने हैं, जो सामने एवं पीछे दोनों ओर मुड़े हैं। अधिकांश मूल स्तम्भ खण्डित है तथा उनके स्थान पर नये स्तम्भ बने हुए हैं। बरामदे में दो प्रवेशद्वार एवं 81 आले बने हुए हैं। ये प्रवेशद्वार दक्षिण-पूर्व तथा पश्चिम दिशा में बने हुए हैं। दक्षिण-पूर्व के प्रवेशद्वार तक पहुचने हेतु कोई सोपान मार्ग नहीं है। अतः वहां तक पहले लोग सम्भवतः पगडण्डी के रास्ते पहुँचते थे। सम्प्रति यह मार्ग लोहे की जाली से वन्द कर दिया गया है। पश्चिमी द्वार तक पहुंचने हेतु भूमि तल से पहाड़ो की चोटो तक सोढ़ियां बनी हुई हैं। ये सीढ़ियां 5 फुट 7 इंच ऊँची एवं 2 फट चौड़ी हैं।

प्रत्येक दो स्तम्भों के मध्य आले बने हुए हैं, जिनमें मूर्तियां स्थापित को गई हैं। स्तम्भ 5 फुट 4 इन्च ऊंचे हैं। ये वर्गाकार हैं तथा इनका प्रत्येक बाजू 10½ इंच चौड़ा है ये एकाश्म स्तम्भ पूर्ण घट की आकृति से अलंकृत हैं। प्रत्येक स्तम्भ के पीछे दीवार से लगे हुए अर्धस्तम्भों के मध्य 3 फुट 5½ इंच का व्यवधान है, किन्तु अर्धस्तम्भों के मध्य का व्यवधान 3 फुट 7¼ इंच है। इसकी छत विशाल पाषाण शिलाओं से निर्मित है जो 8 से 9 इंच मोटी है।

इस मन्दिर के निर्माण काल का ठीक-ठीक ज्ञान नहीं है, परन्तु मूर्तियों पर खुदे अभिलेखों के आधार पर काल निर्धारण सम्भव है। इनको लिपि द्वितीय युवराज देव के पिता लक्ष्मणराज द्वितीय के कारीतलाई प्रस्तर लेख के अक्षरों से मिलती है।[1] इस अभिलेख में प्रयुक्त "श" कोकल्लदेव द्वितीय के गुर्गी शिलालेख के "श" जैसा है।[2] अतः इस मन्दिर का निर्माण मूलतः 10वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ माना जा सकता है, किन्तु यह मन्दिर अपने वर्तमान स्वरूप में इतना प्राचीन नहीं है। इसकी दीवार से स्पष्ट होता है कि मन्दिर का निर्माण दो विभिन्न कालों में हुआ है।

वृत्ताकार बरामदे का निरीक्षण करने पर यह स्पष्ट होता है कि यह दो भागों में निर्मित है। कनिंघम के अनुसार प्रथम भाग में पुरानी वृत्ताकार दीवाल एवं नामांकित मूर्तियां निर्मित हुई तथा द्वितीय भाग में पीछे की दीवाल का ऊपरी भाग, छत एवं स्तम्भ निर्मित हुए होंगे। उनके अनुसार यह मन्दिर 10वीं सदी के मध्य के पहले निर्मित हुआ था। नीचे की दीवाल चौकोर पत्थर के भारी टुकड़ों से बनी थी तथा ये प्रस्तर खण्ड एक दूसरे से सामंजस्य रखते हुए जोड़े गये हैं। ऊपर का भाग छोटे-छोटे विभिन्न आकार के टुकड़ों से निर्मित है और ये टुकड़े आपस में ठीक से बैठ नहीं पाये हैं। ऊपरों भाग में लगे खुदे हुये प्रस्तर अन्य भवनों के प्रतीक होते हैं।[3]

---

1. आर० के० शर्मा दि टेम्पुल आफ चौंसठ योगिनी ऐट भेड़ाघाट, पृ० 40-42।
2. वही, पृ० 40-42।
3. ए० कनिंघम, आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट, जिल्द 9, पृ० 73।

सम्भवतः 10वीं सदी में इस मन्दिर के निर्माण के पूर्व यहां दूसरा मन्दिर विद्यमान था, क्योंकि इस मन्दिर की सीढ़ियों के पत्थर पुरानी संरचना के हैं। सीढ़ी में लगे हुए पत्थर स्तम्भ, चैत्य, खिड़की तथा शिखर निर्माण में प्रयुक्त हुए प्रतीत होते हैं। यह इसके पूर्व की संरचना को इंगित करते हैं। इस मन्दिर की मूर्तियों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है, प्रथम भाग में वे मूर्तियां आती हैं जो लाल बलुवे पत्थर से निर्मित हैं तथा स्थानक मुद्रा में हैं। इन मुर्तियों पर नामांकन नहीं हुआ है। दूसरे भाग की मूर्तियां हरे-पीले बलुवे पत्थर की बैठी हुई मुद्रा में हैं। इन मूर्तियों पर अंकित लिपि ने इनका काल 10वीं सदी माना जा सकता है। सम्भवतः स्थानक मुद्रा में प्राप्त मुर्तियां पहले निर्मित हुई थीं, जैसाकि कनिंघम, आर० डी० बनर्जी एवं देवला मित्रा ने भी स्वीकार किया है।[1] देवला मित्रा के अनुसार बरामदे की मूर्ति सं० 1, 22, 25, 30, 31, 67, 71 एवं 73 गुप्तोत्तर काल (7वीं सदी) की हैं।[2] इन मूर्तियों को देखकर यह प्रतीत होता है कि यहां पर योगिनी मन्दिर के पूर्व अन्य कोई मन्दिर था, जिसके अवशेष योगिनी मन्दिर में प्रयुक्त हुए हैं। आर० डी० बनर्जी कनिंघम के इस मत से सहमत हैं कि पूर्व के मन्दिर की सामग्री से वर्तमान मन्दिर के पीछे की दीवार निर्मित की हुई है।[3] देवला मित्रा का कहना है कि 7वीं सदी भेड़ाघाट शाक्त कौल का केन्द्र था और उसी समय सप्त-मातृकाओं की उपासना हेतु मन्दिर निर्मित हुआ था, परन्तु उसके स्वरूप का अनुमान लगाना कठिन है।[4] पहाड़ों की चोटी पर बिना उत्खनन किए पहले के मन्दिर का स्वरूप निर्धारण सम्भव नहीं है, परन्तु इतना तो निश्चित प्राय है कि वह मन्दिर शक्ति उपासना से सम्बन्धित था।[5]

मूर्तिकला की विशेषतानुसार यहां की मूर्तियां खजुराहो की तरह हैं। ज्ञातव्य है कि खजुराहो के मन्दिर का निर्माण 950 ई० से 1050 ई० के मध्य हुआ था। भेड़ाघाट के योगिनी मन्दिर का निर्माण सम्भवतः कल्चुरी नरेश युवराज देव द्वितीय ने करवाया था। उसका राज्यकाल 10वीं सदी के उत्तरार्द्ध तक माना जाता है।[6] कल्चुरियों की राजधानी त्रिपुरी भेड़ाघाट से मात्र 4 मील की दूरी पर है जिससे उनके राज्याश्रय की भी यहां सम्भावना प्रतीत होती है। इस मन्दिर की एक अन्य विशेषता इसमें निर्मित 81 योगिनी मूर्तियां हैं, जबकि ग्रन्थों में चौंसठ योगिनियों की उपासना का उल्लेख प्राप्त होता है। 81 योगिनियों की मूर्तियों के होने पर भी इस मन्दिर को "चौंसठ योगिनी मन्दिर" कहना कहाँ तक उचित है ? इस विषय पर आर० के शर्मा या अन्य विद्वानों ने कोई विचार नहीं व्यक्त किया है। मन्दिर में भी 81 आले बने हुए हैं। इस सन्दर्भ में विद्या दहेजिया ने नेपाल की पाण्डुलिपि "मत्तोत्तरेतंत्र" का उल्लेख करते हुए कहा है कि इस ग्रन्थ में 81 योगिनियों के समूह का वर्णन किया

---

1. **जर्नल आफ एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल**, (एल०), जिल्द 22. सं० 2, 1956, पृ० 237(नोट)।
2. वही, पृ० 237।
3. आर० डी० बनर्जी **हैह्याज आफ त्रिपुरी एण्ड देअर मानुमेण्ट्स**, पृ० 86।
4. **जर्नल आफ एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल**, (एल०), जिल्द 22, सं० 2, 1956, पृ० 2'7।
5. आर० के० शर्मा, **चौंसठ योगिनी टेम्पुल ऐट भेड़ाघाट**, पृ० 41।
6. एल्की जन्नास व जेनी अबोयर, **खजुराहो**, 1960, (देखें तालिका)।

गया है। ग्रन्थ में स्पष्ट रूप से संकेत किया गया है कि 81 योगिनियों की उपासना विशेषतः राजाओं के दृष्टि से होती थी।[1] इस उपासना से सिद्धि प्राप्त होने का उल्लेख प्राप्त होता है। सम्भवतः अपने राज्य की राजनैतिक स्थिति एवं सत्ता को स्थापित करने की दृष्टि से कल्चुरी नरेश ने 81 योगिनियों के इस मन्दिर का निर्माण करवाया था। युवराज देव द्वितीय ने अपनी असुरक्षित राजनैतिक स्थिति के कारण राज्य सुरक्षा एवं युद्ध में विजय की दृष्टि से 81 योगिनियों की उपासना हेतु सम्भवतः यह मन्दिर बनवाया होगा।[2] परन्तु उसके बाद भी युवराज देव द्वितीय के राज्य की सुरक्षा न हो सकी एवं पड़ोसी परमार राज्य से युद्ध में उन्हें पराजित होना पड़ा। विभिन्न चरणों में निर्मित इस मन्दिर को विभिन्न मान्यताओं ने प्रभावित किया है।

गौरी शंकर मन्दिर :

यह भेड़ाघाट योगिनी मन्दिर की संरचना के आंगन में उत्तर-पश्चिम भाग में स्थित है। कनिंघम का मत है कि बरामदे के नैऋत्य भाग में एक ऐसा ही मन्दिर तथा पूर्व ओर पश्चिमी द्वार के सामने मुख्य मन्दिर रहा होगा।[3] यदि कनिंघम का मत उचित है तो यह मन्दिर कर्ण द्वारा निर्मित अमर कण्टक के तीन गर्भगृहों युक्त मन्दिर के समान रहा होगा। परन्तु नैऋत्य एवं पूर्व भाग में इसका कोई भी चिह्न विद्यमान नहीं है। इतना तो प्रायः निश्चित है कि गौरी शंकर मन्दिर के नीचे का भाग प्राचीन है। आर० डी० बनर्जी के अनुसार मन्दिर का गर्भगृह अमर कण्टक के मन्दिर के समान ही रहा होगा। इसमें लगे चूने से यह ज्ञात करना कठिन है कि मन्दिर में बने ताखे मूल है अथवा नहीं। मन्दिर के सामने मण्डप से सांड़ की मूर्ति परवर्ती काल की है। मण्डप एवं नन्दीमण्डप की अर्वाचीनता उनके छज्जों से ज्ञात होती है एवं स्तम्भ तथा अर्धस्तम्भ मात्र प्राचीन रहे गये हैं। कनिंघम के अनुसार ये मूलतः घेरे के पूर्व भाग में स्थित प्रधान मन्दिर के मण्डप से सम्बद्ध होंगे। इसके तीन ओर दीवाल से लगे हुए ऊँचे आसन बने हैं। इनके पीछे वृत्ताकार पृष्ठासन है तथा पृष्ठभाग कंगूरों की पंक्ति के रूप में निर्मित है। मण्डप एवं गर्भगृह के मध्य छोटा सा अन्तराल है। द्वार की चौखट निश्चित रूप से प्राचीन है जैसा कि दाहिने और उत्कीर्ण एक अभिलेख से ज्ञात होता है। इसके अनुसार महाराज्ञी गोसल देवी, विजय सिंह देव एवं महाकुमार अजय सिंह देव यहां नित्य प्रणाम करने आते थे।[4] आर० डी० बनर्जी का कहना है कि यह मन्दिर मूलतः 10वीं सदी के मध्य की संरचना है, जिसे अल्हण देवी ने अपने पुत्र नरसिंह देव के काल (1155 ई०) में पुनः निर्मित करवाया[5], तथा इसका नाम वैद्यनाथ मन्दिर रखा। आजकल इसे गौरी शंकर मन्दिर कहते हैं।

---

1. **गोरक्षसंहिता**, सं० जनार्दन पाण्डेय, **वाराणसी**, 1973, अ० 27
   (श्री "मत्तोत्तरे तंत्र" नेपाल के राष्ट्रीय अभिलेखागार में है।) इसके कुछ अंश गोरक्षसंहिता में वर्णित हैं।
2. विद्या दहेजिया, **आर्ट इण्टरनेशनल**, मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 24
3. ए० कनिंघम, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट**, जिल्द 9, पृ० 61
4. आर० डी० बनर्जी, **हैहयाज आफ त्रिपुरी एण्ड देअर मानुमेंट्स**, पृ० 67-68
5. वही, पृ० 69

इस मन्दिर के गर्भगृह में सम्प्रति शैव, वैष्णव एवं बौद्ध धर्म से सम्बद्ध अनेक देवी-देवताओं की मूर्तियां हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये मूर्तियां विभिन्न मतों से सम्बन्धित मन्दिरों से यहां लायी गयी हैं। इनमें कुछ मूर्तियां शिल्प की दृष्टि से उच्चकोटि की हैं।[1]

2. **मितावली :**

यह स्थान ग्वालियर के समीप पदावली से 2 मील की दूरी पर स्थित है यहाँ पहाड़ी की चोटी पर एक वृत्ताकार संरचना है, जिसे चौंसठ योगिनी मन्दिर कहा गया है (चित्र सं० 21)। इस मन्दिर की खोज एम० बी० गार्डे ने किया था। इस पहाड़ी पर पहुंचने के लिए पहाड़ी को काटकर पत्थर के टुकड़ों से सीढ़ियों के पायदान बने हैं। वहां तक पहुंचने के लिए एक रास्ता पानी के कटाव से अपने आप बना है।

यह मन्दिर ऊँची जगती पर वृत्ताकार संरचना के साथ स्थित है। इसका व्यास लगभग 170 फुट है। मन्दिर की बाह्य दीवाल पत्थर के टुकड़ों से निर्मित है। प्रवेश द्वार तक पहुंचने के लिए सतह से सीढ़ी बनी हुई है। मुख्य संरचना की दीवाल एवं छत नष्ट हो चुकी है। संरचना के चारों ओर वरामदा बना हुआ है। खण्डित दीवाल एवं छत की मरम्मत करके ईंटों के छज्जे लगाए गए हैं। इस वृत्ताकार मन्दिर के उत्तर एवं पूर्व भाग के आले खण्डित हैं।[2] आंगन की ओर बाह्य दीवाल से लगे हुए 65 आले बने हैं। इन आलों में सम्भवत: योगिनी मूर्तियां स्थापित थीं।

मन्दिर के प्रांगण में मध्य स्थान पर एक मण्डप को तरह की संरचना है (चित्र सं० 22)। यह मण्डप ऊँची जगती पर बना है तथा इसका फर्श पत्थर के टुकड़ों से निर्मित है। मण्डप वृत्ताकार है तथा इसका छत स्तम्भों पर आधारित है। मण्डप के स्तम्भ अलंकरणयुक्त हैं। यह सम्पूर्ण संरचना अन्य योगिनी मन्दिरों की तरह ही है। स्थानीय निवासी इस मन्दिर को "एकोत्तरसो" नाम से सम्बोधित करते हैं। सम्भवतः मन्दिरों के आलों में 101 शिवलिंग होने से यह परम्परागत नाम प्रचलित हुआ।[3] इस मन्दिर के छत के प्लास्तर में खुदे अभिलेख से ज्ञात होता है कि इसकी मरम्मत ग्वालियर के तोमरों के शासन काल (15वीं सदी) में हुयी थी।[4] इस मन्दिर का निर्माण राजा देवपाल (1055-75 ई०) के समय हुआ है जिसका उल्लेख मन्दिर से प्राप्त एक अभिलेख में किया गया है। उसमें कहा गया है कि महाराजा देव पाल एवं उनकी रानी ने इस मन्दिर का निर्माण करवाया।[5]

---

1. अजय मित्र शास्त्री, त्रिपुरी, भोपाल, 1971, पृ० 137
2. एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट आफ दि ग्वालियर स्टेट आर्कियोलाजी, 1942-46, पृ० 8-10
3. जान मार्शल, आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, एनुअल रिपोर्ट, 1915-16, भाग 1, पृ० 18।
4. वही, पृ० 18
5. उपर्युक्त क्र० सं० (1)

अभिलेख में 1323 ई० का भी उल्लेख है, संभवत: यह कछवाहा राजपूतों द्वारा मन्दिर को दान देने से सम्बन्धित है ।

मध्य प्रदेश के चौंसठ योगिनी मन्दिरों में मात्र दो मन्दिर वृत्ताकार भू-निवेश योजना के प्राप्त होते हैं । ये मन्दिर मितावली एवं भेड़ाघाट में स्थित हैं । भेड़ाघाट मन्दिर से योगिनी मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं परन्तु मितावली में मूर्तियों का अभाव है । स्थापत्य की दृष्टि में दोनों मन्दिरों की संरचनाएं लगभग एक समान हैं तथा ये समकालीन भी हैं । ग्वालियर स्थित इस मन्दिर से योगिनी कौल उपासना के एक अन्य प्रमुख केन्द्र की पुष्टि होती है । ग्वालियर के एक अन्य स्थान "नरेसर" से भी योगिनी मूर्तियां प्राप्त हुई हैं । अत: यह प्रमाणित होता है कि ग्वालियर में दो योगिनी मन्दिर थे । इस प्रकार ग्वालियर योगिनी उपासना का एक प्रमुख केन्द्र माना जा सकता है ।

3. बदोह :

यह स्थान मध्य प्रदेश के विदिशा जिले में कूल्हर से 18 कि० मी० दूर स्थित है । यहां पर एक चौंसठ योगिनी मन्दिर की संरचना का अवशेष प्राप्त हुआ है । यह मन्दिर तालाब के समीप दक्षिण-पूर्व में एक पहाड़ी पर स्थिति है । यहाँ पर अनेक मन्दिरों के खण्डहर हैं, जिनमें इस मन्दिर की संरचना सबसे बड़ी है । यह ग्वालियर स्थित "तेली का मन्दिर" के समान है । इस मन्दिर का मूल स्वरूप वर्तमान मन्दिर से भिन्न था । इसका निम्न छज्जे तक का भाग लगभग 9वीं सदी का है । ऊपर का भाग हिन्दू एवं जैन मन्दिरों के भग्नावशेष से पुनर्निर्मित प्रतीत होता है ।[1] प्रमुख मन्दिर सात सहायक रचनाओं के मध्य है, जो अब खण्डहर में परिणत हो गई हैं । इस मन्दिर का मूल स्वरूप एवं गर्भगृह 9वीं सदी का है (चित्र सं०-23) । यह प्रथम हिन्दू मन्दिर था । इसके वाहरी भाग के निर्माण एवम् अलंकरण में जैन मतावलम्बियों ने हिन्दू धर्म से सम्बन्धित मूर्तियों का उपयोग किया है । इससे स्पष्ट होता है कि सर्वप्रथम यह देवियों से सम्बन्धित साधारण मन्दिर था । संरचना के गर्भगृह में दीवाल से सटकर तीनों ओर पीठिका के अनवरत अवशेष विद्यमान हैं (चित्र सं०-24) । इस पीठिका पर मूर्तियां स्थापित करने हेतु घाट बने हुए हैं । आस-पास खण्डित मूर्तियां पड़ी हुई हैं । इन मूर्तियों को स्थापित करने के लिए उनके पृष्ठभाग में चूल कटा हुआ है । मूर्तियों के पीछे कटे चूल एवं गर्भगृह की पीठिका पर बने घाटों से यह स्पष्ट होता है कि ये मूर्तियां यहीं स्थापित थीं । इस स्थान पर कुल 42 चूल कटे हुए हैं जिससे यह अनुमान लगाया जाता है कि यहाँ भी दुधई की तरह बयालिस योगिनी मूर्तियों को स्थापित किया गया था । संभवतः इस प्रकार चौंसठ से कम संख्या में योगिनियों का होना स्थानीय किसी मान्यता के प्रभाव के कारण हो । जिस प्रकार राजाओं के हित के लिए 81 योगिनियों के पूजा की बात कही गयी है उसी प्रकार बयालिस योगिनियों के साथ भी कोई मान्यता रही होगी । इस संदर्भ में गोरक्षसंहिता[2] में कहा गया है कि संस्कृत के 42 अक्षरों को मातृका स्वरूप चक्र में उपासना करने पर सिद्धि प्राप्त होती है । संभवतः इसी परिकल्पना के आधार पर बदोह एवं

1. एम०बी० गार्डे **आर्कियोलाजी इन ग्वालियर**, 1934, पृ० 54
2. जनार्दन पाण्डेय, (सम्पादक), **गोरक्षसंहिता**, अ० 7

दुधई के मन्दिरों का निर्माण हुआ। इस प्रकार के उपासना का प्रचलन अत्यन्त सीमित रहा है। मूर्तिकला के आधार पर इसका काल निर्धारण 9वीं सदी में किया गया है।[1] यह मन्दिर चौंसठ योगिनी मन्दिर खजुराहो की तरह ही चौकोर भू-निवेश योजना में निर्मित हुआ है। इस मन्दिर की मूल संरचना पुनर्निर्माण के कारण परिवर्तित हो गई है। मन्दिर के छज्जे के नीचे के अवशिष्ट भाग तथा यहाँ से प्राप्त योगिनी मूर्तियाँ इस चौकोर योगिनी मन्दिर के स्वरूप पर प्रकाश डालती हैं। यहाँ से योगिनी मूर्तियां सुरक्षित स्थिति में नहीं प्राप्त हुई हैं, किन्तु जो भी खण्डित मूर्तियां प्राप्त हुई हैं, उनमें योगिनियों का स्वरूप परिलक्षित होता है। यह मन्दिर खजुराहो मन्दिर के समकालीन उसकी विशेषताओं को समाहित किए हुए निर्मित है। मध्य प्रदेश से प्राप्त योगिनी मन्दिरों में खजुराहो एवं बदोह के योगिनी मन्दिरों की संरचनाएं चौकोर भू-निवेश योजना में निर्मित हैं। इस क्षेत्र में गुप्त काल से ही मातृकाओं या मातृ शक्तियों की उपासना प्रचलित रही है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि इस स्थान पर योगिनी उपासना के प्रचलन से इस मन्दिर का निर्माण हुआ।

स्थानीय जनश्रुतियों के अनुसार इस मन्दिर का निर्माण एक गड़ेरिया द्वारा करवाया गया था जिससे इसका नाम "गादरमल मन्दिर" पड़ा। आज भी यह इसी परम्परा में "गादरमल मन्दिर" से सम्बोधित किया जाता है।

4. खजुराहो :

योगिनी मन्दिर खजुराहो का प्राचीनतम मन्दिर है। यह शिवसागर झील के दक्षिण-पश्चिम दिशा में सतह से 25 फुट की ऊँचाई पर कणाश्म की चट्टान पर स्थित है। यह मन्दिर योजना एवं निर्माण शैली में असामान्य है। आयताकार छतविहीन यह मन्दिर ऊँची जगती पर निर्मित है (चित्र 25)। यह खजुराहो का एकमात्र कणाश्म से बना हुआ मन्दिर है। इस मन्दिर का विन्यास दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की दिशा में है। इसकी बाह्य दीवाल कणाश्म के छोटे-छोटे टुकड़ों से निर्मित है (चित्र 26) तथा इसकी मोटाई 5½ फुट है।

मन्दिर की लम्बाई उत्तर-पूर्व से 102½ फुट एवं चौड़ाई 59½ फुट है। इस मन्दिर का विस्तृत प्रांगण चारों ओर 64 आलों से परिवृत था।[2] ये आले मन्दिर में आंगन की ओर दीवाल से लगे हुए

1. ग्वालियर स्टेट, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट**, 1923-24, पृ० 8.
2. ए० कनिंघम, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट**, जिल्द 21, भाग 1, पृ० 57; स्टेला क्रैमरिश, **दि हिन्दू टेम्पुल**, जिल्द 1, पृ० 198;
रामाश्रय अवस्थी, **खजुराहो की देव प्रतिमाएं**, भाग 1, पृ० 12
विद्वानों का कथन है कि मन्दिर में 67 आले थे, जिनमें अब 45 अवशिष्ट हैं। कृष्णदेव, खजुराहो रिपोर्ट, पृ० 201, लेखक ने इस मन्दिर की सतह से ऊंचाई 18 फुट, लम्बाई 103 फुट तथा चौड़ाई 60 फुट कहा है। इन्होंने भी 67 आलों के होने तथा 45 के अवशिष्ट होने का उल्लेख किया है।

निर्मित हैं। आलों की ऊंचाई 31½ फुट, चौड़ाई 2 फुट 4⅓ इंच एवं गहराई 3½ फुट है।[1] संरचना में दक्षिण-पश्चिम की दीवाल के मध्य का आला अन्य आलों की तुलना में बड़ा निर्मित हुआ है। शेष सभी आले आकार में समान हैं। सभी आले एक दूसरे से सटे हुए हैं तथा इनका भीतरी भाग सादा है। प्रत्येक आले में एक छोटा प्रवेश द्वार है। कनिंघम के अनुसार द्वार के किनारे बने छिद्र इनमें लकड़ी के कपाट प्रयुक्त होने की ओर संकेत करते हैं।[2] इनमें निम्न भाग सादा बना हुआ है। डा० लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी ने इस सम्पूर्ण संरचना को चार भागों में विभक्त किया है जो क्रमशः आधार, दीवाल, कार्निस एवं शिखर हैं। आधार की संरचना में कपोट, कलश, कुम्भ, यज्ञ कुम्भ तथा खुर हैं। ये सभी पूर्णरूप से नष्ट हो चुके हैं।[3] शिखर का भाग भी खण्डित है तथा उनके ऊपर के भाग स्थानान्तरित हो गए हैं।[4] खण्डित अंशों से प्रतीत होता है कि पिरामिड आकृति के इस शिखर को एक दूसरे से जुड़े तीन आमलकों द्वारा निर्मित किया गया था। शिखर की संरचना त्रिकोणात्मक स्वरूप प्रदर्शित करती है एवं उसका सतह सादा है। सब मिलाकर यह नागर शैली के छोटे शिखर की संरचना के समान है। इस प्रकार इस मन्दिर का प्रत्येक आला एक छोटे मन्दिर के स्वरूप को प्रदर्शित करता है। मन्दिर की दीवाल के ऊपरी भाग को कपोट एवं निचले भाग को पद्म की तरह निर्मित किया गया है।[5] यह अग्रभाग को दो हिस्सों में विभक्त करता है एवं इसमें ऊपर का भाग संकीर्ण होता गया है।

मन्दिर के प्रमुख प्रवेश द्वार के दूसरी ओर दक्षिण-पश्चिम की दीवाल में बड़े आले के पास एक छोटा प्रवेश द्वार है। इस द्वार की चौड़ाई 2 फुट है। इस प्रवेश द्वार से मन्दिर के चारों ओर बने संकीर्ण मार्ग में प्रवेश किया जाता है।

कनिंघम का विचार था कि मन्दिर के प्रांगण के मध्य पहले काली या शिव का मन्दिर रहा होगा, किन्तु खनन में इस मन्दिर के अस्तित्त्व का कोई प्रमाण नहीं प्राप्त होता।[6] कनिंघम का अनुमान सत्य भी हो सकता है, क्योंकि मन्दिर के समीप ही एक 6 फुट लम्बी गणेश की प्रतिमा मिली है। गणेश को मातृकाओं से संबंधित होने के आधार पर कनिंघम के अनुमान की पुष्टि होती है। इस समय यह गणेश प्रतिमा खजुराहो संग्रहालय में सुरक्षित है। गणेश मन्दिर के स्थान पर अब कोई अवशेष नहीं है।[7]

इस मन्दिर की योजना चौकोर है। इस प्रकार की योजना के मन्दिर, बदोह, रिखियां एवं वाराणसी में भी स्थित हैं। इसका आंगन खुले हुए बरामदे से घिरा हुआ है। इस मन्दिर की योजना

---

1. एल्की जन्नास, **खजुराहो**, पृ० 87
2. ए० कनिंघम, **खजुराहो** जिल्द 2, पृ० 418
3. लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी, **जर्नल आफ इण्डियन सोसायटी आफ ओरियण्टल आर्ट**, जिल्द 6, पृ० 33
4. ए० कनिंघम, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इडिण्या रिपोर्ट**, जिल्द 2, पृ० 417-18
5. लक्ष्मीकांत त्रिपाठी, वही, पृ० 33
6. रामाश्रय अवस्थी, **खजुराहो की देव प्रतिमाएँ** भाग 1, पृ० 12
7. लक्ष्मीकांत त्रिपाठी, **जर्नल आफ इण्डियन सोसायटी आफ ओरियन्टल आर्ट**, जिल्द 4, पृ० 33

विशेष प्रकार की है जिसका प्रसार भारत में लगभग 7वीं सदी में हुआ। उत्तर भारत में 724 ई० से 760 ई० के मध्य राजा ललितादित्य मुक्तापीड़ ने इसी प्रकार की संरचना का निर्माण कश्मीर में करवाया।[1] इस मन्दिर के योजना पर विचार करते हुए फरगुसन महोदय ने इसे जैनों द्वारा निर्मित कहा है परन्तु उन्होंने जैन धर्म से सम्बन्धित होने की संभावना पर शंका व्यक्त किया है।[2] बर्गिज ने भी इसे जैन संरचना के समान कहा है। उन्होंने इसके समान गान्धारों द्वारा निर्मित जमालगढ़ी एवं तख्त-ई-वाही में निर्मित संरचना का भी उल्लेख किया है।[3] यह संरचना कश्मीर में निर्मित कोठरीयुक्त आँगन के समानांतर है। गिरनार का जैन मन्दिर एवं मैसूर का सोमनाथ चालुक्य मन्दिर भी इस संरचना के समान हैं।[4] इस मन्दिर के प्रत्येक आले की संरचना द्रविड़ शैली के बड़े मन्दिरों के समान है।[5] इस मंदिर की योजना जैनों से ली गई प्रतीत होती है। जैन धर्म के प्रभाव में इस प्रकार के अनेक मंदिर नेमिनाथ, वस्तुपाल, तेजपाल (गिरनार) आदि निर्मित हुए।[6] इस प्रकार के मन्दिरों की दो विशेषताएं हैं, प्रथम यह कि बरामदे के किनारे की ओर आले होते हैं तथा द्वितीय, ये भीतर की ओर खुलते हैं। (चित्र-27) पहले जब मनुष्य सुरक्षा की दृष्टि से मकान का निर्माण करता था, तब वे भीतर की ओर खुले होते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि इसी प्रकार इन संरचनाओं का भी विकास हुआ। इस प्रकार के निर्माण बौद्ध संरचनाओं में आवासीय गृह हेतु पहाड़ों को काटकर किये जाते थे।[7] इस प्रकार की चौकोर संरचना संभवतः साधारण एवं सीमित स्थान में अधिक आलों को व्यवस्थित करने हेतु बनाई जाती थी।

कणाश्म से निर्मित इस मन्दिर के पीछे सामग्री, धन, निर्माता का सौन्दर्यबोध एवं शिल्पियों की सुविधा आदि प्रमुख कारक थे। बलुवे पत्थर का प्रयोग प्रतिहारों के काल में होता था एवं चन्देलों ने भी अलंकरणयुक्त मन्दिरों का निर्माण इसी पत्थर से करवाया।[8] जिन शिल्पियों ने कणाश्म पर कार्य किया है, वे आवश्यकतानुसार बलुवे पत्थर पर भी कार्य करने में कुशल थे। कणाश्म वहाँ आसानी से उपलब्ध था एवं आर्थिक दृष्टि से भी लाभदायक था।

इस मन्दिर के निर्माण काल के संदर्भ में कोई अभिलेख नहीं प्राप्त हुआ है। कनिंघम ने अपने प्रथम रिपोर्ट में इस मन्दिर का काल 9वीं सदी निर्धारित किया था। उन्होंने साथ ही यह आशंका भी

---

1. एल्की जन्नास, खजुराहो, पृ० 90
2. जेम्स फरगुसन, हिस्ट्री आफ इण्डियन ईस्टर्न आर्किटेक्चर, पृ० 110
3. वही, पृ० 51
4. आनन्द कुमारस्वामी, हिस्ट्री आफ इण्डियन ईस्टर्न आर्किटेक्चर, पृ० 110
5. स्टेला क्रैमरिश, दि हिन्दू टेम्पुल, भाग 1, पृ० 200
6. वही, पृ० 200
7. लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी, जर्नल आफ इण्डियन सोसायटी आफ ओरियण्टल आर्ट, जिल्द 6, पृ० 40
8. वही, पृ० 36

व्यक्त की थी कि यह मन्दिर मात्र दो या तीन सदी पुराना भी हो सकता है।[1] परन्तु अपनी दूसरी रिपोर्ट में उन्होंने कहा है कि यह मन्दिर 9वीं सदी के आरम्भिक काल में निर्मित जान पड़ता है। यद्यपि इस काल के विषय में वे स्वतः दृढ़ नहीं थे। उल्लेख्य है कि मंदिर के आलों के शीर्ष पर त्रिकोण अलंकरण उसी प्रकार के हैं जैसे धवनार एवं खोल्वी के बौद्ध एवं ब्राह्मण मन्दिरों में हैं। अतः यह मन्दिर 6वीं एवं 7वीं सदी के बाद का होगा। डा० लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी के अनुसार यह मन्दिर संभवतः 8वीं सदी का है।[2] यह मन्दिर कणाश्म का बना है जबकि खजुराहो के अन्य मन्दिर बलुवे पत्थर से निर्मित हैं। अतः यह खजुराहो का प्राचीनतम मन्दिर हो सकता है। महोबा के पास राहिला बर्मन ने राहिल्य बनवाया था एवं इसका काल 9वीं सदी था। अतः यह योगिनी मन्दिर इसका काल 9वीं सदी था। अतः यह योगिनी मन्दिर इससे पुराना होगा।[3] इस मंदिर का काल निर्धारण तीन आधारों पर किया जा सकता है, प्रथम कणाश्म का उपयोग, द्वितीय शिखरों के त्रिकोण अलंकरण एवं तृतीय योगिनी मूर्तियों पर खुदी हुई लिपि।[4] स्टेला क्रैमरिश ने इस मन्दिर का काल निर्धारण 9वीं सदी किया है।[5] कृष्णदेव जी ने इसे खजुराहो की प्राचीनतम कृति की संज्ञा दी है।[6] विभिन्न विद्वानों के अनुसार इस मंदिर के निर्माण में प्रयुक्त कणाश्म के आधार पर इसका काल निर्धारण 9वीं सदी में किया जा सकता है जबकि योगिनी मूर्तियों के सादे अण्डाकार प्रभामंडल एवं पीठिका पर बने सहायक एवं सहायिकाओं पर विचार करने से इसका काल 10वीं सदी निर्धारित किया गया है।[7] संभवतः खजुराहो की योगिनियां भेड़ाघाट के मंदिर से कुछ पहले लगभग 9वीं सदी के मध्य से 10वीं सदी के आरम्भ तक के काल की निर्मित लगती हैं। किसी भी चन्देल अभिलेख में इस मन्दिर का उल्लेख नहीं मिलता, अतएव इसका काल निर्धारण कला एवं विशेषताओं के आधार पर ही किया जा सकता है।

उड़ीसा :

उड़ीसा में दो योगिनी मन्दिरों के पुरातात्त्विक अवशेष प्राप्त हुए हैं जो हीरापुर एवं रानीपुर झरियल नामक स्थानों पर स्थित हैं। हीरापुर का मन्दिर आकार में सबसे छोटा है एवं यहां की मूर्तियां भी छोटे आकार की हैं। यहाँ योगिनी मूर्तियों के साथ मध्य में शिव को भी प्रदर्शित किया गया है। इस मंदिर में योगिनियों से संबंधित भैरव एवं कात्यायनी की भी मूर्तियाँ स्थापित हैं। यह मन्दिर

1. ए० कनिंघम, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट**, जिल्द, 21, भाग 1, पृ० 57
2. वही, पृ० 34
3. लक्ष्मीकांत त्रिपाठी, **जर्नल आफ इण्डियन सोसायटी आफ ओरियण्टल आर्ट**, जिल्द 6, पृ० 35
4. ए० कनिंघम, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ रिपोर्ट**, जिल्द 2, पृ० 418
5. स्टेला क्रैमरिश, **दि हिन्दू टेम्पुल**, भाग 1, पृ० 200
6. कृष्णदेव, **खजुराहो**, पृ० 20
7. विद्या दहेजिया, **आर्ट इण्टरनेशनल**, मार्च-अप्रैल, 1982, पृ० 25

शास्त्रीय विधानों के अनुकूल निर्मित हुआ प्रतीत होता है। विभिन्न विद्वानों के विचारों तथा मन्दिर की विशेषताओं के आधार पर इस मन्दिर का काल निर्धारण 9वीं-10वीं सदी के मध्य किया जाता है।

रानीपुर झरियल का मन्दिर हीरापुर के मन्दिर से आकार में बड़ा है। यहाँ की योगिनी मूर्तियाँ भी बड़े आकार की हैं। यह योगिनियाँ वृत्ताकार संरचना के भीतर आलों से स्थापित हैं। आलों में स्थित योगिनियां एवं संरचना के मध्य मण्डप में स्थित भैरव, सभी नृत्यरत हैं। इनकी नृत्यरत मुद्राएं भारतीय नाट्यशास्त्र के विभिन्न मुद्राओं को प्रदर्शित कर रही हैं। यहाँ चौदह योगिनियाँ पशु मुखयुक्त हैं। इन मूर्तियों की शैली साधारण हैं तथा इनमें प्रभामण्डल का अभाव है। यहां की धार्मिक स्थिति, कला एवं स्थापत्य को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि इस मन्दिर का निर्माण 9वीं सदो के उत्तरार्द्ध में किसी समय हुआ होगा।

हीरापुर एवं रानीपुर झरियल के मन्दिर 9वीं-10वीं सदी के मध्य निर्मित हुए हैं। इन आधारों पर यह कहा जा सकता है कि उड़ीसा में इस काल में योगिनी कौल उपासना प्रचलित थी। उड़ीसा, मध्य प्रदेश, एवं उत्तर प्रदेश में एक साथ 9वीं-12वीं सदी के मध्य योगिनी कौल का प्रभाव था। इस कौल के प्रभाव में इन स्थानों पर अनेक चौंसठ योगिनी मन्दिरों का निर्माण हुआ उड़ीसा स्थित मन्दिरों का निर्माण भौम एवं सोमवंशीय राज्याश्रय में हुआ है।

1. हीरापुर :

इस मन्दिर की खोज 1953 ई० में श्री केदारनाथ महापात्र ने अपने पुरी जिले की यात्रा में किया था। यह मन्दिर हीरापुर नामक ग्राम में स्थित है, जो भार्गवी नदी के किनारे एवं भुवनेश्वर के प्रसिद्ध मन्दिर से 3 मील पूर्व पड़ता है।

हीरापुर मन्दिर की शिल्प रचना मुक्तेश्वर से मिलती-जुलती है, परन्तु वास्तु संरचना उससे भिन्न है। अन्य चौंसठ योगिनी मन्दिरों की तरह यह मन्दिर भी वृत्ताकार है (चित्र 28)। यह वृत्ताकार संरचना गौरीपट्ट की तरह है, जिसकी लम्बाई 4 फुट, चौड़ाई 2 फुट 6 इंच, एवं ऊंचाई 5 फुट है। मन्दिर के भीतर प्रवेश करने हेतु पूर्व दिशा में प्रवेश द्वार है। संरचना के चारों ओर की दीवार की ऊँचाई 8 फुट से 9 फुट है एवं इसके बाह्य स्वरूप की लम्बाई 90 फुट है। वर्गाकार इस संरचना का व्यास लगभग 25 फुट है एवं दीवार की ऊँचाई सतह से 6 फुट है। इस मन्दिर में केवल एक प्रवेश द्वार है जो 8 फुट लम्बा एवं 2 फुट 6 इंच चौड़ा है। यह प्रवेश द्वार बहुत संकरा है (चित्र 29)। संभवतः इसमें लकड़ी के दरवाजे लगे हुए थे जो बने हुये छिद्रों से स्पष्ट है।[1] मन्दिर की प्रमुख संरचना बलुवे

1. चार्ल्स फाब्री, हिस्ट्री आफ आर्ट आफ उड़ीसा, पृ० 64-86

पत्थर, "जो साधारणतः खण्डगिरी में मिलते हैं," की है। इस मन्दिर का आधार पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़ों से बनाया गया है और मन्दिर का ऊपरी भाग खुला हुआ है। मन्दिर में भीतर की ओर 60 छोटे आलों का निर्माण हुआ है। इन आलों में काले पत्थर से निर्मित योगिनी मूतियां स्थापित हैं (चित्र-30)।

संरचना के मध्य में एक चौकोर मण्डप है, जिसे देवी मण्डप कहते हैं[1]। यह मण्डप 9 फुट 6 इंच लम्बा एवं 8 फुट चौड़ा है। इसका ऊपरी भाग पुर्ननिर्मित प्रतीत होता है। इसकी ऊँचाई भूमि की सतह से 9 फुट है। इस मण्डप के चारों दिशाओं में चार दरवाजे लगे हैं। इनकी चौड़ाई पूर्व एवं पश्चिम दिशा में 3 फुट 4 इंच, तथा उत्तर एवं दक्षिण दिशा में 2 फुट 1 इंच है। मण्डप के समीप जमीन पर कुछ बलुवे पत्थर के स्तम्भ एवम् अन्य भाग पड़े हुए हैं।[2]

इस मन्दिर का व्यास रानीपुर झरियल एवं भेड़ाघाट के योगिनी मन्दिरों से छोटा है। इस मन्दिर में कुल 60 आले बने हैं, जबकि योगिनियों की संख्या कुल 64 है। अन्य चार मूर्तियाँ संभवतः मण्डप के आलों में रखी हैं। इस संरचना के निर्माण में योगिनी पीठ के शास्त्रीय नियमों का कड़ाई से पालन हुआ है।[3] प्रवेश द्वार पर दो भैरव एवं बाह्य दीवाल में 9 कात्यायनी मूर्तियां स्थापित हैं।

इस मन्दिर के निर्माण काल के सन्दर्भ में कोई अभिलेख या ग्रन्थ नहीं प्राप्त होता। केदारनाथ महापात्र ने मन्दिर की कला विशेषता के आधार पर उसका निर्माण काल 9वीं सदी माना है। उनका कहना है कि यहाँ की दो सिरों वाली, स्थानक मुद्रा की मूर्तियाँ ही रानीपुर झरियल एवं भेड़ाघाट के योगिनी से पहले निर्मित होने का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। देवला मित्रा इस मन्दिर के निर्माण काल के विषय में कहती हैं कि उसका निर्माण 9वीं सदी में उस समय हुआ जबकि भारतीय समाज में ब्राह्मण तंत्र स्थापित एवं प्रचलित था।[4] भुवनेश्वर स्थित परशुरामेश्वर मन्दिर, जिसमें सप्तमातृकाओं की मूर्तियां हैं, 7वीं सदी का निर्मित है।[5] कपालिनी, मोहिनी, उत्तरयानी, गौरी, रामायणी, डाकिनी तथा चण्डी मन्दिर भुवनेश्वर के प्रसिद्ध तांत्रिक पीठ हैं, जिनमें प्रथम चार देवियां 8वीं सदी की हैं।[6] केवल कपालिनी मन्दिर में कपालिनी मूर्ति के पीछे 16 मूर्तियां मन्दिर की दीवाल में गर्भगृह में स्थापित हैं। कपालिनी चामुण्डा मूर्ति है, अन्य सात मातृकाएं हैं और चार योगिनी मूर्तियाँ हैं। इस सन्दर्भ में कपालिनी मन्दिर हीरापुर के योगिनी मन्दिर से सम्बन्धित प्रतीत होता है। यह तांत्रिक कौल के विकास

---

1. डी०सी० सरकार, **शक्ति कल्ट एण्ड तारा**, पृ० 83
   नोट—वर्गाकार संरचना के मध्य में एक मण्डप है जिसे "चण्डी मण्डप" कहते हैं।
2. केदारनाथ महापात्र, **उड़ीसा हिस्टोरिकल रिसर्च जर्नल**, भाग 2, नं० 2, जुलाई 1953, पृ० 24
3. वही, पृ० 36
4. देवलामित्रा, **जर्नल आफ एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल**, एल (22), नं० 2, 1956, पृ० 237
5. के०सी० पाणिग्रही, **जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी**, जिल्द 15, नं० 2, पृ० 110
6. केदारनाथ महापात्र, **उड़ीसा हिस्टोरिकल रिसर्च जर्नल**, जिल्द 2, नं० 2, जुलाई 1953, पृ० 38

को प्रदर्शित करता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि हीरापुर का मन्दिर कपालिनी मन्दिर के बाद निर्मित है। अतः यह मन्दिर 9वीं सदी के आरम्भ में निर्मित हुआ होगा।[1]

हीरापुर मन्दिर के निर्माण काल के सम्बन्ध में बेलगर का कहना है कि मन्दिर के पुरातात्विक अवशेष, कला एवं स्थापत्य को दृष्टिगत रखते हुए इसे 9वीं सदी का कहा जा सकता है।[2] विद्या दहेजिया ने हीरापुर मन्दिर एवं भुवनेश्वर मन्दिर को मूर्तिकला में समानता के आधार पर इसके 9वीं सदी के उत्तरार्द्ध या 10वीं सदी के आरम्भिक काल में निर्मित होने की ओर संकेत किया है।[3] उस समय उड़ीसा में ब्राह्मण तांत्रिक धर्म चरमोत्कर्ष पर था तथा अनेक तांत्रिक मन्दिरों के निर्माण भी हुए। इस मन्दिर का निर्माण सम्भवतः भौमराजा शान्तिकर द्वितीय की रानी हीरा महादेवी ने करवाया था। वर्तमान होरापुर नाम उन्हीं के नाम पर पड़ा है।[4]

उपर्युक्त विचारों एवं मन्दिर कीि वशेषताओं को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि हीरापुर का चौंसठ योगिनीम न्दिर 9वीं से 10वीं सदी के मध्य निर्मित हुआ था।

2. रानीपुर झरियल

उड़ीसा के बालंगीर जिले में सम्भलपुर के समीप दक्षिण दिशा में एक रानीपुर झरियल नामक स्थान है। यह परगना लोहा के अन्तर्गत एक गांव है। यहां एक छोटी पहाड़ी पर मन्दिरों का समूह निर्मित है तथा एक कोने पर अण्डाकार तालाब स्थित है। यहीं एक चोटी पर खुले हुये छत का वृत्ताकार चौंसठ योगिनी मन्दिर स्थित है (चित्र सं०-31)।[5] समीप स्थित तालाब के सम्बन्ध में शिव मंदिर के एक अभिलेख में इसे सोमतीर्थ कहा गया है।[6] सम्भवतः हजारों वर्ष पूर्व यह एक तीर्थ रहा होगा।

रानीपुर झरियल का चौंसठ योगिनी मन्दिर कणाश्म का बना हुआ है। इसकी बाह्य दीवाल पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़ों से निर्मित है (चित्र सं०-32)। इस संरचना में आंगन की ओर बाह्य दीवाल से सलग्न छोटे-छोटे आले बने हुये हैं। इन आलों के द्वार आंगन की ओर हैं। यह मंदिर हीरापुर योगिनी मन्दिर से क्षेत्रफल में बड़ा है। इस मन्दिर की ऊंचाई 12 फुट एवं व्यास लगभग 50 फुट है।[7] इसमें

---

1. केदार नाथ महापात्र, **उड़ीसा हिस्टोरिकल रिसर्च जर्नल**, जिल्द 2, न० 2, पृ० 38
2. वही, पृ० 38
3. विद्या दहेजिया, **आर्ट इंटरनेशनल**, पृ० 14
4. एच०सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 12
5. बेगलर, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट**, जिल्द 13, पृ० 129। लेखक ने इस स्थान को रानीपुर जुरल कहा है। यह वही नाम है जिसका कनिंघम ने अपने रिपोर्ट के 17वें जिल्द में उल्लेख किया है।
6. विद्या दहेजिया **आर्ट इटरनेशनल**, मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 14
7. वाल्टर इलियट, **इण्डियन ऐंटीक्वेरी**, जिल्द 7, पृ० 167;
   जान कैम्फेल ने वाल्टर इलियट को पत्र द्वारा इस मन्दिर के बारे में सूचित किया था। इन्होंने मन्दिर का व्यास 210 फुट कहा है।

भीतर की ओर कुल 65 आले हैं जिनमें योगिनी मूर्तियां स्थापित हैं।[1] इस मन्दिर में इस समय आलों में 50 मूर्तियां स्थित हैं। आलों का विभाजन समान दूरी पर बने हुये स्तम्भों से किया गया है। आलों को एक-दूसरे के अगल-बगल समान दूरी पर निर्मित किया गया है। इनके छज्जे साधारण प्रकार के सादे हैं। मन्दिर का मुख्य प्रवेश द्वार दक्षिण दिशा में है, परन्तु अब इसे बन्द करके एक आले का स्वरूप प्रदान कर दिया गया है। प्रवेश के द्वार के विकल्प के रूप में पूर्व दिशा में एक छोटा प्रवेश द्वार बनाया गया है। परन्तु प्रवेश द्वार में हुए इस परिवर्तन का कारण अज्ञात है। मन्दिर में प्रवेश द्वार के सामने मध्य स्थान पर एक मण्डप स्थित है (चित्र सं०-33)। यह मण्डप स्तम्भों पर आधारित एक छतरी से ढका हुआ है। मण्डप में नृत्यरत भैरव की मूर्ति स्थापित है।

बेग्लर ने रानीपुर झरियल के इस योगिनी मन्दिर का काल निर्धारण 8वीं सदी ईसवी में किया है।[2] केदारनाथ महापात्र ने इसको लगभग 8वीं सदी में निर्मित होने का उल्लेख किया है।[3] इस मन्दिर के अवशेष यह प्रदर्शित करते हैं कि यह स्थान पूर्व मध्य काल में ताँत्रिक उपासना का एक केन्द्र था। योगिनी कौल बौद्ध धर्म के वज्रयानियों से प्रभावित था। इसकी उत्पत्ति उड़ीसा के सीमावर्ती क्षेत्रों में हुई और प्रसार उड़ीसा एवं मध्य भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में हुआ। रानीपुर झरियल के भू-भाग पर 8वीं सदी से सोमवंशीय राजाओं का अधिकार आरम्भ हुआ। सम्भवतः इसी वंश के आरम्भिक काल के किसी शासक ने इस मन्दिर का निर्माण करवाया होगा, परन्तु उनका नाम निश्चित कर पाना संभव नहीं है।

कनिंघम ने इस मन्दिर का निर्माण काल 9वीं सदी माना है।[4] विद्या दहेजिया कहती हैं कि इस मन्दिर का काल निर्धारण केवल मूर्तिकला के आधार पर ही सम्भव नहीं है। मन्दिर के छज्जे, साधारण अलंकरण एवं मूर्तियों के साथ हुए अंकन इस बात को स्पष्ट करते हैं कि यह हीरापुर के योगिनी मन्दिर के बाद निर्मित है। इनकी मूर्तियों में प्रभामण्डल का न होना ही यह स्पष्ट करता है कि यह मन्दिर 9वीं सदी के बाद शीघ्र ही निर्मित हुआ होगा।[5]

उपरोक्त विभिन्न मतों द्वारा इस मन्दिर का काल निर्धारण हीरापुर के योगिनी मन्दिर के बाद किया गया है। विभिन्न तर्कों पर आधारित यह काल निर्धारण सर्वथा उपयुक्त है। परन्तु काल के निर्धारण में एक निश्चित मत कनिंघम के अतिरिक्त किसी ने नहीं दिया है। इस मन्दिर के कला, स्थापत्य, धार्मिक स्थितियों एवं विभिन्न विद्वानों के विचारों के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि हीरापुर का मन्दिर 10वीं सदी के आरम्भिक काल में निर्मित हुआ होगा तथा रानीपुर झरियल का मन्दिर उसके पश्चात् सम्भवतः 10वीं सदी के मध्य काल में निर्मित हुआ होगा।

---

1. वाल्टरर इलियट, वही, पृ० 20
2. जे० डी० बेग्लर, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इंडिया रिपोर्ट**, जिल्द 13, पृ० 132
3. केदारनाथ महापात्र, **उड़ीसा हिस्टोरिकल रिसर्च जर्नल**, जिल्द 2, नं० 2, पृ० 38
4. अ० कनिंघम, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट**, जिल्द 19, पृ० 73
5. विद्या दहेजिया, **आर्ट इन्टरनेशनल**; मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 15

चार्ल्स फाब्री[1] इस मन्दिर के विशेषताओं के बारे में कहते हैं, "रानीपुर झरियल का यह मन्दिर हीरापुर मन्दिर की तुलना में परवर्ती काल का आकार में बड़ा एवं विशेषता में कुछ कम है। इस मन्दिर में एक भी सौन्दर्यपूर्ण मूर्ति नहीं है। यहाँ बाह्य दीवाल में कोई भी मूर्ति स्थापित नहीं है। मन्दिर का मूल द्वार भी छज्जे से आच्छादित था जो अब नहीं है। मन्दिर के द्वार के दोनों ओर दो छोटी संरचनायें हैं। दाहिने ओर की संरचना विशुद्ध उड़ीसा कला की विशेषताओं के साथ निर्मित है। इसमें शिखर को गोल पत्थर के आमलक से बनाया गया है परन्तु शीर्ष भाग अब नहीं है जबकि द्वार के बायें ओर की संरचना द्रविड़ कला विशेषताओं के साथ निर्मित है। इसमें भी शीर्ष भाग का अवशेष नहीं प्राप्त होता। यहाँ उड़ीसा एवं द्रविड़ कला विशेषताओं से युक्त संरचनाओं को एक साथ सम्भवतः सामंजस्य स्थापित करने हेतु निर्मित किया गया है। उड़ीसा के दक्षिणी भाग में तेलुगुभाषी लोगों का बाहुल्य था। आन्ध्र की ओर योगिनी कौल उपासना जनसाधारण में विशेष प्रचलित थी। रानीपुर आन्ध्र की सीमा के समीप है तथा उड़िया इतिहास भी आन्ध्र के साथ समाहित है। सम्भवतः इन्हीं प्रभावों के फलस्वरूप इन संरचनाओं का निर्माण हुआ। उड़ीसा एवं आन्ध्र प्रदेश, दोनों ही स्थानों पर बौद्ध तंत्र प्रभावशाली रहा है। एक समय उड़ीसा में शक्ति एवं शैव सम्प्रदाय अत्यधिक प्रभावशाली था, परन्तु इनको योगिनयों से सम्बन्धित होने का कोई प्रमाण नहीं मिलता।"

———

1. चार्ल्स फाब्री, **हिस्ट्री आफ आर्ट आफ उड़ीसा**, पृ० 64-86

5
मूर्तिकला

1. उत्तर प्रदेश—रिखियां एवं लोखरी

2. मध्य प्रदेश—खजुराहो, भेड़ाघाट, हिंगलाजगढ़, शहडोल नरेसर ।

3. उड़ीसा—हीरापुर एवं रानीपुर झरियल ।

मध्यकालीन भारत के प्रत्येक भू-भाग पर शिल्पियों ने मूलतः राज्य संरक्षण में तथा कभी-कभी स्वतंत्र रूप में भी मूर्तियों का निर्माण किया। मध्यकालीन मूर्तिकला में स्पष्ट रूप से विभिन्न सम्प्रदायों एवं शैलियों की विशिष्टता परिलक्षित होती है। इस शैली को विभिन्न क्षेत्रों की विशिष्ट स्थानीय शैलियों ने प्रभावित किया है। जिसके उदाहरण विभिन्न स्थानों से प्राप्त मूर्तियों में मिलते हैं। मध्यकालीन भारतीय मूर्तिकला में योगिनियों की मूर्तियां योगिनी कौल उपासना के अनुरूप विशिष्ट शैलीगत विशेषताओं के साथ निर्मित हैं।

विभिन्न क्षेत्रों के योगिनी मन्दिर विभिन्न कालों में राज्य संरक्षण में निर्मित हुए। इन मंदिरों एवं प्राप्त योगिनी मूर्तियों में राजा के विचारों का समावेश होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया थी। प्रत्येक योगिनी मन्दिर की मूर्तियां विशेष काल एवं स्थान की मूर्तिकला पर प्रकाश डालती हैं। ये मूर्तियां कला ग्रन्थों में वर्णित परम्पराओं के आधार पर मध्यकालीन धार्मिक प्रतीकों के रूप में विद्यमान हैं। मूर्तियों की कला, भाव-भंगिमा, आभूषण, वस्त्र एवं केश सज्जा विभिन्न क्षेत्रीय कला विशेषताओं को प्रदर्शित करती हैं। अधिकांश योगिनी मूर्तियों को देखने से योगिनी कौल उपासना की विभिन्न गुप्त क्रियाओं पर प्रकाश पड़ता है। इस प्रकार की मूर्तियां उपासना के विभिन्न चरणों के प्रतीक स्वरूप निर्मित है। इनके साथ ही योगिनी मूर्तियों में हिन्दू, बौद्ध एवं जैंन देवियां भी अपनी शैलीगत विशिष्टताओं के साथ हैं। इस प्रकार की मूर्तियों के उदाहरण विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त योगिनी मूर्तियों में मिलते हैं। प्राप्त सभी स्थानों की योगिनी मूर्तियों में हीरापुर की मूर्तियां एक उदाहरण हैं। हीरापुर का योगिनी मन्दिर भौमकरों द्वारा निर्मित है जिसमें इस शासन काल की शैली का स्पष्ट प्रभाव है। उड़ीसा के भौमकरों का कला एवं स्थापत्य के क्षेत्र में अपना अलग स्थान रहा है। इन्होंने कला एवं स्थापत्य के क्षेत्र में अपना विशिष्ट इतिहास बनाया। यहां की कला में सुकोमलता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती

है। हीरापुर मन्दिर का छोटा आकार, प्रस्तर पर हुए अलंकरण, आलों में मूर्तियों की समुचित स्थापना, आकर्षक भंगिमायें आदि दर्शकों को अनायास आकृष्ट करती हैं। यहां इस भव्य एवं आकर्षक कला में अद्भुत शक्ति का भास होता है। इस मन्दिर की सम्पूर्ण कला स्वयं में एक उदाहरण है। यह भौमकरों द्वारा निर्मित है और उस काल की कला को प्रदर्शित करती है। उड़ीसा के भौमकरों का कला एवं स्थापत्य के क्षेत्र में अलग विशिष्टता एवं प्रतिमान था। यह मन्दिर भौमकरों के शासन के अन्तिम काल में निर्मित हुआ है, अतः यहां कला की पराकाष्ठा को शिल्पियों ने प्रदर्शित करने का प्रयास किया है। हीरापुर की मूर्तियों के भाव, आभूषण, भंगिमायें एवं बाल संवारने की कला एक-दूसरे से भिन्न है, परन्तु यह सब मिलकर एक भव्य, कोमल एवं लचकदार कला को प्रदर्शित करते हैं। मूर्तियों में विभिन्न प्रकार के केश विन्यास यथा बाल संवारना, जूड़े बनाना इत्यादि को "केशपाश" कहा गया है।[1] इनमें सिर के पृष्ठभाग पर ढीले गांठ पंख जैसे अलंकरण, जंजीर की बनावट, लौ आकार में अलंकरण, गांठयुक्त प्रभामण्डल आदि अनेक केश विन्यास मूर्तियों में प्रदर्शित हैं। योगिनी मूर्तियों के विभिन्न प्रकार के केश विन्यास "एक अध्ययन का विषय" हो सकते हैं। मूर्तियों में सिर, कान, नाक, कलाई, बांह, कमर एवं पैर के अलंकरण शिल्पी के कलातमक भावनाओं को प्रदर्शित करते हैं। यहां की मूर्तियां उड़ीसा के नारी सौन्दर्य वेशभूषा एवं अलंकरणों से युक्त हैं। ये भौमकारों की विशिष्ट शैली के दर्पण के रूप में विद्यमान है योगिनी मूर्तियां अपने राज्य की समकालीन कला एवं विशेष धार्मिक सम्प्रदाय पर प्रकाश डालती हैं।

कलिंग कला में कौल एवं काम सम्बन्धी मूर्तियों तथा विभिन्न प्रकार के अलंकरणों से युक्त स्त्री-पुरुषों का अंकन सामाजिक तथा आध्यात्मिक दृश्यों के परिपेक्ष में किया गया है। स्थापत्यों में विभिन्न प्रकार के पशु-पक्षी तथा फूल-पत्तियों के ज्यामितीय अलंकरण किए गये हैं। मूर्तियों के सुगठित शरीर, नुकीली नाक, उभरे हुए गोल स्तन, फूले हुए कपोल, अधखुली आंखें तथा मुस्कराते हुए चेहरे सिर से पैर तक अलंकृत हैं। इनमें मूर्ति के प्रत्येक भाग पर भव्य कलात्मकता प्रदर्शित की गई है। यहां कोई भी स्थान रिक्त नहीं है। योगिनियों के स्वरूपों की रचना स्वर्गिक देवियों की तरह की गई है। इस प्रकार की कलात्मक विशेषता कलिंग कला में सर्वदा दिखाई पड़ती है। स्थापत्य की दृष्टि से उड़ीसा के योगिनी मन्दिर सादे हैं, परन्तु मूर्तिकला की दृष्टि से वे बड़े कलात्मक हैं। उड़ीसा का ही एक दूसरा रानीपुर झरियल का योगिनी मन्दिर भी विशेष प्रकार का है। यह मन्दिर सोमवंशी शासकों द्वारा निर्मित किया गया है। इस मन्दिर की योगिनी मूर्तियां भारतीय नृत्य के भावों को प्रदर्शित करती हुई निर्मित हैं। उड़ीसा के योगिनी मन्दिर बिना मूर्तियों के व्यर्थ हैं।

कला एवं संस्कृति के पोषक कल्चुरी वंश के राजाओं ने अपने कला के विभिन्न स्वरूपों का विस्तार इलाहाबाद से जबलपुर तक किया। कल्चुरी कला की विशिष्टता भेड़ाघाट के योगिनी मूर्तियों में स्पष्ट परिलक्षित होती है। डा० निहार रंजन रे[2] ने कल्चुरी कला के सम्बन्ध में कहा है—

1. के० कृष्णमूर्ति नागार्जुनकोण्डा : ए कल्चरल स्टडी, पृ० 119
2. आर० के० शर्मा, दी टेम्पुल आफ चौंसठ योगिनी ऐंट भेड़ाघाट, पृ० 44-48

"कल्चुरियों ने मध्यकालीन हैहया कला के चरित्रात्मक आकृतियों पर ही नहीं अपितु स्वरूपों के माध्यम को भी प्रभावित किया है। इनमें उत्तर भारतीय कला के आधार पर स्थानीय कला के मूल तत्त्वों का गहराई से अंकन किया गया है। इसमें नए प्रकार के चेहरे चौकोर आकृति में बड़े मुख, उभरे कपोल, बन्द आंखें एवं मांसल गठीले शरीर का अंकन अपनी निजी विशेषताओं के साथ हुआ है। मूर्तियों की आकर्षक बनावट चारों ओर गहराई से खुदी रेखाओं से नियन्त्रित प्रतीत होती है। कुहनी एवं घुटने पर मूर्तियों के मोड़ तथा जोड़ आकर्षक हैं तथा इनके चेहरे, नुकीली नाक एवं डोढ़ी से मध्यकालीन कला स्पष्ट परिलक्षित होती है। सहायक आकृतियों को एक साथ विभिन्न प्रकार से मोटी एवं उभरी हुई अंकित किया गया है। हैहया कला की प्रमुख विशेषतायें उनके अलंकरणों से स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होती है। यहां किसी भी स्थान को रिक्त नहीं छोडा गया है। पुरुष एवं स्त्रियों के चित्रण उनके अलंकरण एवं वास्तुजनक वस्तुओं के आयात भारीपन के साथ गोलाईनुमा बने हैं। अत्यधिक घने अलंकरणों से यह प्रतीत होता है कि सम्पूर्ण रचना इनके भार से गिरकर टुकड़ों में विभक्त हो जाएगी।"

मध्य भारत में कला एवं स्थापत्य के क्षेत्र में चन्देलों ने जिस शिल्प का उत्सर्जन किया, वह अविस्मरणीय है। मूर्तियों का समन्वित प्रदर्शन, धर्म सम्बन्धी प्रतीकात्मक स्वरूप तथा काम सम्बन्धी उच्च आध्यात्मिक स्वरूपों के प्रभाव मध्यकालीन मूर्तिकला की पराकाष्ठा को प्रदर्शित करते हैं। चन्देल कला ने नई धारा के साथ एक नया कलात्मक स्वरूप प्रदान करने में सफलता प्राप्त की है। एक सीमित क्षेत्र में सौ सालों में विकसित कला के उदाहरण चन्देलों द्वारा निर्मित खजुराहो के मन्दिरों की विशेष स्थानीय शैली की तुलना बंगाल के पालों एवं उड़ीसा के गंगों की दीर्घकालीन कला शैली से की जा सकती है।[1]

चन्देल शिल्पियों ने जो साधारण विशेषता प्रदर्शित की है उनमें मूर्तियां खड़ी हैं तथा उनकी भाव-भंगिमा अपरिमित है। अलंकरण नीचे से ऊपर की ओर हुए हैं जो उगते हुए वस्तु की तरह प्रतीत होते हैं। मूर्तियों में विन्यास घुमावदार, शरीर का निम्न भाग सीधा तथा भुजाओं का उपयोग नितम्ब एवं स्तन को उभारने हेतु किया गया है। भुजाओं एवं आयुधों के साथ भाव-भंगिमाओं का उपयुक्त प्रदर्शन किया गया है। इनमें गति का आभास कभी भी सीधी रेखा में नहीं होता, बल्कि इन्हें तीन आयामों के साथ प्रदर्शित किया गया है। यह कला विशेष भावों एवं स्वरूपों पर आधारित होती है।[2]

चन्देल कला की मूर्तियों में चेहरे अण्डाकार एवं ठोढ़ी घुमी हुई प्रतीत होती है। इनमें नुकीले नाक के साथ नासिका ओठ के चौडाई तक फैली हुई है। इनकी सबसे प्रमुख विशेषता अधखुली

---

1. एच०सी० दास, **तान्त्रिसिज्म** पृ० 60
2. ओ०सी० गांगुली, **दी आर्ट आफ चन्देलाज्**, पृ० 25

आंखें एवं धनुषाकार भौहें हैं। भौहें लम्बी एवं घुमावदार हैं तथा कभी-कभी एक दूसरे को स्पर्श भी करती हुई प्रतीत होती है। चन्देल कला को भौंह के माध्यम से पहचाना जा सकता है।[1] इनमें अन्य विशेषता बालों के अलंकरण में परिलक्षित होती हैं। बालों के जूड़े ढीले बंधे हुए हैं तथा पुरुषों के बाल मध्य स्थान पर दो सीधी रेखा में मुड़े (घुघराले) हैं। नीचे लटके हुए बाल समानान्तर तथा माथे पर लटकते हुए हैं। शिव या शैव धर्म से सम्बन्धित मूर्तियों में अनेक कलात्मक मोड़ से युक्त चटाईदार केश कुण्डल अलंकृत हैं। कभी-कभी सिर पर सामने सेतु की तरह अलंकरण मिलते हैं। साधारणत: शिव के केश विन्यास में चटाईदार गाँठ शंखाकार स्वरूप में होते हैं। स्त्रियों, अप्सराओं एवं नायिकाओं के बालों में रेखायें नहीं मिलती तथा इनके बाल टोपी सदृश अलंकृत हैं। भौहों के किनारे मोटी छाया बनी होती है। अधिकांश स्त्री मूर्तियों पर चुनटयुक्त पतले दुपट्टे बने हुए हैं, जो कन्धे एवं स्तन के परिधि से होकर नीचे लटकते रहते हैं। यहां तक कि नग्न कुमारियों के साथ ऐंठनयुक्त दुपट्टे प्रदर्शित किए गए हैं। यहां विभिन्न प्रकार के दुपट्टों का अंकन आकर्षक एवं सन्तुलित शरीर की ओर अचानक ध्यान आकृष्ट करता है।

भारत के विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त योगिनी मूर्तियाँ भौम, सोमवंशी, कल्चुरी एवं चन्देल वंश के विभिन्न कालों की कला को प्रदर्शित करती हैं। प्रत्येक शैली अपनी आँचलिक मान्यताओं एवं परम्पराओं पर आधारित है, किन्तु एक शैली का दूसरे से घनिष्ट सम्बन्ध प्रतीत होता है। विभिन्न प्रकार की शैलीगत विशेषतायें विभिन्न स्थानों से प्राप्त योगिनी मूर्तियों में स्पष्ट परिलक्षित होती हैं। यहां योगिनी मूर्तियों का निर्माण योगिनी कौल उपासना के परिपेक्ष्य में किया गया है। विभिन्न योगिनी मूर्तियां योगिनी कौल उपासना के विभिन्न चरणों एवं योगियों के स्वरूपों को प्रदर्शित करती हैं। इस प्रकार के उदाहरणों में भेड़ाघाट की "कामदा" योनिपूजा, "सर्वतोमुखी"—चक्रपूजा, "इन्द्रजाली"—जादुई शक्ति, "सिंह-सिंहा" मांस भक्षण और "विभत्सा"—मैथुन क्रिया को प्रदर्शित करती है। इसी प्रकार हीरापुर में योगिनी मूर्तियां सुरापान करती हुई, धनुष चलाती हुई तथा शव साधना को प्रदर्शित करती हुई प्रदर्शित की गई हैं। शहडोल तथा कुछ अन्य मन्दिरों से शव साधना, सुरापान एवं अन्य लैंगिक क्रियाओं से सम्बन्धित प्रतीक स्वरूप अनेक योगिनी मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं।

यहां योगिनी मूर्तियों के निर्माण में मानवीय मुख एवं पशु-पक्षियों के मुख प्रयुक्त हुए हैं। इस प्रकार के निर्माण विभिन्न आँचलिक मान्यताओं एवं परम्पराओं पर आधारित हैं। मूर्तियों के अलंकरण भी कौल उपासना के ही अन्तर्गत हुए प्रतीत होते हैं। निक डगलस[2] ने इन अलंकरणों के सम्बन्ध में कहा है कि योगिनियों के अलंकरण प्रतीकात्मक हैं। यहाँ सिर पर मुकुट-अक्षोभ्य, हार-रत्नसम्भव, कानों में कुण्डल-अमिताभ, बाजूबन्द-वैरोचन और मेखला-अमोघसिद्धि को प्रदर्शित करते हैं। इनके गले में नर-मुण्ड या कटे हुए मानव सिर विकास एवं संहार के विभिन्न स्वीकृत प्रतीकों के रूप है। जनार्दन मिश्र

1. एच०सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 60
2. निक डगलस, **तंत्रयोग**, पृ० 29

इस सन्दर्भ में कहते हैं कि यह शब्द ब्रह्मवाक् का स्थूल प्रतीक वर्णमाला है, जो सृष्टि का प्रतीक है।[1] योगिनियों के सिर पर स्थित कपाल देवी के संहारात्मक स्वरूप का प्रतीक है। इनके हाथ में घण्टा के सन्दर्भ में दुर्गा सप्तशतो में कहा गया है कि यह पापों से रक्षा करता है तथा अपने शब्द से जगत को गुंजायमान करके दैत्यों के तेज का विनाश करता है।[2] विभिन्न देवियों के आसन या वाहन के रूप में शव एवं प्रेत प्रदर्शित किए गए हैं। तांत्रिक मान्यताओं के अनुसार महाकाली आदि शक्ति के रूप में निष्क्रिय शिव पर संयोग की मुद्रा में स्थित होती है।[3] इस प्रकार विभिन्न मान्यताओं पर आधारित योगिनियों के अलंकरण, आयुध, वाहन एवं स्वरूप प्रदर्शित किए गए हैं। योगिनियों के चेहरे पर भव्य मुस्कान महासुख को प्रदर्शित करती है। योगिनियों के नृत्य एवं गायन के सन्दर्भ में विचार व्यक्त करते हुए निक डुगलस ने कहा है कि, यहां पर गीत-मंत्र को तथा नृत्य-ध्यान को प्रदर्शित करता है, अतः योगिनियां मंत्र तथा ध्यान के रूप में नृत्य एवं गायन करती हैं।[4]

योगिनी मूर्तियों में योगिनियां सर्वनारी गुण सम्पन्न, आकर्षक देहयष्टि के साथ स्त्री सौन्दर्य की पराकाष्ठा को प्रदर्शित करती हैं। अधोवस्त्र एवं अलंकरणों से सुशोभित नग्न कुमारियों की तरह इनका अंकन मन्दिरों के वातावरण को उत्तेजक बनाने में सहायक होता है। योगिनी मूर्तियों में नारियों का अंकन विभिन्न आंचलिक प्राकृतिक स्वरूपों में किया गया है। जिससे विभिन्न क्षेत्रों एवं कालों के संस्कृति पर प्रकाश पड़ता है।

इस अध्याय में विभिन्न स्थानों एवं मन्दिरों की योगिनी मूर्तियों का क्रमशः वर्णन किया गया है। यहां उन्हीं स्थानों एवं मन्दिरों का उल्लेख किया गया है, जहाँ अध्ययन योग्य मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। प्राप्त मूर्तियाँ उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं उड़ीसा के विभिन्न स्थानों से सम्बन्धित हैं।

उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश के विभिन्न स्थानों यथा—वाराणसी, रिखियाँ, दुधई एवं लोखरी से योगिनी मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। उत्तर प्रदेश में बांदा तथा उसके पास ही रिखियां एवं लोखरी में मन्दिरों के अवशेषों से यह स्पष्ट होता है कि बांदा योगिनी कौल उपासना का प्रमुख केन्द्र रहा है। उत्तर प्रदेश में किसी भी योगिनी मन्दिर की पूर्ण संरचना नहीं प्राप्त हुई है। सभी स्थानों पर भग्नावशेष ही मिलते हैं। वाराणसी का योगिनी मन्दिर स्थानान्तरित है एवं यहाँ मन्दिर में मात्र तीन मूर्तियाँ अवशिष्ट हैं। भैरव की मूर्ति में शैलीगत विशेषताएं अस्पष्ट हो गई हैं तथा उसके ऊपर रंग लगा दिए गए हैं। काली एवं दुर्गा की प्रतिमाओं को वस्त्र एवं अलंकरणों के साथ ही पीतल के मुखौटों से ढंक दिया गया है जिससे

---

1. जनार्दन मिश्र, **भारतीय प्रतीक विद्या**, पृ० 194
2. रविन्द्रनाथ मिश्र, **तंत्रकला में प्रतीक**, शोध-प्रबन्ध, पृ० 176
3. उपर्युक्त, पृ० 101
4. निक डुगलस, **तंत्रयोग** पृ० 25-29

मूर्तियों का अध्ययन कर पाना सम्भव नहीं है। शेष मूर्तियाँ स्थानान्तरित हैं जिनके स्थान अब अज्ञात हैं। अत: यहाँ केवल उन्हीं मूर्तियों का वर्णन सम्भव है जो अध्ययन हेतु सुलभ हो सकी हैं। रिखियाँ में पत्थर काटकर चौकोर संरचना निर्मित की गई है, जहाँ शिलापट्ट पर योगिनियाँ उत्कीर्ण हैं। दुधई में वृत्ताकार संरचना के आलों में मूर्तियाँ स्थापित थी, जो अब स्थानान्तरित हो गई हैं। लोखरी नामक स्थान पर वृक्ष के नीचे योगिनी मूर्तियाँ स्थापित हैं एवं यहाँ मन्दिर स्थापत्य के अवशेष नहीं मिलते। विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त मूर्तियों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि उत्तर प्रदेश में योगिनी कौल उपासना 9वीं-10वीं सदी तक प्रभावी थी।

1. रिखियाँ :

इस स्थान से विशिष्ट प्रकार की योगिनी मूर्तियां प्राप्त हुई हैं, जिसके उदाहरण अन्यत्र नहीं मिलते। यहां पत्थर के बड़े-बड़े चौकोर शिलापट्ट में योगिनियां उत्कीर्ण हैं। प्रत्येक शिलापट्ट की सतह पर चार की संख्या में योगिनियां उत्कीर्ण हैं। शिलापट्ट के सादे सतह पर योगिनी मूर्तियों को पत्थर काटकर निर्मित किया गया है। योगिनियां यहां खड़ी एवं बैठी हुई प्रदर्शित हैं। ये दो अथवा चार भुजाओं से युक्त हैं तथा उनके आयुध के रूप में वज्र, कड़ा धनुष, तर्कस, खड्ग एवं ढाल आदि निर्मित हैं।

एक शिलापट्ट पर निर्मित चामुण्डा का सिर खण्डित है एवं उसके चारों हाथों में पात्र, तरकस एवं खड्ग हैं। चामुण्डा कंकाल सदृश एक शव के ऊपर नृत्य कर रही है। चामुण्डा के साथ ही दो योगिनियों को नृत्यरत तथा अन्य दो को ऊँची पीठिका पर बैठे हुए प्रदर्शित किया गया है। योगिनियां शिलापट्ट पर क्रमश: अगल-बगल विद्यमान हैं। इसी प्रकार योगिनियों का अंकन अन्य शिलापट्टों पर भी किया गया है। इन शिलापट्टों से यह प्रतीत होता है कि इन्हें चौकोर संरचना में व्यवस्थित करने हेतु निर्मित किया गया है। मूर्तियों के पृष्ठभाग में शिलापट्ट सादे हैं एवं यहां अलंकरण का अभाव है। योगिनी के साथ ही पीठिका पर सहायक आकृतियों का भी अंकन हुआ है। सहायक आकृतियों को वाद्य यंत्रों के साथ प्रदर्शित किया गया है। कहीं-कहीं योगिनियों के साथ वाहन भी स्पष्ट होते हैं। एक अन्य शिलापट्ट पर एक सिंह सदृश मुख वाली योगिनी मूर्ति है तथा उसके दाहिने जांघ पर सूअर का बच्चा लिए है। अनेक योगिनियाँ यहां अपने विभिन्न वाहनों पर भी विराजमान प्रदर्शित हैं। यहां योगिनियों के वाहन के रूप में उल्लू, सूअर, मोर एवं शव आदि प्रदर्शित हैं। यहां पर प्रभामण्डल एवं सहायक आकृतियों का भी अभाव है जो उड़ीसा के मन्दिरों की याद दिलाते हैं। जब यह मन्दिर 1909 ई० में प्रकाश में आया उस समय वहां 10 शिलापट्ट थे किन्तु अब अनेक स्थानान्तरित हो चुके हैं।

इस प्रकार की शिलापट्ट पर अंकित योगिनी मूर्तियां अन्यत्र नहीं मिलतीं। शिलापट्ट बलुए पत्थर से निर्मित है। मूर्तियों का शिल्प साधारण है। इन मूर्तियों के शिल्पगत विशेषताओं के आधार

पर इन्हें 10वीं सदी के लगभग निर्मित कहा जा सकता है। शिलापट्ट पर उत्कीर्ण अन्य योगिनियों को पहचानना कठिन हैं (चित्र-16 एवं 35)।

2. दुधई :

ललितपुर जिले में स्थित इस योगिनी मन्दिर के आलों में सम्प्रति कोई भी योगिनी मूर्ति नहीं है। मैंने मन्दिर के आस-पास जंगल से कुछ योगिनी मूर्तियाँ प्राप्त की किन्तु उनकी पहचान नहीं हो पायी है। ये मूर्तियां खण्डित प्राप्त हुई हैं, यद्यपि इनका निर्माण अन्य योगिनी मूर्तियों की तरह ही हुआ है। इनमें सादे प्रभामण्डल बने हुए हैं। योगिनियां अपने पीठिका पर ललितासन में विराजमान हैं तथा पैरों के नीचे उनके वाहन अंकित हैं। अलंकरण के रूप में सिर पर मुकुट, कानों में कुण्डल, गले में हार एवं माला, बाहों में बाजूबन्द तथा कलाई में कंगन सुशोभित हो रहे हैं। कमर में करधनी के साथ ही उन्होंने अधोवस्त्र भी धारण कर रखा है।

यहां पर एक ऐसी योगिनी मूर्ति भी प्राप्त हुई है जिसके कमर के नीचे का भाग खण्डित है एवम् उसकी दो भुजाएं अवशिष्ट हैं। योगिनी के दोनों हाथों में नरमुण्ड है। इसी प्रकार की एक अन्य योगिनी मूर्ति में देवी ललितासन में पीठिका पर विराजमान हैं। उसका चेहरा सौम्य है एवं आंखे आधी खुली हुई हैं। एक हाथ ऊपर की ओर उठा हुआ है जिसमें वह पात्र धारण की है। दूसरा हाथ जांघ पर स्थित है। पीठिका पर वाहन अस्पष्ट है। तीसरी योगिनी मूर्ति के नीचे का ही भाग अवशिष्ट है। इसमें योगिनी ललितासन में पीठिका पर विराजमान है तथा पैर के नीचे दाएं ओर स्त्री सहायिका हाथ जोड़कर बैठी है। पीठिका पर बाएं ओर वाहन के रूप में अश्व उत्कीर्ण है।

इसी प्रकार अन्य खण्डित मूर्तियां भी प्राप्त हुई हैं, परन्तु वे अध्ययन की दृष्टि से सहायक नहीं हैं। यहां इस प्रकार की केवल कुछ मूर्तियों का ही उल्लेख किया जा रहा है। दुधई से प्राप्त योगिनी मूर्तियां चन्देल कालीन कला विशेषताओं को प्रदर्शित करती हैं। खण्डितावस्था में प्राप्त मूर्त्तियों से मन्दिर की मूर्तिकला पर प्रकाश पड़ता है। यहां योगिनियां सौन्दर्य-युक्त एवं आकर्षक हैं। इनके चेहरे पर कोमलता का भाव है एवं चेहरा गोल है। योगिनियों के नेत्र आधे खुले हुए हैं। इनके स्तन भारी एवं गोल हैं तथा इनका प्रदर्शन प्रमुखता से हुआ है। योगिनियों की देहयस्टि आकर्षक है। कला विशेषताओं के साथ धंग राजा द्वारा निर्मित इन मूर्तियों का काल 9वीं सदी के उत्तरार्द्ध या 10वीं सदी के आरम्भ में निर्धारित किया जा सकता है (चित्र-36, 37, 38)।

3. लोखरी :

बांदा जिले के मऊ तहसील स्थित लोखरी नामक स्थान पर योगिनी मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। यह स्थान मऊ तहसील से उत्तर-पूर्व दस मील की दूरी पर स्थित है। इस स्थान के दक्षिण ओर विन्ध्य पर्वत तथा दक्षिण-पूर्व की ओर एक किला स्थित है। किले के पूर्व दिशा में एक वृक्ष के नीचे पत्थर का चबूतरा है जिसपर ग्रामीणों ने योगिनी मूर्तियां स्थापित किया है। इन मूर्तियों पर योगिनियों के नाम

उत्कीर्ण नहीं हैं, परन्तु ग्रामीणजन इन्हें देवी कहकर इनकी उपासना करते हैं। आजकल यहां कुल बीस मूर्तियाँ अवशिष्ट हैं।[1] यहाँ की कुछ पशु मुखयुक्त योगिनी मूर्तियां रिखियां के योगिनी मन्दिर में स्थानान्तरित हो गई हैं। एक योगिनी मूर्ति लखनऊ संग्रहालय में सुरक्षित है।

लोखरी से प्राप्त प्रत्येक योगिनी मूर्ति लगभग पांच फुट ऊँची बलुवे पत्थर से निर्मित है। उड़ीसा के योगिनी मन्दिरों को तरह यहाँ भी सादे पत्थर में योगिनियों एवं उनके वाहनों को काटकर बनाया गया है। इनका शिल्प उड़ीसा के योगिनियों के समान है।[2] यहां योगिनियों एवम् उनके वाहनों के अंकन के अलावा शेष पीठिका सादी है। यहां पर किसी भी मूर्ति में प्रभामण्डल नहीं मिलता। यहां की योगिनियां पशु-पक्षियों के मुखयुक्त हैं तथा ये हीरापुर की योगिनियों की तरह सौन्दर्ययुक्त एवं आकर्षक नही है। यहाँ योगिनियों के पेट गोल एवं स्तन भारी हैं। अधिकांश योगिनियां अर्धपर्यंकासन मुद्रा में पीठिका विराजमान हैं। इनका एक पैर आसन की ओर मुड़ा हुआ है तथा दूसरा वाहन या जमीन पर स्थित है। यहां के योगिनियों की अपनी विशिष्टता है तथा एकाध को छोड़कर शेष पशु-पक्षी सदृश मुख वाली हैं।

यहां से एक खरगोश के समान मुखयुक्त प्रतिमा प्राप्त हुई है। इस प्रकार की योगिनी मूर्ति अन्य किसी भी स्थान से प्राप्त नही होती। इस मूर्ति में पीठिका पर नीचे छोटे-छोटे खरगोश बने हुए हैं। योगिनी के एक हाथ में सिर का बाल एवं दूसरे हाथ में पात्र है (चित्र-39)। यह ध्यान मुद्रा में घुटने पर योगपट्ट के साथ बैठी हुई है।

यहाँ की एक अन्य सर्प के समान मुखयुक्त योगिनी मूर्ति विशिष्ट शैली में निर्मित है। अन्य मन्दिरों में मानवीय चेहरों से युक्त योगिनियों के सिर के पीछे सर्प के फण को प्रदर्शित किया गया है। यहां पर पूरा शीर्ष भाग ही सर्प के फण के समान है। योगिनी का एक पैर पीठिका पर उत्कीर्ण हाथी के ऊपर है। पीठिका पर दूसरी ओर एक सर्प उत्कीर्ण है (चित्र-40)।

अश्व सदृश मुखयुक्त योगिनी मूर्ति में योगिनी भेड़िया सदृश पशु के पीठ पर विराजमान है। यहाँ योगिनी के स्तन गोल एवं भारी हैं। योगिनी के एक हाथ में मछली एवं दूसरे हाथ में कोई लम्बी वस्तु है। सम्भवतः योगिनी इसे खा रही है (चित्र सं०-41)। अन्य अश्व सदृश मुखयुक्त योगिनी मूर्ति में योगिनी के घुटने पर अश्व मुखी बच्चा बैठा हुआ है। योगिनी एक हाथ से बच्चे को पकड़ी है तथा दूसरे हाथ में खप्पर है। योगिनी पीठिका पर लेटे हुए मानव के शव पर बैठी है।

---

1. ए० कनिंघम, **आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट**, भाग 10, पृ० 15—यहाँ पर 23 मूर्तियों का उल्लेख किया गया है; ए० फ्यूरर, **दि मानुमेण्टल एण्टिक्वीटीज**, पृ० 154—यहाँ 24 मूर्तियों के प्राप्त होने का उल्लेख किया गया है।

2. विद्या दहेजिया, **आर्ट इंटरनेशनल**, मार्च-अप्रैल, 1982, पृ० 16

लखनऊ संग्रहालय में यहां की एक अश्व सदृश मुखयुक्त योगिनी प्रतिमा संग्रहित है। इसमें योगिनी पीठिका पर स्थित शव पर विराजमान है। योगिनी के एक हाथ में खड्ग है, किन्तु दूसरे हाथ की वस्तु अस्पष्ट है (चित्र सं०-42)।

बकरी सदृश मुखयुक्त योगिनी मूर्ति में योगिनी पीठिका पर बैठे हुए बकरी के पीठ पर विराजमान है। उसके एक हाथ में अक्षमाला एवं दूसरे हाथ में पानी का पात्र है (चित्र सं०-43)।

गदहे सदृश मुखयुक्त योगिनी पीठिका पर बैठी हुई है। उसके एक हाथ में मूसल के समान वस्तु है तथा दूसरे हाथ की वस्तु अस्पष्ट है। इस योगिनी का वाहन भी अस्पष्ट है (चित्र सं०-44)।

रिखियां योगिनी मन्दिर में स्थानान्तरित मूर्तियों में एक योगिनी की चार भुजाओं में दो अवशिष्ट हैं। यह ललितासन में बैठी हुई है एवं एक हाथ में शूकर का बच्चा पकड़ी है। इसका शरीर बलिष्ठ है तथा नीचे पीठिका पर वाहन शूकर उत्कीर्ण है। एक अन्य बकरी सदृश मुखयुक्त योगिनी मूर्ति है। यहाँ इस योगिनी का भी वाहन बकरी है।

इसी प्रकार यहां से प्राप्त अन्य योगिनी मूर्तियों में योगिनियों को पशु मुखयुक्त तथा पशुओं को वाहन के रूप में प्रदर्शित किया गया है। यहां के योगिनियों को सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि योगिनियों के मुख जिस पशु के समान हैं, उन्हीं पशुओं को उनके वाहन के रूप में भी प्रदर्शित किया गया है। उदाहरणार्थ गाय मुख युक्त योगिनी का वाहन गाय, भालूमुखी योगिनी का वाहन भालू तथा उसी प्रकार अन्य मूर्तियां भी विभिन्न पशुओं के मुखाकृति एवं वाहनों से युक्त हैं।

विभिन्न पशुओं की मुखाकृति सम्बन्धी योगिनियों के सन्दर्भ में "कौल ज्ञान निर्णय" में इस प्रकार का उल्लेख प्राप्त होता है, "पृथ्वी पर सर्वप्रथम अवतरित होने के पश्चात् योगिनियों ने वहां के जीव-जन्तुओं का स्वरूप धारण कर लिया।[1] इन स्वरूपों में उन्होंने विभिन्न पशुओं, गीदड़, बकरी, बिल्ली, हाथी, मुर्गा, सर्प आदि का स्वरूप धारण किया।" इस प्रकार की योगिनियों का वर्णन "स्कन्द-पुराण"[2] में भी किया गया है, जिसमें आधे से अधिक योगिनियां पशु-पक्षियों के समान मुख वाली हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रकार की योगिनी मूर्तियां उल्लेखनीय ग्रन्थों में वर्णित स्वरूपों के आधार पर निर्मित हुई हैं।

लोखरी से प्राप्त योगिनी मूर्तियों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आस-पास के ही भू-भाग पर कोई योगिनी मन्दिर रहा होगा, यद्यपि इस समय मन्दिर स्थापत्य का कोई भी अवशेष

---

1. प्रबोधचन्द्र बागची (सं०), **कौल ज्ञान निर्णय**, अ० 23
2. के०डी० वेदव्यास (सम्पादित) **स्कन्दपुराण**, काशी खण्ड, अ० 45; चौसठ योगिनियों के आगमन सम्बन्धी वर्णन में उल्लिखित नामावली।

प्राप्त नहीं है। यहाँ से प्रचुर संख्या में प्राप्त योगिनी मूर्तियां स्थापत्य संरचना की ओर स्पष्ट संकेत करती हैं। विभिन्न मूर्तियों के आधार पर विद्या दहेजिया ने इन्हें 10वीं सदी में निर्मित माना है।[1] इस स्थान से प्राप्त एक मूर्ति लखनऊ संग्रहालय में संग्रहित है। वहां इस मूर्ति का काल निर्धारण 11वीं सदी किया गया है। यहां से प्राप्त योगिनी मूर्तियों की कलात्मक विशेषताओं के आधार पर इन्हें उड़ीसा के योगिनी मन्दिरों के समकालीन कहा जा सकता है। उड़ीसा के योगिनी मन्दिर 9वीं-10वीं सदी के मध्य निर्मित हैं। इन आधारों पर लोखरी से प्राप्त मूर्तियों का काल निर्धारण लगभग 10वीं सदी उचित प्रतीत होता है। प्रस्तुत तथ्यों से यह ज्ञात होता है कि लगभग 10वीं सदी के आस-पास लोखरी में योगिनी मन्दिर निर्मित हुआ था।

मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश योगिनी कौल उपासना का भारत में सर्वप्रमुख केन्द्र रहा है। यहां विभिन्न स्थानों से योगिनी मन्दिरों एवं मूर्तियों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। जिन स्थापत्य संरचनाओं में योगिनी मूर्तियां प्राप्त हुई हैं वे खजुराहों एवं भेड़ाघाट नामक स्थानों पर स्थित हैं। बदोह एवं मितावली के योगिनी मन्दिरों में अध्ययन की दृष्टि से उपयोगी मूर्तियां नहीं प्राप्त हो सकी हैं। अतः हम यहां मन्दिरों से प्राप्त मात्र खजुराहों एवं भेड़ाघाट के योगिनी मूर्तियों का ही वर्णन करेंगे। इन मन्दिरों की संरचनाओं के अलावा अन्य स्थानों से भी योगिनी मूर्तियां मिली हैं जो विभिन्न स्थानों एवं संग्रहालयों में सुरक्षित हैं। इस प्रकार की योगिनी मूर्तियां हिंगलाजगढ़, शहडोल और नरेसर नामक स्थानों से प्राप्त हुई हैं। प्राप्त मन्दिरों एवं मूर्तियों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि बदोह, मितावली, खजुराहो एवं भेड़ाघाट के अलावा हिंगलाजगढ़ शहडोल एवं नरेसर में भी योगिनी मन्दिरों का निर्माण हुआ था। इस प्रकार मध्य प्रदेश में कुल सात योगिनी मन्दिरों के अवशेष मिलते हैं जो प्रदेश के विभिन्न स्थानों पर स्थित हैं। उत्तर प्रदेश में बांदा के समान मध्य प्रदेश में भी शहडोल एवं ग्वालियर से दो-दो योगिनी मन्दिरों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। "एक ही स्थान पर आस-पास दो योगिनी मन्दिरों के अवशेषों से उपासना के प्रमुख केन्द्र होने की पुष्टि होती है। इस प्रकार प्रचुर संख्या में मन्दिरों एवं मूर्तियों की प्राप्ति से यह प्रमाणित होता है कि योगिनी कौल भारत में सर्वाधिक मध्य प्रदेश में प्रचलित था। इस प्रदेश में योगिनी कौल के प्रचलन का समय विभिन्न स्रोतों के अनुसार 9वीं-12वीं सदी था। इस अध्याय में हम सर्वप्रथम योगिनी मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों का वर्णन करेंगे। उसके पश्चात् उन मूर्तियों का वर्णन किया जाएगा जो विभिन्न स्थानों एवं संग्रहालयों में सुरक्षित हैं। इनका वर्णन प्राप्ति स्थान के अनुसार क्रमशः किया गया है।

1. खजुराहो

सम्प्रति खजुराहो के योगिनी मन्दिर में कोई भी मूर्ति नहीं है। यहां से खजुराहो शिल्प के उदाहरण के रूप में मात्र तीन मूर्तियों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। प्राप्त मूर्तियां महिषासुरमर्दिनी,

---

1. विद्या दहेजिया, आर्ट इन्टरनेशनल, मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 16

माहेश्वरी एवं ब्राह्मी की है ।[1] महिषासुरमर्दिनी एवं माहेश्वरी की मूर्तियों में पीठिका पर नाम उत्कीर्ण हैं । यहां पर महिषासुर मर्दिनी को हिंगलाज कहा गया है, जबकि शहडोल में 'कृष्णा भगवती' एवं भेड़ाघाट में 'तेरवां' कहा गया है । एक ही देवी के विभिन्न नामों से यह स्पष्ट होता है कि ये नाम स्थानीय परम्पराओं के अनुसार परिवर्तित हुए हैं । रामाश्रय अवस्थी ने खजुराहो के हिंगलाज को बलूचिस्तान स्थित शक्ति उपासना केन्द्र 'हिंगलाज'' से सम्बन्धित माना है ।[2] यहां श्री अवस्थी का कथन तर्कसंगत नहीं प्रतीत होता; क्योंकि मध्य प्रदेश के मन्दसौर जिले में हिंगलाजगढ़ नामक स्थान पर भी हिंगलाज देवी के मन्दिर का अवशेष मिलता है । यहां योगिनी मन्दिरों की पृष्ठभूमि पर ही विचार करने से नामों की भिन्नता का कारण स्पष्ट हो जाता है । स्थानीय परम्परागत प्रभावों ने मात्र महिषासुरमर्दिनी ही नहीं अपितु अनेक योगिनियों के नाम परिवर्तित कर दिए हैं । अत: यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि महिषासुरमर्दिनी का "हिंगलाज" नामकरण स्थानीय प्रभावों के फलस्वरूप ही हुआ है । (चित्र-45) ।

योगिनियों की अन्य दो ब्राह्मी एवं माहेश्वरी की प्रतिमाएं ललितासन तथा स्थानक मुद्रा में हैं । ब्राह्मी के तीन मुख हैं तथा सिर के पृष्ठ भाग में सादा प्रभामण्डल बना हुआ है । मूर्तियों में पीठिका पर नीचे सहायक आकृतियों का अंकन किया गया है । इन मूर्तियों में अण्डाकार सादे प्रभामण्डल, पीठिका पर सहायक आकृतियां एवं प्रस्तर के मध्य भाग के अलंकरणों के आधार पर विद्या दहेजिया ने इन मूर्तियों का काल निर्धारण 10वीं सदी ईसवीं किया है ।[3] यहां की मूर्तिकला भेड़ाघाट से मेल खाती है । योगिनी मन्दिर के स्थापत्य एवं मूर्तिकला पर सम्मिलित विचार करने से यह प्रतीत होता है कि खजुराहों के योगिनी मन्दिर एवं मूर्तियां लगभग 10वीं सदी के आरम्भिक काल की निर्मित हैं ।

2. भेड़ाघाट

यहां के योगिनी मन्दिर से कुल 81 मूर्तियां प्राप्त हुई हैं । प्राप्त सभी मूर्तियों में मात्र 24 मूर्तियां पूर्णरूपेण सुरक्षित हैं । ये मूर्तियाँ मानव एवं पशुओं के स्वरूप की हैं । यहाँ योगिनियाँ बैठी हुई प्रदर्शित की गई हैं । कुछ ही मूर्तियां स्थानक मुद्रा में मिलती हैं । प्राप्त मूर्तियों में योगिनियों के स्तन बड़े एवं सुडौल तथा नितम्ब चौड़े हैं । इस प्रकार की विशेषताओं के साथ योगिनियां देवी के प्राचीन जनन (उत्पादकता) के सिद्धान्त को प्रदर्शित करती हैं । ये मूर्तियां अन्य मन्दिरों की योगिनियों की अपेक्षा आकृति में बड़ी हैं । इनके चेहरे पर मुस्कान का भाव नहीं हैं ।

---

1. कृष्णदेव, **ऐंश्येंट इंडिया**, सं० 15, पृ० 51
2. रामाश्रय अवस्थी, **खजुराहो की देव प्रतिमाएं**, भाग 1, पृ० 12
3. विद्या दहेजिया, **आर्ट इन्टरनेशनल**, मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 25

यहां की योगिनियाँ विभिन्न अलंकरणों से आच्छादित हैं तथा उनके शरीर पर गले में माला, हार, बाहों में बाजूबन्द, कलाई में कंगन, कानों में कुण्डल, कमर में कमरबन्द एवं पैरों में पाजेब हैं। योगिनियां अधोवस्त्र भी धारण किए हुए हैं। प्रत्येक योगिनी के सिर पर मुकुट एवं पृष्ठ भाग में निर्मित प्रभामण्डल उनके देवी स्वरूप को प्रदर्शित करता है। योगिनियाँ चार से सोलह भुजाओं से युक्त हैं। मूर्तियों के पीठिका पर सहायक आकृतियां उत्कीर्ण हैं। नीचे पीठिका पर योगिनियों के नाम भी खुदे हुए हैं। यहाँ योगिनी मूर्तियां योगिनी कौल उपासना को प्रदर्शित करने में सक्षम प्रतीत होती हैं।

यहाँ एक "कामदा" की प्रतिमा है, जिसमें पीठिका पर नीचे "योनिपूजा" का दृश्य उत्कीर्ण है। "कालिकापुराण"[1] में कामदा को लैंगिक क्रियायों से सम्बन्धित कहा गया है। सम्भवतः कामदा काम कला द्वारा चरम सुख प्रदान करने वाली देवी है। इस मूर्ति में देवी कमलदल पर दोनों पैरों के तलुवों को सटाकर बैठी है। नीचे पीठिका पर मध्य में एक योनि का चित्रण किया गया है। योनि के दोनों ओर एक महिला हाथों में वाद्य यंत्र धारण किए बैठी है। साथ ही जटायुक्त दो ऋषि भी हाथ जोड़े दोनों किनारों पर बैठे हैं। एक कोने में दीपक जल रहा है। योनि के नीचे दो पुरुष हाथों में माला लेकर उपासना कर रहे हैं। योगिनी कौल उपासना में योनि पूजा को प्रदर्शित करती हुई यह योगिनी मूर्ति शरीर सौष्ठव में भी भव्य है (चित्र सं०-46)।

एक "सर्वतोमूखी" की प्रतिमा में योगिनी हर दिशा में देखती हुई प्रतीत होती है। इस देवी के तीन मुख हैं जिनमें मध्य का चेहरा मुस्कानयुक्त है, बाएँ एवं दाएँ के चेहरे क्रमशः सौम्य एवं रौद्र रूप प्रदर्शित करता है। देवी के गले में एक मानव सिर की खोपड़ी लटक रही है। यह कमलदल पर ललितासन में विराजमान है। पीठिका पर नीचे मध्य स्थान पर चक्र बना हुआ है। इस चक्र की उपासना "ह्रीं" मंत्र से होती है। यह योगिनी चक्र उपासना को प्रदर्शित करता है (चित्र सं०-47)। इस योगिनी का एक अन्य नाम विश्वतोमुखी "ललित सहस्रनाम" में वर्णित है।[2]

यहां जादू-टोने को प्रदर्शित करते हुए एक "इन्द्रजाली" की प्रतिमा है। इसके वाहन के रूप में हाथी पीठिका पर उत्कोर्ण है तथा सहायकों के रूप में कंकाल सदृश आकृतियां हाथों में चाकू एवं कपाल धारण किए हैं। यहाँ एक सहायक के हाथ में पैशाचित घण्टी भी है। यह अपने उपासकों को जादुई शक्ति प्रदान करती है (चित्र-8)।

"तेरवां" की मूर्ति स्थानक मुद्रा में है। यहां महिषासुरमर्दिनी की इस मूर्ति को स्थानीय नाम से प्रदर्शित किया गया है। देवी यहां 18 भुजाओं से युक्त है जिसमें मात्र ढाल लिए हुए एक भुजा ही

---

1. विश्वनारायण शास्त्री, संपादित, **कालिकापुराण**, अ० 61. पृ० 98
2. **ललितसहस्रनाम**, श्लोक 149, पृ० 298; विद्या दहेजिया, **आर्ट इन्टरनेशनल**, मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 23.

अवशिष्ट है। योगिनी का एक पैर जमीन पर तथा दूसरा भैंसे के पीठ पर स्थित है। नीचे सिंह भैंसे पर हमला करते हुए प्रदर्शित किया गया है। महिषासुरमर्दिनी की मूर्ति इसी प्रकार स्थानीय नामों से खजुराहो एवं शहडोल में भी प्राप्त हुई है। (चित्र सं०-49)।

"सिंहसिंहा" योगिनी प्रतिमा में सहायकों में एक नरकंकाल मानव के कटे हाथ को चबा रहा है तथा एक अन्य मानव के पैर को चबा रहा है। इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय है कि योगिनी उपासना के अन्तर्गत मानव मांस के भक्षण का भी प्रावधान था। विभत्सा या भीषणी की योगिनी प्रतिमा में सहायक आकृतियों में नरकंकाल को बड़े तने हुए लिंग के साथ प्रदर्शित किया गया हैं। सम्भवतः इस प्रकार का प्रदर्शन योगिनी उपासना के अन्तर्गत सम्पन्न होने वाले मैथुन क्रिया के प्रतीक स्वरूप हुआ है।[1] (चित्र-7)।

अश्वमुखी "ऐरुड़ी" की ही प्रतिमा यहां सर्वोत्तम स्थिति में प्राप्त हुई है। यहां योगिनी पशु मुख युक्त होने के बावजूद नारी सौन्दर्य एवं आकर्षण से परे नहीं है। यह मूर्ति पूर्णरूपेण नारी सौन्दर्य को प्रदर्शित करती है (चित्र-50)। "श्री थाणी" की प्रतिमा में योगिनी चार खण्डित भुजाओं से युक्त प्रदर्शित है। यह पीठिका पर ललितासन में विराजमान है। देवी के मस्तक पर तीसरा नेत्र भी बना हुआ है।

"चण्डिका" की मूर्ति स्थानक मुद्रा में है। यह देवी प्रेत पर खड़ी है। यह गले में मुण्डमाल एवं सिर पर खोपड़ी धारण की है, जिसके मध्य सर्प है। योगिनी का मुख खुला हुआ है तथा आंखें भयानक हैं। योगिनी के सहायक के रूप में एक नर कंकाल हाथ में नरमुण्ड लिए खड़ा है।

भेड़ाघाट में अधिकांश योगिनियों के साथ शव, प्रेत, खप्पर, चाकू एवं नरमुण्ड प्रदर्शित किए गए हैं। यहां शव एवं चाकू योगिनी उपासना से सम्बन्धित "शव साधना" को प्रदर्शित करते हैं। यहां अधिकांश योगिनियां कमल दल पर ललितासन में विराजमान हैं। इनके वाहन कहीं-कहीं स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। वाहन के रूप में घोड़ा, हरिण, सिंह, दाढ़ीयुक्त पुरुष, सांड़, हंस, हाथी आदि हैं। पीठिका पर पुरुष-स्त्री सहायकों एवं उपासकों के हाथों में विभिन्न आयुध हैं। इनके साथ कहीं-कहीं प्रेत, शव एवं पशुओं का भी अंकन हुआ है।

यहां से प्राप्त सूर्तियाँ हरे-पीले बलुवे पत्थर से निर्मित हैं। कुल प्राप्त मूर्तियों की संख्या 81 है। जिस संख्या पर किसी भी विद्वान् ने मत व्यक्त नहीं किया है। इस योगिनी मन्दिर पर लिखी पुस्तक में लेखक आर० के० शर्मा ने भी इस सन्दर्भ में विचार नहीं व्यक्त किया है। इस सन्दर्भ में विद्या

---

1. विद्या दहेजिया, आर्ट इन्टरनेशनल, मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 24

दहेजिया ने नेपाल की पाण्डुलिपि "मतोत्तरे तंत्र" का उल्लेख करते हुए कहा है कि 81 योगिनियों की उपासना करने पर उपासक के सभी मनोरथ पूर्ण होते हैं। इससे आठ जादुई शक्ति के साथ अन्य सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। 81 योगिनियों के मूल चक्र की उपासना का प्राविधान राजाओं के लिए है।[1] इस मन्दिर का निर्माण इसीलिए राज्य परिवार की उपासना हेतु राजा ने करवाया था। कहते हैं कि कल्चुरी राजा ने अपने राज्य सुरक्षा एवं समृद्धि के लिए सम्भवतः इस मन्दिर को निर्मित करवाया था।

भेड़ाघाट योगिनी मन्दिर की मूर्तियों पर खुदी लिपि के आधार पर इसके 10वीं सदी के पूर्वार्द्ध में निर्मित होने की सम्भावना प्रकट होती है। मूर्ति शिल्प की दृष्टि से यहां की मूर्तियां 10वीं सदी के आरम्भिक काल में निर्मित खजुराहों की मूर्तियों से सामंजस्यता रखती हैं। दोनों स्थानों की मूर्तियां नारी सौन्दर्य को प्रदर्शित करते हुए निर्मित की गई हैं। भेड़ाघाट का मन्दिर सम्भवतः कल्चुरी राजा युवराजदेव द्वितीय ने निर्मित करवाया था। उसका शासन काल 10वीं सदी के उत्तरार्द्ध में रहा है। कल्चुरियों की राजधानी त्रिपुरी (आधुनिक तेवर) भी इस स्थान से मात्र 4 मील दूर है। युवराजदेव द्वितीय ने यद्यपि युद्ध में विजय एवं साम्राज्य सुरक्षा हेतु इस मन्दिर का निर्माण करवाया था, फिर भी वह परमारों से पराजित होकर राज्य खो बैठा था।

3. हिंगलाजगढ़ :

यह स्थान मध्य प्रदेश के मन्दसौर जिले में भानपुर से 14 मील दूर स्थित है। इस स्थान की प्रसिद्धि "हिंगलाजमाता" के मन्दिर के कारण है। सर्वप्रथम यह मन्दिर एक पठारी पर स्थित था, परन्तु अब स्थानान्तरित होकर मुगल शैली की एक संरचना में परिवर्तित हो गया है।[2] खजुराहो स्थित योगिनी मन्दिर में भी महिषासुरमर्दिनी की मूर्ति पर "हिंगलाज" नाम उत्कीर्ण है। सम्भवतः इस क्षेत्र में यह प्रधान देवी थी। इस स्थान से अनेक योगिनी मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। यहां से प्राप्त मूर्तियां सेन्ट्रल म्यूजियम इन्दौर, भोपाल राजकीय संग्रहालय एवं राजकीय संग्रहालय, भानपुरा में सुरक्षित हैं। यहां से प्राप्त मूर्तियों में योगिनियां बैठी हुई एवं स्थानक मुद्रा में हैं। इनको बलुवे पत्थर से निर्मित किया गया है। इनमें मध्यकालीन भारतीय मूर्ति शिल्प स्पष्ट परिलक्षित होता है। यह स्थान शक्ति उपासना का एक प्रमुख केन्द्र रहा है। यहां से प्राप्त योगिनी मूर्तियां इस स्थान पर योगिनी मन्दिर निर्मित होने का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। सम्प्रति योगिनी मन्दिर के स्थापत्य का अवशेष नहीं मिलता।

योगिनी मूर्तियों में योगिनियों के सिर के पृष्ठभाग में कमलदल युक्त एवं अलंकृत अण्डाकार प्रभामण्डल है। बैठी हुई योगिनियां ललितासन की मुद्रा में विराजमान हैं। ये योगिनियां चार, आठ

---

1. जनार्दन पाण्डेय, सम्पादित, **गोरक्ष संहिता**, अ० 27; विद्या दहेजिया, "**आर्ट इण्टर नेशनल**", मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 24,
2. **आर्कियोलाजिकलसर्वे आफइण्डिया वेस्टर्न सर्किल रिपोर्ट**, 1919-20, पृ० 93

एवं बारह भजाओं से युक्त हैं, परन्तु इनकी अधिकांश भुजाएं खंडित हो चुकी हैं। मूर्तियों में व्यॉतर देवताओं का भी अकन हुआ है जिनमें गन्धर्व, विद्याधर एवं मातृकाएं प्रमुख हैं। यहां इनका अंकन योगिनियों को देव रूप प्रदान करता है। यहाँ की योगिनी मूर्तियों में बौद्ध, जैन एवं हिन्दू धर्म की विशिष्टताओं के साथ देवियों को योगिनी स्वरूपों में प्रदर्शित किया गया है।

"अम्बिका" की विशिष्ट प्रतिमा में योगिनी स्थानक मुद्रा में गोद में बच्चा लिए हुए हैं। यहां दाहिनी भुजा खण्डित है और सिर के पृष्ठ भाग में प्रभामण्डल के स्थान पर फैले हुए पंखों का अंकन है। आंखें अधखुली एवं चेहरे पर मुस्कान है। देवी के दोनों ओर ऊपर से नीचे मातृकाओं का अंकन हुआ है। पीठिका पर नीचे वाहन सिंह बैठा है तथा एक ओर स्त्री उपासिका खड़ी है। यह मूर्ति सेन्ट्रल म्यूजियम इन्दौर में सुरक्षित है (चित्र-51)।

योगिनी "अपराजिकता" की मूर्ति में योगिनी स्थानक मुद्रा में है। यहां योगिनी बायें पैर को जमीन पर टिका कर दाहिने पैर से गणेश पर प्रहार कर रही है। गणेश नीचे पीठिका पर आधे लेटे हुए हैं। योगिनी के सिर के पृष्ठभाग में कमलदल से अलंकृत प्रभामण्डल है। योगिनी के सिर पर अलंकृत जटा-मुकुट है। योगिनी की आठ भुजाओं में मात्र तीन ही अवशिष्ट हैं। देवी के एक हाथ में कपाल है तथा अन्य में आयुध अस्पष्ट हैं। योगिनी के मस्तक पर तीसरे नेत्र का भी अंकन हुआ है (चित्र-52)।

"चामुण्डा" की प्रतिमा में योगिनी भयानक स्वरूप में स्थानक मुद्रा में है। इसके सिर पर खोपड़ीयुक्त मुकुट है। सिर के पृष्ठ भाग पर कमलदल युक्त प्रभामण्डल है। इसकी आंखें गोल एवं बड़ी तथा मुख खुला हुआ है। मस्तक पर तीसरा नेत्र भी है। गले में नरमुण्ड तथा सापों की माला है। हाथों में भी अलंकरण के रूप में सर्प का उपयोग किया गया है। नाभी के पास बिच्छू ऊपर चढ़ते हुए अंकित है। इसके पीठिका पर नीचे प्रेत अंकित है। यह दस भुजाओं से युक्त हैं, जिसमें मात्र एक ही भुजा अवशिष्ट है (चित्र-53)।

महिषासुर मर्दिनी की आकर्षक खण्डित प्रतिमा में योगिनी का बायाँ पैर जमीन पर स्थित है तथा दायां पैर सिर कटे भैंसे के पीठ पर स्थित है। भैंसे का सिर गर्दन पर आधा कटकर जमीन की ओर झुका हुआ है। भैंसे के पृष्ठ भाग पर सिंह अपने दाँतों को धंसाकर काट रहा है। सिंह के पीछे खण्डित सिर की स्त्री सहायिका है। कलात्मक दृष्टि से यह मूर्ति अप्रतिम है (चित्र सं०-54)।

"वैनायकी" की प्रतिमा में योगिनी पीठिका पर विराजमान है। सिर के पृष्ठभाग में अलंकृत प्रभामण्डल के दोनों ओर मातृकाओं का अंकन हुआ है, जिसमें बायें ओर की मातृका खण्डित है। दाहिने ओर की मातृका की चार भुजायें हैं जिनमें वह चक्र एवं कुम्भ धारण किये हुए हैं। योगिनी का मुख हाथी सदृश है तथा इसकी चारों भुजायें खण्डित हैं। गले में माला के साथ वनमाला भी सुशोभित हो रही है। पीठिका पर नीचे मध्य स्थान पर सिंह वाहन तथा दोनों ओर स्त्री सहायिका खड़ी हैं (चित्र सं०-55)।

माहेश्वरी की प्रतिमा में योगिनी तीन मुखों से युक्त है। सिर पर खोपड़ीयुक्त जटा मुकुट तथा सिर के पीछे अलंकृत प्रभामण्डल है। योगिनी की 16 भुजाओं में मात्र चार ही अवशिष्ट हैं। दाहिने नीचे हाथ में अक्षमाला है। पीठिका पर नीचे नग्न प्रेत लेटा हुआ है। योगिनी का दाहिना पैर प्रेत के ऊपर स्थित है। यह ललितासन की मुद्रा में कमल दल पर विराजमान है। पीठिका पर दोनों ओर स्त्री सहायिकायें हैं (चित्र सं०-56)।

"इन्द्राणी" अपने वाहन हाथी के पीठ पर ललितासन में विराजमान है। सिर पर अलंकृत-मुकुट एवं सिर के पीछे प्रभामण्डल है। ऊपर प्रभामण्डल के दोनों ओर मातृकायें बनी हुई हैं। गले में हार एवं लम्बा माला है। पीठिका पर नीचे पुरुष सहायक एवं स्त्री सहायिका स्थानक मुद्रा में है (चित्र सं०-57)।

"नागी" की प्रतिमा में योगिनी के सिर के पृष्ठभाग में प्रभामण्डल के स्थान पर नाग का फण बना है। चारों भुजायें खण्डित हो चुकी हैं। यह कमलदल पर ललितासन में विराजमान है। गले में हार, माला एवं वनमाल सुशोभित हो रही है। पीठिका पर नीचे उपासक के साथ ही सर्प का भी अंकन हुआ है (चित्र सं०-58)।

यहाँ से प्राप्त अधिकांश योगिनी मूर्तियों में भुजायें खण्डित हैं। योगिनियों के वाहन नीचे पीठिका पर अंकित हैं। योगिनियां विभिन्न प्रकार के आभूषणों से अलंकृत हैं। इनके सिर पर मुकुट, कानों में कुण्डल, गले में मेखला, हार एवं वनमाला, हाथों में बाजूबन्द एवं कड़ा, कमर में कमरबन्द तथा पैरों में पाजेब हैं। वस्त्र के रूप में ये कंचुकी एवं अधोवस्त्र धारण किए हुए हैं।

मूर्तियों में योगिनियों की आकर्षक एवं सुडौल देह यष्टि आमंत्रण भाव प्रस्तुत करती हुई प्रतीत होती हैं। आंखें आधी खुली हुई हैं और चेहरे पर मुस्कान के साथ शान्त भाव है। योगिनियों की शारीरिक संरचना एवं कोमलता नारी सौन्दर्य की पराकाष्ठा को प्रदर्शित करता है। इनकी भाव-भंगिमाएं अनायास दृष्टि को आकर्षित करती हैं। योगिनी मूर्तियों में इस प्रकार के भव्य एवं कलात्मक उदाहरण अन्यत्र नहीं मिलते। यहां की योगिनी मूर्तियां हिन्दू, बौद्ध एवं जैन धर्मों को सम्मिलित विशिष्टताओं के साथ निर्मित हैं। अपराजिता की मूर्ति में एक साथ ही तीनों धर्मों की विशिष्टतायें परिलक्षित होती हैं। इन मूर्तियों से योगिनियों में हिन्दू, बौद्ध एवं जैन देवियों के सम्मिलित होने की पुष्टि होती है।

यहाँ की मूर्तियों के कलात्मक विशेषताओं के आधार पर भेड़ाघाट योगिनी मन्दिर के बाद निर्मित होने की सम्भावना प्रतीत होती है। इन मूर्तियों का काल निर्धारण विद्वानों ने 10वीं सदी ईसवी किया है, जिसके आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि 10वीं सदी में हिंगलाजगढ़ में योगिनी मन्दिर निर्मित हुआ था। इस स्थान की प्रमुखता शक्ति उपासना के कारण ही रही है।

4. शहडोल

मध्य प्रदेश के शहडोल जिले में दो योगिनी मन्दिरों के निर्मित होने की सम्भावना प्रतीत होती है। सम्प्रति यहां किसी भी मन्दिर के स्थापत्य अवशेष नहीं मिलते। यहां से अनेक योगिनी मूर्तियां प्राप्त हुई हैं, जिनके आधार पर योगिनी मन्दिरों के निर्मित होने की सम्भावना की पुष्टि होती है। यहां से प्राप्त योगिनी मूर्तियों को शिल्प विशेषताओं एवं कालक्रम के आधार पर दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। शहडोल की मूर्तियां अन्तरा एवं पंचगांव नामक स्थानों, राजकीय संग्रहालय -धुबेला एवं इण्डियन म्यूजियम-कलकत्ता में सुरक्षित हैं। इण्डियन म्यूजियम में संग्रहित मूर्तियों का प्राप्ति स्थान सतना उल्लिखित है, परन्तु इन मूर्तियों का मूल स्थान शहडोल ही है।

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से यहां से प्राप्त मूर्तियों को दो समूहों में विभक्त किया जा सकता है—प्रथम समूह में 10वीं सदी में निर्मित मूर्तियों को तथा दूसरे में 11वीं सदी में निर्मित योगिनी मूर्तियों को रखा जा सकता है। इन मूर्तियों को देखने से ही स्पष्ट हो जाता है कि इनका निर्माण भिन्न-भिन्न शिल्पियों द्वारा किया गया था। इनकी कलात्मक विशिष्टताओं में भी अन्तर स्पष्ट परिलक्षित होता है। अतः कलात्मक विशेषताओं एवं कालक्रम के आधार पर यहां दो योगिनी मन्दिरों के निर्मित होने की सम्भावना व्यक्त की जा सकती हैं। विद्या दहेजिया[1] ने भी दो समकालीन मन्दिरों के होने की सम्भावना व्यक्त करते हुए इनका काल निर्धारण 11वीं सदी का उत्तरार्द्ध किया है। उन्होंने खड़ी एवं बैठी हुई मूर्तियों के आधार पर इनका विभाजन किया है, परन्तु यहां पर विद्या दहेजिया का मत उचित नहीं प्रतीत होता है। विभिन्न योगिनी मन्दिरों एवं स्थानों से प्राप्त मूर्तियों का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि भेड़ाघाट, हिंगलाजगढ़ एवं रिखियां से प्राप्त मूर्तियां स्थानक एवं बैठी हुई मुद्राओं में सम्मिलित रूप से हैं। मात्र इन आधारों पर इन्हें दो मन्दिरों के होने का मत व्यक्त करना उचित नहीं है। इन मूर्तियों को देखने से ही इनकी विभिन्न शैलीगत विशेषतायें स्पष्ट हो जाती हैं तथा इनके प्रभामण्डल एवं मूर्तियों के अगल-बगल के अंकन आपस में बिल्कुल मेल नहीं खाते। इनकी अन्य विशिष्टताओं का वर्णन हम क्रमशः आगे करेंगे। यहां से प्राप्त सभी मूर्तियों की आकृति लगभग समान है तथा ये बलुवे पत्थर से निर्मित हैं। इनकी पीठिका पर खुदी हुई लिपि में भी लगभग समानता है।

(1) प्रथम समूह की योगिनी मूर्तियों में योगिनियों के सिर के पृष्ठभाग में कमलदल तथा उसके चारो ओर एकान्तरित वृत्ताकार एवं त्रिभुजाकार अलंकरणों से युक्त प्रभामण्डल बने हुए हैं। इस प्रकार के प्रभामण्डल ललितासन में विराजमान सभी योगिनी मूर्तियों में हैं। प्रभामण्डल के ऊपर दोनों ओर उड़ते हुए गन्धर्व एवं गन्धर्वी युगल में माला लिए हुए अंकित हैं। योगिनियों के कन्धे के ऊपरी भाग में पीठिका पर व्यांतर देवताओं को अंकित किया गया है। ये ऊपर के भाग अन्तरिक्ष को

---

1. विद्या दहेजिया आर्ट इण्टरनेशनल, मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 26

प्रदर्शित करते हैं तथा इनमें किन्नर, गन्धर्व, विद्याधर, किम् पुरुष एवं नाग आदि होते हैं। इसप्रकार के व्यांतर देवताओं का वर्णन हिन्दू, बौद्ध एवं जैन धर्मों से सम्बन्धित मूर्तियों में मिलते हैं। ये व्यांतर देवता देवियों को मानवीय रूप में पृथ्वी पर आगमन के उपलक्ष्य में हाथों में माला एवं संगीत से स्वागत करते हुए प्रतीत होते हैं। योगिनियों के कन्धे के नीचे के भाग में पीठिका पर उपासक हाथ जोड़े, वाद्य यंत्रों के साथ तथा चंवर धारण किए हुए प्रदर्शित किए गए हैं। योगिनियों के पैरों के नीचे उनके वाहन के रूप में पशु, प्रेत एवं शव प्रदर्शित किए गए हैं।

यहां प्रत्येक योगिनी कमलदल एवं वाहन पर ललितासन में विराजमान हैं। ये अधिकांश आठ या अधिक भुजाओं से युक्त हैं, परन्तु इनकी अधिकतर भुजाएं खण्डित हैं। भुजाओं में विभिन्न प्रकार के आयुध भी हैं, परन्तु अधिकांश पहचानने योग्य नहीं रह गए हैं। यहां अधिकतर योगिनियों के हाथों में घण्टा, कपाल, चाकू. कमण्डल, चक्र तथा खड्वांग आदि है। योगिनियों के सौम्य रूप, स्मृत भाव एवं नासाग्र दृष्टि स्पष्ट परिलक्षित होते हैं। अधिकांश योगिनियों की आंखें मुदी हुई हैं तथा वे ध्यान की मुद्रा में हैं। यहां अनावश्यक भंगिमाओं की कमी भी दृष्टिगत होती है।

योगिनियाँ अलंकरण के रूप में सिर पर मुकुट, कानों में कुण्डल, गले में लड़ीयुक्त माला, बाहों में वाजूवन्द, कलाई में कंगन, कमर में करधनी तथा पैरों में पाजेब धारण किए हुए हैं। इन अलंकरणों से युक्त योगिनियां नारी सौन्दर्य में अप्रतिम वृद्धि करती हुई प्रदर्शित की गई हैं। योगिनियों के मूर्ति शिल्प, वस्त्र तथा अलंकरण सामंजस्यपूर्ण प्रतीत होते हैं।

यहाँ से प्राप्त "तरला" की मूर्ति में भव्य स्वरूप एवं आकर्षक व्यक्तित्व प्रधानता के साथ प्रदर्शित हैं। इनका मुख बाईं ओर मुड़ा हुआ है, जिससे इस योगिनी में अस्थिरता का भाव प्रदर्शित होता है। इनके बाल चटाईदार, ऊपर की ओर उठे हुए सुसज्जित हैं। ललितासन में विराजमान योगिनी के पीठिका पर नीचे गरुण वाहन के रूप में अंकित है। पीठिका पर ही एक पुरुष के हाथ में नरमुण्ड है।

महिसासुरमर्दिनी की मूर्ति में योगिनो को राक्षस का वध करते हुए प्रदर्शित किया गया है। पीठिका पर नीचे एक ओर सिंह है एवं महिषासुर के शरीर से मानवाकृति निकलती हुई प्रदर्शित है। यह 12 भुजाओं से युक्त है तथा इसके हाथों से राक्षस के सिर का बाल, ढाल, घण्टा, फूल तथा दो हाथ अभय एवं वरद् मुद्रा में है। यहां स्थानीय प्रभावों एवं परम्परा के कारण देवी को स्थानीय नाम "कृष्णा भगवती" से प्रदर्शित किया गया है।

"वृषभा" की प्रतिमा में योगिनी अपने गोद में बाएं हाथ से गणेश को पकड़े हुए है। गणेश के हाथ में लड्डू या फल है। योगिनी के ऊपरी बाएं हाथ में खड्वांग है तथा वह दाहिने निचले हाथ में फल लिए हुए है। योगिनी का मुख वृषभ के समान है। वह कमलदल पर विराजमान है तथा नीचे पीठिका पर वाहन सिंह देवी की ओर मुख किए बैठा है (चित्र सं०-59)

"तारिणी" कमल दल पर ललितासन में विराजमान है योगिनी की 6 भुजाएं है जिनमें मात्र बाएं ओर की दो भुजाएं अवशिष्ट हैं। इसके ऊपर उठे हुए भुजाओं में सर्प एवं घण्टा है। पीठिका पर नीचे उपासकों के मध्य प्रेत लेटा हुआ है। देवी का दाहिना पैर प्रेत की पीठ पर स्थित है (चित्र सं-60)।

"वासुकी" की भव्य मूर्ति में योगिनी की आठ भुजाओं से युक्त प्रदर्शित किया गया है। इस समय इनमें मात्र दाहिनी ओर दो एवं बायीं ओर एक भुजा ही अवशिष्ट है। दाहिनी भुजाओं में कपाल एवं चाकू तथा बायीं भुचा में नरमुण्ड प्रदर्शित है। नीचे पीठिका पर उपासकों के मध्य वाहन मोर का अंकन किया गया है (चित्र सं०-61)।

"सर्वमंगला" की प्रतिमा भव्य एवं आकर्षक है। योगिनी कमल दल पर पद्मासन की मुद्रा में विराजमान है। इसकी सभी आठों भुजाएं खण्डित हैं। नीचे पीठिका के दोनों किनारों पर सिंह आकृति योगिनी की ओर मुख किए बैठी है। पीठिका के मध्य स्थान में योगिनी की ओर मुंह किए एक स्त्री हाथ जोड़कर बैठी है। यहाँ स्त्री का पृष्ठ भाग ही प्रदर्शित किया गया है। (चित्र सं०-62)।

"अम्बिका" की एक प्रतिमा प्राप्त हुई है, जिसमें जैन मातृका को योगिनी के रूप में प्रदर्शित किया गया है। इस मूर्ति में प्रभामण्डल के ऊपर जैन तीर्थंकर "नेमीनाथ" ध्यानावस्था में विराजमान है। इस प्रकार का उदाहरण अन्य किसी योगिनी मन्दिर में नहीं मिलता। देवी कमलदल पर ललितासन की मुद्रा में विराजमान है। पीठिका पर ऊपर माला लिए गन्धर्व-गन्धर्वी तथा हाथ जोड़े स्त्रियां उत्कीर्ण हैं। नीचे की ओर पीठिका पर अगल-बगल किन्नर तथा पैरों के नीचे एक ओर वाहन सिंह एवं मध्य में स्त्री खड़ी है। योगिनी गोद में शिशु धारण किए हुए है। योगिनी के रूप में इस जैन मातृका की उपस्थिति से यह स्पष्ट होता है कि कालान्तर में जैन मातृकाएं भी योगिनियों में सम्मिलित हो गई थी। अम्बिका को दुर्गा का ही एक रूप कहा गया है तथा हिन्दू तंत्र में दुर्गा के इस स्वरूप को जैन धर्म से सम्मिलित किया गया है। इस बात का प्रमाण विभिन्न स्थानों से प्राप्त जैन ग्रन्थों की योगिनी नामावलियों में भी मिलता है।[1] (चित्र सं०-63)।

यहां से प्राप्त अनेक योगिनियों के हाथों में नरमुण्ड है। इनमें एक सुन्दर प्रतिमा "भानवी" की है जिसके बाएं हाथ में नरमुण्ड है। यह पीठिका पर ललितासन में विराजमान है। योगिनी की आठ भुजाओं में मात्र बाएं की तीन भुजाएं अवशिष्ट हैं। शेष हाथों में वह घण्टी, नरमुण्ड एवं चाकू धारण की हैं। देवी के चारों ओर सहायक आकृतियां हैं जिनमें दाहिने ओर एक स्त्री कटे हुए मानव हाथ को चवा रही है। दूसरी स्त्री हाथ में चाकू लिए खड़ी है। पीठिका पर बाएं ओर एक पुरुष चाकू लिए खड़ा है एवं मध्य स्थान पर वाहन सिंह बैठा है। योगिनी मूर्ति का यह स्वरूप शव साधना की ओर

---

1. विशेष विवरण हेतु देखें "योगिनी नामावली"

संकेत करता है। तांत्रिक ग्रन्थों में कहा गया है कि यह शवसाधना योगिनी कौल का ही एक भाग है[1] (चित्र सं०-64)।

योगिनी "नारसिंही" का मुख सिंह के समान है एवं इसकी आठों भुजाएं खण्डित हैं। यह कमल दल पर ललितासन में विराजमान है। पीठिका पर नीच उपासकों (स्त्री-पुरुष) के मध्य वाहन सिंह योगिनी की ओर मुख किए हुए बैठा है। (चित्र सं०-65)

इन मूर्तियों की पीठिका पर खुदी हुई लिपि एवं मूर्तियों की शिल्प विशेषताओं के आधार पर इनके काल का निर्धारण विद्या दहेजिया ने 11वीं सदी के उत्तरार्द्ध में किया है।[2] उन्होंने लिपि के आधार पर इसे भेड़ाघाट योगिनी मन्दिर के बाद निर्मित कहा है। संग्रहालयों में इन मूर्तियों का काल निर्धारण 10वीं-11वीं सदी ईसवी किया गया है। इन मूर्तियों के शिल्प विशेषताओं के आधार पर इन्हें लगभग 10वीं सदी में निर्मित कहा जा सकता है। इन पर खुदी हुई लिपि भी इसके लगभग 10वीं सदी में निर्मित होने की पुष्टि करती है। उपरोक्त सभी तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि शहडोल का प्रथम योगिनी मन्दिर लगभग 10वीं सदी में निर्मित हुआ था, जिसकी मूर्तियां प्रमाण स्वरूप आज भी सुरक्षित हैं। ये मूर्तियां उस मन्दिर में स्थापित थीं।

(11) शहडोल से दूसरे समूह की मूर्तियां स्थानक मुद्रा में प्राप्त हुई हैं। प्राप्त इन मूर्तियों की कुल संख्या 10 है। इन मूर्तियों को देखने से ही स्पष्ट होता है कि इनका निर्माण भिन्न काल में अन्य शिल्पी द्वारा किया गया था। इन मूर्तियों के प्रभामण्डल प्रथम समूह के मूर्तियों से भिन्न हैं। यहाँ प्रभामण्डल उतने उत्कृष्ट एवं अलंकृत नहीं हैं। वृत्ताकार रचना के किनारे कमलदल एवं मध्य स्थान में शीर्ष चक्र बने हुए हैं। यहां भी प्रभामण्डल के दोनों ओर गन्धर्व एवं गन्धर्वी को हाथों में माला लिए उड़ते हुए अंकित किया गया है। योगिनियों के अगल-बगल की संरचनाएं भी यहाँ भिन्न हैं तथा इनमें स्तम्भ की तरह रचना में शीर्ष भाग पर योगिनी के कन्धे के समीप मकर मुख एवं उसके नीचे व्याल बने हैं। प्रथम समूह के योगिनी मूर्तियों में इसप्रकार की रचना नहीं मिलती तथा यहां पर बने हुए स्तम्भ भी भिन्न प्रकार के हैं। यहाँ योगिनियों के शरीर की अपेक्षा पैर छोटे एवं पतले हैं। योगिनियों का शरीर सामंजस्यपूर्ण नहीं है। यहाँ की मूर्तियां प्रथम समूह की अपेक्षा भद्दी हैं।

यहाँ सर्वोत्तम स्थिति में "बदरी" की प्रतिमा प्राप्त हुई है। यह योगिनी नटराज के अनुकरण में ताण्डव नृत्य करती हुई काली का एक स्वरूप है। इसकी आठ भुजाएं हैं तथा अलंकरण के रूप में इसने जटा मुकुट, अस्थि माला, नागवेस्टन कुण्डल, एवं पाजेब धारण किया है। योगिनी के नृत्य के साथ सहायकों को तबला, वीणा आदि वाद्य यंत्रों के साथ प्रदर्शित किया गया है (चित्र-66)।

---

1. जनार्दन पाण्डेय **गोरक्षसंहिता**, अ० 4
2. विद्या दहेजिया, **आर्ट इण्टर नेशनल मार्च-अप्रैल** 1982, पृ० 26

महिषासुरमर्दिनी की मूर्ति में योगिनी एक पैर जमीन पर तथा दूसरा भैंसे के ऊपर रखी है। इसकी बारह भुजाएं हैं, जिनमें वह नरमुण्ड, ढाल आदि धारण किए है। इसमें पीछे सिंह को खड़ा प्रदर्शित किया गया है। इस मूर्ति में लिपि नष्ट हो जाने के कारण इसका स्थानीय नाम नहीं ज्ञात हो सका।

यहां से प्राप्त एक योगिनी प्रतिमा में योगिनी को प्रेत के पीठ पर नृत्यरत प्रदर्शित किया गया है। यह गले में घुटने तक का मुण्डमाल धारग किये हुए है। इसकी चार भुजाओं में मात्र बाईं ओर की निचली भुजा अवशिष्ट है। इसमें वह नरमुण्ड पकड़ी हुई है। योगिनी का दाहिना पैर भी खण्डित है। नीचे पीठिका पर प्रेत लेटा हुआ है एवम् अगल-बगल सहायक एवं सहायिकाओं के हाथों में खड्वांग, चाकू एवं कपाल है। (चित्र सं०-67)

योगिनी मन्दिर की ही एक प्रतिमा अन्तरा नामक स्थान पर सुरक्षित है। इस प्रतिमा में नदी देवियों के समूह को प्रदर्शित किया गया है। इस प्रकार की नदी देवियां हीरापुर एवं भेड़ाघाट के योगिनी मन्दिरों से भी प्राप्त हुई हैं। यहां पर ये देवियां समूह में हैं किन्तु अन्य स्थानों पर इनकी प्रतिमा स्वतंत्र रूप में प्राप्त हुई है। ये नदी देवियाँ यह प्रमाणित करती हैं कि योगिनियों में वे भी सम्मिलित हो गई थीं। (चित्र सं०-68)

यहाँ से स्थानक मुद्रा में एक भैरव की प्रतिमा प्राप्त हुई हैं जो निजी संग्रह में सुरक्षित है। यह पंचगांव नामक स्थान से प्राप्त हुई है। इसमें भैरव का स्वरूप अत्यन्त भयानक है तथा उनके सिर पर खोपड़ी अलंकृत है। उनके चार भुजाओं में कपाल, घण्टी एवं खड्वांग है। गले में सर्प की माला के साथ ही घुटने तक लम्बी मुण्डमाल हैं। इनके सिर के ऊपर सर्प का फण है एवं प्रभामण्डल अन्य मूर्तियों की तरह अलंकृत है। पीठिका पर नीचे सहायक आकृतियों के साथ ही वाहन नन्दी खड़ा है। (चित्र सं०-69)

इसी प्रकार अन्य प्रमुख योगिनी मूर्तियों में "थमा" अपने जादुई शक्ति से प्रभावित करती है। "मा" आठ भुजाओं से युक्त है जिनमें वह त्रिशूल, खड्वांग, ढाल, डमरु, पद्म तथा तलवार आदि धारण की है। "वाराही" की प्रतिमा में पीठिका पर उत्कीर्ण सभी आकृतियां सूअर मुख की हैं।

यहां की मूर्तियों की भिन्न शैलीगत विशिष्टताओं के आधार पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि इस समूह की योगिनी मूर्तियां प्रथम समूह की मूर्तियों के बाद निर्मित हुई थीं। इन मूर्तियों की कलात्मक विशिष्टताओं एवं संग्रहालयों में निर्धारित तिथियों के आधार पर यह प्रतीत होता है कि इनका निर्माण लगभग 11वीं सदी में हुआ था।

इस प्रकार उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर शहडोल जिले में 10वीं-11वीं सदी के मध्य निर्मित दो योगिनी मन्दिरों के प्रमाण मिलते हैं। मन्दिरों की संरचनाओं के अवशेष नहीं मिलते, किन्तु इनके निर्मित होने की पुष्टि प्राप्त योगिनी मूर्तियाँ निश्चयतः करती हैं।

5. नरेसर

मध्य प्रदेश के ग्वालियर जिले में नरेसर नामक स्थान है। यह स्थान ग्वालियर से 10 मील की दूरी पर स्थित है। इस स्थान से कुल चौदह (14) योगिनी मूर्तियां प्राप्त हुई हैं।[1] ये सभी मूर्तियां राजकीय संग्रहालय-ग्वालियर में सुरक्षित हैं। यहां से प्राप्त मूर्तियों का अध्ययन करने से यह प्रतीत होता है कि इस इस स्थान पर योगिनी मन्दिर अवश्य निर्मित हुआ था, किन्तु उसके स्थापत्य के अवशेष अब नहीं मिलते। इस योगिनी मन्दिर के समकालीन ग्वालियर जिले में पदावली के समीप मितावली नामक स्थान पर आज भी योगिनी मन्दिर का स्थापत्य विद्यमान है। यहाँ आस-पास ही दो योगिनी मन्दिरों के अवशेषों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि शहडोल एवं बाँदा के समान ही यह स्थान भी योगिनी कौल उपासना का प्रमुख केन्द्र था। आस-पास ही दो समकालीन योगिनी मन्दिरों के निर्माण से योगिनी कौल के प्रचलन पर भी प्रकाश पड़ता है।

नरेसर की योगिनी मूर्तियों में उनकी पीठिका पर योगिनियों के नाम भी उत्कीर्ण हैं। योगिनी मूर्तियां बलुवे पत्थर से निर्मित हैं। यहां से प्राप्त 13 योगिनी मूर्तियों के शीर्ष भाग खण्डित हैं। इनमें मात्र उमा का सिर भाग सुरक्षित है। अधिकांश योगिनियों की भुजाएं भी खण्डित हो चुकी हैं, जिससे उनके आयुधों के विषय में जान पाना सम्भव नहीं है। साधारणतः अवशिष्ट भुजाओं में फल, पात्र, शंख, दण्ड एवं नरमुण्ड हैं।

यहाँ से पूर्णरूपेण सुरक्षित स्थिति में "उमा" की प्रतिमा प्राप्त हुई है। इस योगिनी का मुख भाग उल्लू पक्षी के समान है। इसकी चार भुजाओं में मात्र दो ही भुजाएं अवशिष्ट हैं। यह ललितासन में अपने वाहन भेड़ा के पीठ पर विराजमान है तथा अपने बाएं जांघ पर अस्पष्ट पशु के शिशु को बाएं हाथ से पकड़ी हुई है। दूसरा अवशिष्ट दाहिना हाथ वरद मुद्रा में है। पीठिका पर नीचे एक स्त्री हाथ जोड़कर बैठी हुई है। "उमा" की इस प्रकार की प्रतिमा अन्य किसी योगिनी मन्दिर से नहीं प्राप्त हुई है (चित्र सं०-70)।

"मघाली" की प्रतिमा में सिर खण्डित है। इसमें देवी की चार भुजाएं हैं और उसका दाहिना पैर भी खण्डित है। योगिनी ललितासन में अपने वाहन चूहा के पीठ पर विराजमान है। पीठिका पर दाहिने ओर एक स्त्री उपासना कर रही है (चित्र सं०-71)।

"वैष्णवी" की प्रतिमा में भी सिर का भाग खण्डित है। योगिनी की चार भुजाओं में मात्र दो ही अवशिष्ट हैं तथा इनके दाहिने हाथ में गदा एवं बाएं हाथ में शंख है। यह अपने पीठिका पर बैठी है तथा दोनों पैरों के मध्य हाथ जोड़े घुटनों के बल गरुड़ बैठा है। पीठिका पर दोनों ओर किनारे स्त्रियां हाथ जोड़ कर बैठी हुई हैं (चित्र सं०-72)।

---

1. मूर्तियों की पीठिका पर योगिनियों के नाम के साथ ही मूर्तियों की क्रमसंख्या भी उत्कीर्ण की है यहाँ से प्राप्त अधिकतम मूर्ति संख्या 23 अंकित है। इससे यह प्रतीत होता है कि अन्य योगिनी मूर्तियाँ भी थी, जो इस समय ज्ञात नहीं हैं।

"नीवऊ" की प्रतिमा आकर्षक किन्तु सिर विहीन है। इसकी चार भुजाओं में मात्र एक ही अवशिष्ट है, जिसमें वह नरमुण्ड धारण किए है। योगिनी ललितासन में पीठिका पर विराजमान है। बाएं पैर के नीचे प्रेत लेटा हुआ है तथा दाहिने ओर एक स्त्री उपासना कर रही है (चित्र सं०-73)।

'चामुण्डा" की प्रतिमा भी अन्य योगिनी प्रतिमाओं की तरह सिर विहीन है। योगिनी की चार भुजाओं में मात्र दाहिने की एक भुजा ही अवशिष्ट है। अवशिष्ट हाथ में योगिनी कपाल धारण किए है। यह ललितासन में वाहन उल्लू पर बैठी हुई है। पीठिका पर नीचे दोनों ओर स्त्रियां उपासना कर रही हैं (चित्र सं०-72)।

"विकनटञ्जः" की प्रतिमा में योगिनी की चार भुजाओं में दो ही अवशिष्ट हैं। आयुध खण्डित हैं जिससे कुछ ज्ञात हो पाना सम्भव नहीं है। योगिनी ललितासन में वाहन कुत्ते की पीठ पर बैठी हुई है। पीठिका पर नीचे दाहिनी ओर एक स्त्री उपासना कर रही है (चित्र सं०-75)।

यहां से प्राप्त योगिनी मूर्तियों में योगिनियां ललितासन की मुद्रा में विराजमान हैं। इनके वाहन पैरों के नीचे पीठिका पर अंकित हैं। ये वाहन पशु आकृतियों में सांड़, हाथी, सिंह आदि तथा प्रेत के रूप में भी अंकित हैं। भेड़ाघाट, शहडोल, हिंगलाजगढ़ की तरह यहां योगिनी मूर्तियों में अलंकरण कम दिखाई पड़ते हैं। इन मूर्तियों में प्रभामण्डल का भी अभाव है।

योगिनियाँ आभूषण अनावश्यक रूप से नहीं धारण की हैं। इनके गले में माला एवं हार हैं। हार स्तन के ऊपर से नीचे की ओर नाभी तक लटकते हुए प्रदर्शित हैं। बाहों में बाजूबन्द, कलाई में कंगन, कमर में करधनी तथा पैरों में पायजेब सुशोभित हो रहे हैं। योगिनियों के अलंकरण उनके नग्न शरीर पर अलौकिक अनुभूति प्रदान करते हैं।

यहाँ की योगिनी मूर्तियों में कोमलता एवं चिकनापन है। इनका शरीर सामंजस्यपूर्ण बलिष्ठ है। स्तन गोल एवं उभरे हुए हैं। इनका नितम्ब चौड़ा एवं जांघे सुडौल हैं। यहाँ योगिनियाँ नारी सौन्दर्य से परिपूर्ण देवत्व को प्रदर्शित करती हैं ये भेड़ाघाट एवं हिंगलाजगढ़ की योगिनियों से कलात्मक दृष्टि में मेल खाती हैं। यहां की मूर्तियों में मध्यकालीन भातीय मूर्तिकला स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

यहां योगिनी मूर्तियों में पीठिका पर विक्रम संवत् (1245-1188 ई०) अंकित है।[1] पीठिका पर उत्कीर्ण तिथि सम्भवतः इन मूर्तियों के निर्मित होने से सम्बन्धित है। तिथि के साथ ही योगिनियों के नामों के साथ ही एक अन्य नाम "वामदेव" भी पीठिका पर खुदा हुआ है। यह 'वामदेव" नाम सम्भवतः इस मन्दिर एवं मूर्तियों के निर्माता का है। मूर्तियों की कलात्मक विशेषताएं इनके 12वीं

1. एस० के० दीक्षित, ए गाइड टू सेन्ट्रल आर्कियोलाजिकल म्यूजियम ग्वालियर, पृ० 47-48

सदी में निर्मित होने की पुष्टि करती हैं। इन आधारों पर यह स्पष्ट होता है कि 1188 ई० में नरेसर में योगिनी मन्दिर निर्मित हुआ था एवं प्राप्त योगिनी मूर्तियाँ उस मन्दिर में स्थापित थीं। मन्दिर के स्थापत्य से सम्बन्धित अवशेष प्राप्त नहीं होते। इस स्थान के समीप एक अन्य योगिनी मन्दिर की वृत्ताकार संरचना मितावाली नामक स्थान से प्राप्त हुई है। एक सीमित क्षेत्र में दो मन्दिरों के अवशेष इसी प्रकार बाँदा एवं शहडोल में भी मिलते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि ग्वालियर का यह भू-भाग योगिनी कौल के प्रमुख केन्द्रों में सम्मिलित था।

उड़ीसा

उड़ीसा में दो योगिनी मन्दिरों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। इन मन्दिरों में आज भी मूर्तियाँ स्थापित हैं। इनमें हीरापुर का मन्दिर आकार में छोटा एवं विशिष्ट प्रकार का है। यह भारत का एकमात्र योगिनी मन्दिर है। जिसमें बाह्य दीवाल में भी मूर्तियां स्थापित हैं। यहाँ योगिनियों के साथ कात्यायनी एवं भैरव की भी प्रतिमाएं स्थापित हैं। यहाँ की योगिनियाँ उड़ीसा के नारियों का प्राकृतिक स्वरूप प्रस्तुत करती हैं। यहां योगिनियों को पीठिका पर खड़े प्रदर्शित किया गया है तथा उनके वाहन पैरों के नीचे अंकित हैं। योगिनियों के सिर के पृष्ठ भाग में प्रभामण्डल का भी अभाव है। यहाँ योगिनियों को दैवी स्वरूप में नहीं बल्कि सांसारिक क्रियायों में लीन प्रदर्शित किया गया है।

रानीपुर झरियल का मन्दिर हीरापुर से आकृति में बड़ा है। यहाँ मूर्तियों की स्थापना भारत के अन्य वृत्ताकार मन्दिरों के समान हुई हैं तथा योगिनियों को अधिकांशतः नृत्यरत प्रदर्शित किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि ये भारतीय नृत्य के विभिन्न भावों को प्रदर्शित कर रही हैं। यहां तक कि मण्डप में स्थित भैरव भी नृत्यरत हैं। यहाँ की मूर्तियाँ वातावरण के प्रभाव से सौन्दर्य-विहीन हो गई हैं।

कलिंग कला के अनूठे उदाहरणों के रूप में स्थापित इन योगिनी मूर्तियों के नाम पीठिका पर उत्कीर्ण नहीं हैं। इन मूर्तियों का निर्माण दैवी स्वरूप में न होने के कारण इनकी पहचान नहीं हो सकी है। उड़ीसा में स्थित ये मन्दिर 9वीं-10वीं सदी के मध्य निर्मित हैं। इससे यह प्रतीत होता है कि योगिनी कौल के आरम्भिक काल से ही यह क्षेत्र योगिनी कौल उपासना का प्रमुख केन्द्र रहा है। आगे इन मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों का क्रमशः वर्णन किया गया है।

1. हीरापुर

हीरापुर के योगिनी मन्दिर में योगिनी मूर्तियों के साथ ही कात्यायनी, भैरव तथा अन्य देवी-देवताओं की भी मूर्तियाँ स्थापित हैं। यहाँ की मूर्तियाँ क्लोराइट पत्थर से निर्मित हैं। भैरव को छोड़कर अन्य मूर्तियाँ स्थानक मुद्रा में हैं। यहाँ अधिकांश योगिनियों की दो भुजाएं हैं। चार भुजाओं से युक्त सोलह योगिनियाँ हैं और एक योगियी आठ भुजाओं वाली है। किसी भी योगिनी के सिर के पृष्ठ भाग में प्रभामण्डल नहीं है। यहाँ इन मूर्तियों में में सहायक आकृतियों का भी अभाव है। यहाँ प्रत्येक

योगिनी सादे पीठिका पर निर्मित की गई है। योगिनियाँ अपने वाहन पर खड़ी प्रदर्शित की गई हैं। कहीं-कहीं इनके वाहन पैरों के नीचे पीठिका पर अंकित हैं।

योगिनियों के हाथों में विभिन्न प्रकार के आयुध हैं। अधिकांश योगिनियों की भुजाएं खंडित हैं जिससे उनके आयुध ज्ञात नहीं होते हैं। उनके अवशिष्ट भुजाओं में कपाल, पात्र, धनुष, खड्ग, डमरू, त्रिशूल, नागपाश, कृपाण, कर्त्री, पुष्प आदि हैं। योगिनियों के वाहन के रूप में पैरों के नीचे पीठिका पर हाथी, कच्छप, शव, घड़ियाल, भैंसा, ऊंट, साँप, सिंह, छिन्न मस्तक, केकड़ा, मोर, चामरी गाय, गधा और सूअर आदि हैं।

योगिनी मूर्तियों में उड़ीसा के नारियों का प्राकृतिक स्वरूप स्पष्ट परिलक्षित होता है।[1] यहां योगिनियों के पशु वाहन एवं कहीं-कहीं पशु सदृश मुख से नारी सौन्दर्य के इन्द्रिय सुख की अनुभूति होती है। योगिनियों के शरीर सौष्ठव सामंजस्यता के साथ आकर्षक हैं। भव्य स्वरूप के साथ चौड़े नितम्ब एवं गोल जांघें रोमांचक स्वरूप प्रस्तुत करती हैं। इनकी पतली कमर एवं गोल भारी स्तन नारीत्व का सफल बोध कराते हैं। इनके मुस्कानयुक्त चेहरे दृष्टि को अनायास ही आकृष्ट करते हैं। योगिनियों के केश-विन्यास एवं विभिन्न प्रकार के अलंकरणों की अपनी प्रमुख विशिष्टता है। योगिनियों के केश-विन्यास विभिन्न प्रकार के हैं तथा इनके बालों के जूड़े सिर के किनारे एक ओर बंधे हैं। योगिनियों कहीं-कहीं घुँघराले, चटाईदार एवं खुले हुए बाल भी प्रदर्शित किए गए हैं। कुछ योगिनियों के सिर पर मुकुट भी है। योगिनियों के शरीर पर विभिन्न प्रकार के आभूषण उनके सौन्दर्य में वृद्धि करते हैं। उन्होंने गले में हार एवं मेखला, बाहों में बाजूबन्द, कलाई में कंगन, कानों में कुण्डल तथा पैरों में पायजेब धारण कर रखा है। योगिनियां कहीं-कहीं अलंकरणों के साथ नाग केयूर एवं मुण्डमाल आदि भी धारण किए हुए प्रदर्शित हैं।

यहां की एक प्रतिमा योगिनी पीठिका पर उत्कीर्ण छिन्न मस्तक पर खड़ी है। योगिनी की चारों भुजाएं खण्डित हैं (चित्र सं०-76)। एक अन्य प्रतिमा में योगिनी चार भुजाओं से युक्त प्रदर्शित की गई है। यहां मात्र इस समय तीन ही भुजाएं अवशिष्ट हैं। नीचे के दो हाथ घुटनों पर स्थित हैं तथा उसके ऊपर के दाहिने हाथ में डमरू है। पीठिका पर नीचे वाहन के रूप में छछून्दर खड़ा है एवं उसके पीठ पर पहिया रखा हुआ है। यह योगिनी इसी पहिए पर खड़ी है। इस प्रकार की योगिनी प्रतिमा अन्यत्र नहीं मिलती (चित्र सं०-77)।

"चामुण्डा" की मूर्ति में योगिनी का स्वरूप अत्यन्त भयानक है। इसका शरीर कंकाल सदृश तथा स्तर लटकता हुआ है। पेट भीतर की ओर धंसा है तथा इसी प्रकार गहरी आँखें भी हैं। इसकी चार भुजाएं हैं जिसमें ऊपरी दोनों ओर की भुजाओं से वह अपने सिर के ऊपर एक शेर के पैरों को पकड़े हुए उठाई है। दाहिने ओर नीचे के हाथ में खड्ग एवं बाएं हाथ में नरमुण्ड धारण किए हुए है।

---

1. विद्या दहेजिया, **आर्ट, इण्टरनेशनल**, मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 13

गले में मुण्डमाल है तथा सिर के बाल चटाईदार हैं। पीठिका पर नीचे हिरण वाहन के रूप में है। हिरण की पीठ पर योगिनी का बायां पैर स्थित है तथा दाहिना पैर खण्डित है। एच० सी० दास ने इसे "चामुण्डा" की प्रतिमा कहा है।[1] (चित्र सं०-78)।

एक अन्य "योगिनी" प्रतिमा में योगिनी दो खण्डित भुजाओं से युक्त है। यह पीठिका पर वाहन के रूप में उत्कीर्ण गिद्ध के पीठ पर खड़ी है। ऐसा प्रतीत होता है कि गिद्ध उड़ रहा है। योगिनी के केश-विन्यास में जूड़ा सिर के दाहिने ओर बंधा है (चित्र सं०-79)।

"नर्मदा" की प्रतिमा में योगिनी दो भुजाओं से युक्त है। यह पूर्ण खिले हुए कमल पर खड़ी है तथा यह कमल पीठिका पर नीचे उत्कीर्ण हाथी के पीठ पर स्थित है। वह मुंह के पास दाहिने हाथ में कपाल धारण की है जिससे वह सुरापान करती हुई प्रतीत होती है। इसका बायां हाथ खण्डित है गले में लम्बा मुण्डमाल है (चित्र सं०-6)।

यहां एक अत्यन्त आकर्षक योगिनी प्रतिमा है जिसमें योगिनी शिकारी का भाव प्रस्तुत कर रही है। वह बांएं हाथ में धनुष एवं दाहिने हाथ में तरकश धारण करते हुए तीर चला रही है। इस योगिनी का मुस्कानमय स्वरूप प्रदर्शित करता है कि वह प्रेम का शिकार करना चाहती है।[2] यह अपना बायाँ पैर सूअर के पीठ पर रखकर खड़ी है एवं दाहिना पैर खण्डित है (चित्र सं०-80)।

"आग्नेयी" की प्रतिमा में योगिनी चूहे के पीठ पर खड़ी है। इसके दाहिने हाथ में खड्ग है और बायां हाथ खंडित है। योगिनी के पीछे अग्निशिखा उत्कीर्ण है जिसके आधार पर एच० सी० दास ने इसे "आग्नेयी कहा है।[3]

यहां से प्राप्त भैरव की प्रतिमाओं में "अजयकपाद" भैरव की प्रतिमा मुख्य है। इसमें भैरव के चार हाथ एवं एक पैर है। भैरव के ऊपरी दाहिने हाथ में खड्ग है किन्तु अन्य हाथों में आयुध अस्पष्ट हैं। यह पूर्ण खिले हुए कमल पर खड़ा है। अलंकरण के रूप में इसके गले में माला एवं मुण्डमाल, बाहों में बाजूबन्द कलाई में कंगन एवं सिर पर मुकुट है। कंगन एवं बाजूबन्द सांपों से युक्त हैं। पीठिका पर नीचे दोनों ओर पुरुष आकृतियाँ हैं (चित्र सं०-84)।

योगिनी कौल उपासना से सम्बन्धित इस मन्दिर में योगिनियों की उपस्थिति से वहां के अति-आनन्दमय वातावारण का अनुमान लगाया जा सकता है। यहां योगिनियों को अनेक सांसारिक क्रियाओं में उकसाने की प्रवृत्ति दिखाते हुए, सुरापान करते हुए, शिकार करते हुए एवं पाजेब बाँधते हुए प्रदर्शित किया गया है। यहाँ योगिनियां अप्सराओं एवं यक्षिणियों की तुलना में अधिक सौन्दर्यमयी हैं। इस मन्दिर में योगिनियाँ प्राण प्रवाहित करती हुई प्रतीत होती हैं (चित्र-6, 81, 82; 83,)।

---

1. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 45
2. विद्या दहेजिया, **आर्ट इण्टरनेशनल**, मार्च-अप्रैल, 1982, पृ० 13
3. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 45

यहां की योगिनी मूर्तियाँ लगभग दो फुट ऊंची विभिन्न आलों में स्थापित हैं। हीरापुर का योगिनी मन्दिर एकमात्र ऐसा है जिसमें वाह्य दीवाल में भी मूर्तियाँ स्थापित हैं। यहाँ नौ आलों में शव योगिनियों के वाहन के रूप में प्रदर्शित हैं। इनके एक हाथ में चाकू एवं दूसरे में कपाल है। ये शव-साधना को प्रदर्शित कर रही हैं। सम्भवतः यहाँ ये नव दुर्गाओं का प्रतिनिधित्व कर रही हैं। ये भयानक स्वरूप की हैं। संरचना के मध्य चण्डी मण्डप में चार भैरव की मूर्तियाँ स्थापित हैं। इस प्रकार की मूर्तियों की स्थापना मात्र इसी मन्दिर में की गई है। सम्भवतः यह स्थानीय भिन्न मान्यताओं का प्रभाव है। इस प्रकार हीरापुर का योगिनो मन्दिर अन्य मन्दिरों से विशिष्ट है।

2. रानीपुर झरियल :

यहां मन्दिर के आलों में योगिनी मूर्तियां तथा मध्य स्थान पर मण्डप में भैरव की मूर्ति स्थापित है। यहां की मूर्तियां आकार में हीरापुर की मूर्तियों से बड़ी हैं। भैरव के साथ योगिनियों को भी नृत्यरत प्रदर्शित किया गया है। इन मूर्तियों की नृत्यरत मुद्रा भारतीय नृत्य के विभिन्न भावों को प्रदर्शित करती है।[1] ऐसा प्रतीत होता है कि योगिनियां नृत्य आरम्भ करने जा रही हैं। मन्दिर के मध्य स्थान पर (शिव) भैरव भी नृत्य हैं।

यहां पर चौदह योगिनी मूर्तियां पशु सिरयुक्त हैं। पशु के समान मुखयुक्त योगिनियों की संख्या यहाँ हीरापुर से अधिक है। इससे यह प्रतीत होता है कि यहां योगिनी कौल उपासना सम्बन्धी भिन्न मान्यता थी। पशुओं के सिर जिनकी पहचान हो सकी है वे बिल्ली, चीता, घोड़ी, शूकरी, भैंस एवं हिरण आदि के समान मुख वाले हैं। हाथी के समान मुखयुक्त योगिनी गणेश की स्त्री संगिनी प्रतीत होती है।

यहां की मूर्तियां बलुवे पत्थर से निर्मित साधारण प्रकार की हैं। ये शिल्प की दृष्टि में हीरापुर की मूर्तियों से साम्य नहीं रखती। उत्तम कोटि का पत्थर न होने के कारण इन मूर्तियों में कोमलता एवं आकर्षण का अभाव है। यहां प्रभामण्डल भी नहीं बना है। इस मन्दिर में इस समय कुल 50 मूर्तियां उपलब्ध हैं तथा अन्य सम्भवतः स्थानान्तरित हो गई हैं।

यहां से प्राप्त योगिनी मूर्तियों में "मातंगी" की मूर्ति आकर्षक है। योगिनी पीठिका पर नृत्य कर रही है। यह दो भुजाओं से युक्त है जिसकी बायें ओर की भुजा खण्डित है। अवशिष्ट भुजा में योगिनी खड्ग धारण किए है एवं इसका मुख हाथी के समान है (चित्र सं०-85)।

एक अन्य योगिनी प्रतिमा में योगिनो मानवीय स्वरूप की दो भुजाओं से युक्त है। इसकी बाईं भुजा खण्डित है तथा दाहिने भुजा में खड्ग धारण की है। योगिनी नृत्य कर रही है (चित्र सं०-86)।

---

1. विद्या दहेजिया, आर्ट इण्टरनेशनल मार्च-अप्रैल 1982, पृ० 14

अश्व सदृश मुखयुक्त योगिनी की दो भुजायें हैं। उसकी बाईं भुजा घुटने पर स्थित है और दायें में खड्ग है। योगिनी नृत्यरत है (चित्र सं०-87)।

यहां एक चार भुजाओं से युक्त स्त्री स्वरूप में योगिनी प्रतिमा है। यह नृत्य कर रही है। योगिनी का एक हाथ कमर पर एवं दूसरा स्तर पर स्थित है। शेष दो हाथों में पात्र एवं अन्य कोई आयुध धारण की है।

"शिव-दूती" की प्रतिमा में योगिनी के तीन मुख हैं। इसकी चार भुजाओं में तीन अवशिष्ट हैं। योगिनी, खड्ग, अक्षमाल एवं काल दर्पण धारण की है। एच०सी० दास ने इसे "शिव-दूती" कहा है।[1]

एक साँप सदृश मुखयुक्त योगिनी प्रतिमा प्राप्त हुई है। इस प्रकार की योगिनी प्रतिमा के उदाहरण अन्यत्र नहीं मिलते हैं (चित्र सं०-88)।

नृत्यरत भैरव की प्रतिमा देखकर यह प्रतीत होता है कि नृत्य के देवता यहाँ नृत्यरत योगिनियों से घिरे हुए हैं। भैरव तीन सिर एवं आठ भुजाओं से युक्त है। भैरव के हाथों में सर्प, कपाल, कालदर्पण, अक्षमाला, खोपड़ी खड्ग है। भैरव के साथ गणेश एवं पार्वती भी है (चित्र सं०-89)

यहाँ से प्राप्त 28 योगिनियां दो भुजाओं, 18 योगिनियां चार भुजाओं तथा कुछ छः या आठ भुजाओं से युक्त हैं। इनके आयुध के रूप में खड्ग, त्रिशूल, पात्र, पाश, काल, दर्पण, अक्षमाला, वाद्य-यंत्र, चिराग, मेंढक, सारंगी, कृपाण, तीर, वज्र, कमल, मूसल, फन्दा एवं धनुष आदि है। मात्र एक मूर्ति में शव को वाहन के रूप में प्रदर्शित किया गया है। शेष मूर्तियों में वाहनों का अभाव है।

योगिनियां पशुओं के समान मुखयुक्त हैं। इस प्रकार की योगिनियाँ लोखरी, भेड़ाघाट, हीरापुर आदि स्थानों से भी प्राप्त हुई हैं। इन योगिनियों में नारी सौन्दर्य की काम सम्बन्धी अनुभूति एवं आकर्षण स्पष्ट परिलक्षित होता है। पशु-पक्षियों के मुखयुक्त योगिनियों के सन्दर्भ में एक ग्रन्थ में कहा गया है कि पृथ्वी पर अवतरित होने के बाद योगिनियों ने वहां के जीव-जन्तुओं का स्वरूप धारण कर लिया।[2] कई ग्रन्थों में देवियों की सहायिकाओं के रूप में भी योगिनियों का वर्णन किया गया है।[3] यह कहा गया है कि शिव के अनेक गण थे जिनमें बहुत से पशु-पक्षियों के मुखयुक्त थे। यदि शिव के

---

1. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 47
2. पी० सी० बागची, **कौलज्ञान निर्णय एण्ड माइनर टेक्स्ट्स आफ दी स्कूल आफ मत्स्येन्द्रनाथ**, अ० 23
3. **महाभागवत पुराण**, अ० 59

सहायक गण हैं तो यह स्वाभाविक है कि देवी की भी सहायिकायें इसी प्रकार रही होगी। यह मात्र ग्रन्थों में ही नहीं बल्कि विभिन्न मन्दिरों की मूर्तियों एवं चित्रकला में भी (चित्र-4) उदाहरणस्वरूप मिलती है। मूर्तियों एवं चित्रकलाओं में अनेक स्थानों पर सम्भवतः इसी प्रभाव में योगिनियों को पशु-पक्षियों के मुखयुक्त प्रदर्शित किया गया है शिव के गण के रूप में योगिनियों ने कालान्तर में प्रतिष्ठा प्राप्त किया था।

रानीपुर झरियल की मूर्तियों में पीठिका पर योगिनियों के नाम उत्कीर्ण नहीं है अतः इनकी पहचान कठिन है। ये मूर्तियाँ अपनी कलिंग कला की विशिष्टताओं के साथ प्रदर्शित हैं।

————

उपसंहार

भारत अनेक धर्मों का जनक रहा है, जिनमें वैदिक, बौद्ध, जैन, शैव, शाक्त व वैष्णव प्रमुख थे। इन सभी धर्मों का प्रभाव व्यक्तिगत स्तर पर जनमानस पर था और क्रमशः वे दैनिक जीवन के अंग बन गए थे। भारत के धार्मिक इतिहास में शाक्त तांत्रिक धर्म का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। इस धर्म ने अपनी सहज सुलभता के कारण समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रभावित किया। योगिनी कौल सम्प्रदाय शाक्त तान्त्रिक धर्म का एक परिवर्तित रूप है। योगिनियों के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों ने मत व्यक्त किया हैं, परन्तु उनमें आपस में सामंजस्यता नहीं है। योगिनियाँ कौन हैं तथा इनका हिन्दू धर्म में क्या स्थान रहा है ? इस विषय पर विद्वानों में मतभेद है। योगिनियां क्रियाशील शक्ति के रूप में ब्रह्माण्ड के सृजन, संरक्षण एवं संहार की देवी मानी जाती हैं। योगिनियां वे स्त्रियाँ कहलाती थीं जो योग साधना से आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करके सिद्ध होती थीं। इनकी उपासना शिव के परिवार के देवता के रूप में भी होती रही है। योगिनियों का उल्लेख प्राचीन ग्रंथों में भी मिलता है, परन्तु योगिनी कौल के स्वरूप का उद्भव लगभग 8वीं-9वीं सदी में हुआ। इस कौल की उत्पत्ति निश्चित नहीं है, क्योंकि यह पूर्णरूपेण गुप्त क्रियाओं पर आधारित था।

इस कौल के संस्थापक नाथ सम्प्रदाय के महान् योगी मत्स्येन्द्रनाथ थे। मध्यकालीन भारत के धार्मिक इतिहास में मत्स्येन्द्रनाथ एक उल्लेखनीय व्यक्ति हैं। इन्हें गोरखनाथ का गुरू भी कहा गया है। इनको विभिन्न नामों से यथा मत्स्येन्द्र, मच्छेन्द्र, मीन, लुईया, अवलोकितेश्वर आदि से सम्बोधित किया गया है। काश्मीर में उन्हें शैवाचार्य कहा जाता है तथा यह माना जाता है कि वे आदिनाथ (शिव) द्वारा निर्देशित होते हैं। किवदन्ती है कि उनके माता-पिता ने उन्हें समुद्र में फेंक दिया था, जहां एक मछली द्वारा निगले जाने के पश्चात् उन्होंने मछली के पेट से ही शिव-पार्वती के वार्तालाप द्वारा ध्यान योग एवं ज्ञान योग सीखा था। ऐसा कहा गया है कि स्त्रियों में उनकी विशेष रुचि थी एवं कई राजाओं के मृत्यु के पश्चात् उनके शरीर में प्रवेश कर उन्होंने उनकी रानियों के संसर्ग का लाभ भी उठाया है। उन्होंने कदली वन की स्त्रियों के मोह जाल में फंसकर योगिनी कौल का सर्वप्रथम अभ्यास किया। उन्होंने कदली में ही लब्ध शास्त्र का संकलन किया था। मत्स्येन्द्रनाथ 9वीं सदी के मध्य या अन्त तक विद्यमान थे। "तंत्रलोक टीका" एवं "कौल ज्ञान निर्णय" के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने कामरूप में ही कौल साधना किया था। मत्स्येन्द्रनाथ द्वारा संकलित ग्रंथ "कौल ज्ञान निर्णय"

में उल्लिखित कौल ज्ञान को योगिनी कौल कहा जाता है। यह योगिनी कौल से सम्बन्धित एकमात्र प्रामाणिक ग्रन्थ है। यही कौल कालान्तर में माबत एवं सिद्धामृत नाम से प्रचारित हुआ।

योगिनी कौल सर्वदा शक्ति तंत्र के रूप में प्रभावी था। उसने योगिनियों के माध्यम से जादू एवं आलौकिकता में भी स्थान ग्रहण कर लिया था। योगिनियों के नामों व स्वरूपों की अवधारणा स्थानीय मान्यताओं पर आधारित थी। योगिनियों की संख्या के संदर्भ में विद्वानों में आपस में मतभेद हैं एवं इस सन्दर्भ में विभिन्न विद्वानों ने अपने मत भी प्रकट किए हैं। विद्वानों ने योगिनियों को मूलतः मातृका कहा है एवं इनकी चौंसठ संख्या को सात या आठ मातृकाओं की संख्या में गुणात्मक वृद्धि का परिणाम बताया है। इस सन्दर्भ में मैंने देश के विभिन्न स्थानों से प्राप्त ग्रन्थों एवं मन्दिरों की चौदह योगिनी नामावलियों का तुलनात्मक अध्ययन किया है। इन सूचियों में योगिनियों के बहुत कम ऐसे नाम हैं जो एक दूसरे से मेल खाते हैं। इस अध्ययन से योगिनियों के स्वरूपों का भी निर्धारण सम्भव नहीं है। योगिनियों के नामावलियों, स्वरूपों एवं संख्या के सन्दर्भ में उपयुक्त ग्रन्थों का अभाव है। प्राप्त विभिन्न ग्रन्थों व मन्दिरों में स्थापत्य मूर्तियों से योगिनियों की संख्या का निर्धारण सम्भव नहीं है। प्राप्त कुल चौदह सूचियों में मात्र सात सूचियां ही इनकी संख्या चौंसठ होने की पुष्टि करती हैं। जिन सूचियों में योगिनियों की संख्या चौंसठ उल्लिखित है, उसमें भी इनके नामों में सामंजस्यता नहीं है। विभिन्न सूचियों में भिन्नता के कारण किसी भी सूची को परम्परागत एवं प्रामाणिक कह पाना सम्भव नहीं है। विद्वानों के इस कथन से मैं सहमत नहीं हूं कि सात या आठ मातृकाएं ही प्रमुख योगिनियां थीं, किन्तु कालांतर में इनकी संख्या गुणात्मक प्रकार से बढ़कर चौंसठ हो गई। प्राप्त चौदह सूचियों में मात्र पांच सूचियों में ही सात या आठ मातृकाओं के उल्लेख मिलते हैं तथा अन्य सूचियों में कहीं-कहीं मातृकाओं के नामों का उल्लेख मिलता है। यहां पर मातृकाओं के अलावा अन्य योगिनियों के नामों में भी व्यापक भिन्नता है। उल्लेख्य है कि मातृकाओं एवं योगिनियों के कार्यों में अन्तर नहीं है एवं दोनों ही दुर्गा की सहचरी कही गई हैं।

प्राप्त विभिन्न योगिनी सूचियों में हिन्दू, बौद्ध एवं जैन धर्मों की देवियां भी योगिनियों के रूप में उल्लिखित हैं। कहीं कहीं दस महाविद्याओं, नदी देवियों, कात्यायनी एवं यक्षिणियों को भी योगिनियों की सूची में सम्मिलित कर लिया गया है। विभिन्न ग्रन्थों की सूचियों के साथ अध्ययन योग्य पांच योगिनी मन्दिरों के मूर्तियों का भी तुलनात्मक अध्ययन किया गया। इन मूर्तियों के नाम पीठिका पर उत्कीर्ण हैं। प्राप्त मूर्तियों में भेड़ाघाट से आठ, हीरापुर से छः, शहडोल, हिंगलाजगढ़ एवं नरेसर से तीन की संख्या में मातृकाओं की मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। मूर्तियों में भी योगिनियों के नामों में आपस में भिन्नता है। इन मूर्तियों में योगिनियों के रूप में नदी देवियों एवं कात्यायनी की भी मूर्तियां हैं। अधिकांश मन्दिरों में महिषासुरमर्दिनी की मूर्तियों पर उनके स्थानीय नाम उत्कीर्ण हैं। खजुराहो में हिंगलाज, भेड़ाघाट में तेरवां, एवं शहडोल में कृष्णा भगवती के नाम से महिषासुरमर्दिनी को प्रदर्शित किया गया है (देखें पृ० 130-31 की तालिका)।

विभिन्न प्रकार के योगिनी सूचियों का तुलनात्मक अध्ययन करने पर यह प्रतीत होता है कि आरम्भ में इस कौल की उपासना चौंसठ योगिनियों से ही होती थी। इस कथन की पुष्टि लगभग 9वीं

सदी में सम्पादित "अग्निपुराण" तथा इसी समय में निर्मित प्राचीनतम् योगिनी मन्दिर से होती है। आरम्भ में इस कौल का अभ्यास मत्स्येन्द्रनाथ ने कामरूप की स्त्रियों के साथ किया था। ऐसा कहा गया है कि कामरूप में प्रत्येक घर में स्त्री योगिनी के रूप में थी। कालान्तर में इस कौल के प्रसार के फलस्वरूप विभिन्न स्थानीय परम्पराओं व मान्यताओं ने इसे प्रभावित किया। योगिनियों को दैवी स्वरूप प्रदान करते हुए विभिन्न स्थानीय मान्यताओं के अनुसार उन्हें देवियों के नाम प्रदान किए गए। इनी परम्परा में प्रमुख हिन्दू, बौद्ध एवं जैन धर्मों की देवियां, मातृकाओं, नदी देवियों, दस महाविद्याओं एवं कात्यायनी को योगिनियों में सम्मिलित कर लिया गया। इस कथन की पुष्टि विभिन्न ग्रन्थों से प्राप्त योगिनी सूचियों व मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों से होती है। विभिन्न क्षेत्रीय मान्यताओं ने योगिनियों के नामों के साथ ही उनकी संख्या को भी प्रभावित किया है। योगिनी कौल को विभिन्न कालों में परिवर्तन के विभिन्न स्तर से होकर गुजरना पड़ा है जिससे उसकी मान्यताएं भीं प्रभावित होती रही हैं। इन प्रभावों को विभिन्न क्षेत्रों में सम्पादित ग्रन्थों व निर्मित मन्दिरों में स्पष्टतः देखा जा सकता है।

मत्स्येन्द्रनाथ द्वारा संस्थापित इस इस कौल का अभ्यास स्त्रियों के साथ किया जाता था। इस मार्ग के उपासक देवी की उपासना कुल एवं शिव को अनुकूल रूप में करते थे। इस उपासना में योगिनी का प्रमुख स्थान था। ऐसा कहा गया है कि शरीर की बत्तीसी (32) धमनियों के मध्य प्रत्येक धमनी पर दो योगिनियाँ स्थित होतो हैं। योगिनियां आन्तरिक एवं बाह्य ध्यान के योग्य होती हैं। इन के विभिन्न स्वरूपों की उपासना अकेले या समूह में चक्र में होती है। इनकी उपासना मातृ, बहन या पत्नी के रूप में की जाती थी। यह कहा गया है कि योगिनियों की उपासना चक्र में करने से चरम सुख की प्राप्ति होती है। इस उपासना में पुरुष शिव के स्वरूप व स्त्रियां योगिनी स्वरूप होती थीं। योगिनी चक्र उपासना में आठ स्त्रियां स्वयं को साधक पुरुष पर प्रतिपादित करती थीं। यह उपासना प्रतीक रूप में भी होती थी। यह चन्द्र संबंधी स्वरूपों का ध्यान है तथा प्रत्येक स्वरूप में काम संबंधी देवियों की विशेष गुण व मुद्राएं होती हैं। यहाँ योगी व योगिनियां तांत्रिक गुरू कहे जाते हैं।

योगिनी चक्र उपासना के पाँच आवश्यक तत्त्व मत्स्य, मांस, मुद्रा, मद्य एवं मैथुन कहे गए हैं तथा इनके प्रत्येक संस्कृत के "म" शब्द से आरम्भ होते हैं। योगिनी जागृति करके सिद्धि प्राप्त करने के उल्लेख मिलते हैं, किन्तु इस उपासना से मोक्ष प्राप्ति का उल्लेख कहीं नहीं मिलता। इस उपासना से जादुई व अलौकिक शक्ति प्राप्त करके अन्यों को प्रभावित किया जा सकता है। इससे सिद्धियों के साथ ही काला जादू से संबंधित विशेषताओं का अर्जन होता है। इससे किसी भी स्त्री को सम्बोधित करके आकर्षण शक्ति द्वारा उसके साथ स्वतंत्र व्यवहार किया जा सकता है। "भूत डामर तंत्र" में कहा गया है कि साधक को सिद्धि पाने के बाद योगिनी द्वारा मनचाही वस्तुएं प्राप्त होती हैं। विभिन्न ग्रन्थों में योगिनियों द्वारा मद्यपान करने व उनके पेय पदार्थों के भी वर्णन मिलते हैं। उनका पशु मांस भक्षण, रक्त-प्रेम अनेक स्थानों पर उल्लिखित है। इस उपासना में शवसाधना का भी प्रावधान है, जिसकी पुष्टि ग्रन्थों व प्राप्त मूर्तियों से होती है। इस उपासना में चौंसठ योगिनियों की, चौंसठ भैरव, चौंसठ कलाओं एवं चौंसठ रतिबन्ध (लैंगिक सुख) से संबंधित किया जा सकता है।

स्थापत्य

इस कौल उपासना की प्रकृति के कारण ही योगिनी मन्दिर निर्जन स्थानों पर बनाये जाते थे। इस कौल अभ्यास को बस्ती के समीप सम्पन्न करने में अनेक कठिनाइयाँ थीं, अतः अधिकांश मंदिर जंगलों में, पहाड़ियों पर एवं नदी के किनारे निर्मित हैं। भारतीय स्थापत्य में योगिनी मन्दिरों की अपनी विशिष्टता है। इन मन्दिरों के स्थापत्य संबंधी उल्लेख शिल्पशास्त्रों में भी नहीं मिलते। ये मंदिर मुख्यतः पूर्व एवं मध्य भारत के विभिन्न स्थानों पर प्राप्त हुए हैं। विद्वानों ने इनका काल निर्धारण 9वीं-12वीं सदी के मध्य किया है। यह काल भारत में योगिनी कौल के प्रचलन की पुष्टि करता है। इस अध्ययन द्वारा मुझे भारत में कुल तेरह योगिनी मन्दिरों के अवशेष प्राप्त हुए हैं।

भारत में प्राप्त योगिनी मन्दिर वृत्ताकार एवं चौकोर भू-निवेष योजना के अन्तर्गत निर्मित हैं। इन संरचनाओं ने संबंधित स्थापत्य पर विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग मत प्रकट किया है। इस सन्दर्भ में एच० सी० दास का मत अधिक उचित प्रतीत होता है। उनका मत है कि भारत में विभिन्न कालों में स्थापत्य अपने भीतर नाना प्रकार के तत्त्वों को समाहित करते हुए विकसित हुआ है। विभिन्न क्षेत्रीय विशिष्टताओं के प्रभाव में मन्दिरों के स्थापत्य जटिल हो गए हैं। इन्हीं स्थापत्य उदाहरणों में योगिनी मन्दिर भी आते हैं। उन्होंने सम्पूर्ण संरचना पर विचार करते हुए इन मन्दिरों को योगिनी कौल उपासना के अनुरूप मण्डल, यंत्र एवं चक्र पर आधारित निर्मित कहा है। योगिनी मन्दिरों का निर्माण कौल उपासना के विधाओं के अनुरूप हुआ है।

सर्वप्रथम योगिनी कौल उपासना वृत्ताकार एवं चौकोर मण्डल को कागज, कपड़ा, धातु एवं प्रस्तर पर निर्मित करके की जाती थी। इसी उपासना क्रम में कालान्तर में योगिनी मन्दिरों का निर्माण हुआ। यंत्र को देवता के शरीर की संज्ञा दी गई है एवं इन्हीं आधारों पर योगिनी मन्दिरों में योगिनी यंत्र की भी स्थापना की जाती थी। योगिनी मन्दिरों का स्वरूप चक्र की तरह होता है एवं यह चक्र अनवरत गति का द्योतक होता है। इन मन्दिरों में चक्र शिव एवं शक्ति के रूप में तथा मण्डल असमाप्ति के सिद्धान्त के रूप में होता है। इन मन्दिरों में मध्य स्थान पर शिव अपने चारों ओर शक्तियों (योगिनियों) से घिरे हैं। शिव एवं शक्ति के प्रतीक स्वरूप ये मन्दिर भारतीय स्थापत्य कला के एक भिन्न रूप को प्रस्तुत करते हैं। चौकोर मन्दिरों का प्रचलन वृत्ताकार मन्दिरों की अपेक्षा कम था।

इन मन्दिरों की बाह्य दीवाल सादे पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़ों को जोड़कर बनाई गई है। ये आकाश की ओर खुले छत के हैं तथा भीतर आंगन की ओर वाह्य दीवाल में आले निर्मित हैं। इन आलों में योगिनी मूर्तियां स्थापित हैं। अधिकांश मन्दिरों में मध्य स्थान पर निर्मित मण्डप में शिव की मूर्ति स्थापित है जिन मन्दिरों के मध्य स्थान के मण्डप व शिवमूर्ति के अवशेष प्राप्त नहीं हैं, उनमें भी मण्डप में शिवमूर्ति अवश्य स्थापित रही होगी। इन मन्दिरों में सादे प्रवेश द्वार निर्मित हैं। ये मन्दिर

अपने भीतर हिन्दू, बौद्ध एवं जैन स्थापत्य कला की विशिष्टताओं को समोहित किए हुए दृस्टिगत होते हैं। भारत के सभी योगिनी मन्दिर क्षेत्रीय विशिष्टताओं से प्रभावित होने के कारण आपस में पूर्णरूपेण नहीं मिलते। अधिकांश योगिनी मन्दिरों के भग्नावशेष ही प्राप्त होते हैं। इन मन्दिरों में मात्र मितावली, भेड़ाघाट, हीरापुर एवं रानीपुर झरियल की संरचनाएं ही पूर्णरूपेण सुरक्षित हैं। विभिन्न राजाओं द्वारा निर्मित इन संरचनाओं में उनके विचारों का समाहित होना स्वाभाविक है। इन्हीं कारणों से इन मन्दिरों के स्थापत्य में विभिन्नता दृष्टिगत होती है।

योगिनी कौल उपासना पूर्णरूपेण गुप्त क्रियाओं पर आधारित थी जिससे विस्तृत विवरणों का अभाव है। इन्हीं क्रियाओं के फलस्वरूप ये मन्दिर निर्जन स्थान पर निर्मित हैं। इनकी गोपनीयता के सन्दर्भ में ग्रन्थों में भी उल्लेख मिलते हैं। कहा गया है कि इस उपासना को गोपनीयता भंग करने वाले व्यक्ति को योगिनियों का कोपभाजन बनना पड़ता है। इन्हीं कारणों से यह कौल उपासना सदियों तक गोपनीय बनी रही।

मूर्तिकला

योगिनी मन्दिरों के स्थापत्य की तरह योगिनी मूर्तियां भी योगिनी कौल उपासना के अनुरूप निर्मित की गई है। योगिनी मूर्तियाँ कला ग्रन्थों में वर्णित परम्पराओं के आधार पर धार्मिक प्रतीकों के रूप में विद्यमान है। अधिकाँश योगिनी मूर्तियों को देखने से ही योगिनी कौल की गुप्त क्रियाओं पर प्रकाश पड़ता है। योगिनी मूर्तियां विभिन्न क्षेत्रीय विशिष्टताओं के साथ हिन्दू, बौद्ध एवं जैन धर्मों के तत्त्वों से परिपूर्ण हैं। इन योगिनी मूर्तियों में हिन्दू, बौद्ध एवं जैन देवियां अपनी धार्मिक विशिष्टताओं के साथ सम्मिलित हैं। विभिन्न राजवंशों के संरक्षण में पल्लवित योगिनी मूर्तियों का शिल्प भौमकर, सोमवंशी, चन्देल एवं कल्चुरी राजवंश के कलात्मक उदाहरण के रूप में विद्यमान हैं। प्राप्त विभिन्न मूर्तियों में आँचलिक मान्यताओं एवं परम्पराओं के साथ स्वरूपों का अंकन हुआ है। भौमकरों के संरक्षण में निर्मित हीरापुर की मूर्तियां उड़ीसा के नारियों का प्राकृतिक स्वरूप प्रदर्शित करती है। यहाँ योगिनियों को विभिन्न सांसारिक क्रियाओं तथा शिकार करते हुए, पाजेब बांधते हुए, सुरापान करते हुए तथा शवसाधना में लीन आदि रूपों से प्रदर्शित किया गया है। यहां योगिनियां पीठिका पर अंकित वाहन के ऊपर खड़ी हैं, तथा उनके साथ कात्यायनी एवं भैरव का भी अंकन हुआ है।

सोमवंशी शासकों द्वारा निर्मित रानीपुर झरियल की योगिनी मूर्तियां अपने भिन्न मान्यताओं के आधार पर निर्मित हैं। यहाँ योगिनियां नृत्य करती हुई प्रदर्शित की गई हैं। ये भारतीय नाट्यशास्त्र के विभिन्न भावों को प्रस्तुत करती हुई प्रतीत होती हैं। यहां अधिकांश योगिनियां पशु-मुख युक्त हैं। इनके साथ वाहनों एवं प्रभामण्डल का अभाव है। कलिंग कला में कौल एवं काम सम्बन्धी मूर्तियों का अंकन सामाजिक एवं आध्यात्मिक परिपेक्ष में हुआ है। यहां योगिनियों के स्वरूपों की रचना स्वर्गिक देवियों की तरह की गई है।

चन्देलों द्वारा निर्मित मूर्तियां सर्वाधिक स्थानों से प्राप्त हुई है। चन्देलों ने कला के क्षेत्र में नई धारा के साथ नए कलात्मक स्वरूपों का उत्सर्जन किया है। चन्देलों द्वारा निर्मित मूर्तियां मुख्यत: रिखियां, लोखरी, दुधई, खजुराहो, हिंगलाजगढ़, शहडोल एवं नरेसर से अध्ययन योग्य प्राप्त हुई हैं। इन मूर्तियों के कलात्मक विशिष्टताओं को विभिन्न पारम्परिक, आंचलिक मान्यताओं ने प्रभावित किया हैं। इनकी भाव भंगिमाएं अपरिमित हैं तथा भुजाओं का उपयोग स्तन को उभारने हेतु किया गया है। इनकी आंखें अधखुली हैं तथा भौंह धनुषाकार हैं। यहां योगिनियों का अंकन मानवीय स्वरूपों के साथ ही पशु-पक्षियों के मुखों के समान भी किया गया है। यह स्थानीय प्रभावों का परिणाम प्रतीत होता है। मूर्तियों में पीठिका पर व्यांतर देवताओं के साथ ही सहायकों को विभिन्न क्रियाओं से लीन प्रदर्शित किया गया है। मूर्तियों में नीचे पीठिका पर वाहन के रूप में पशुपक्षी शव एवं प्रेत अंकित हैं। योगिनी मूर्तियां कौल उपासना की प्रमुख क्रिशाओं चक्रपूजा, योनिपूजा, मांसभक्षण, मद्यपान, जादुई शक्ति, शवसाधना एवं मैथुनक्रिया आदि से सम्बन्धित निर्मित की गई हैं। योगिनियों की विभिन्न मूर्तियां उनके विभिन्न स्वरूपों को प्रदर्शित करती हैं। चन्देल राजाओं के काल में निर्मित प्रचुर संख्या में योगिनी मूर्तियां मध्य प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश में योगिनी कौल के प्रसार को स्पष्ट इंगित करती हैं।

कल्चुरियों द्वारा निर्मित भेड़ाघाट का योगिनी मन्दिर अन्य मन्दिरों की अपेक्षा अधिक सुरक्षित है। इस मन्दिर के योगिनी मूर्तियों में स्थानीय कला के मूल तत्त्वों का गहराई से अंकन हुआ है इनमें कोई भी स्थान रिक्त नहीं है एवं इनकी संरचना भारीपन के साथ गोलाकार है। इनमें चौकोर चेहरे, उभरे कपोल, बड़े मुख, बन्द आंखें, एवं गठीले मांसल शरीर का वैयक्तिक विशेषताओं के साथ अंकन हुआ है। ये सभी मूर्तियां योगिनी कौल के विधानों पर आधारित हैं।

देश के विभिन्न भागों से प्राप्त भव्य एवं आकर्षक योगिनी मूर्तियां आंचलिक प्रभावों से युक्त नारी सौन्दर्य की पराकाष्ठा के साथ निर्मित हैं। इनका नग्न कुमारियों के रूप में अंकन मन्दिरों के वातावरण को उत्तेजक बनाने में सहायक होता है। इनके शरीर पर अलंकृत आभूषण विभिन्न स्वीकृत प्रतीकों के रूप में हैं। यहाँ सिर पर मुकुट-अक्षोभ्य, गले का हार-रत्नसंभव, कुण्डल-अमिताभ, बाजूबन्द-वैरोचन, मेखला-अमोघ सिद्धि, मुण्डमाल-विकास एवं संहार, कपाल-संघारात्मक स्वरूप, घण्टापापों से मुक्ति को प्रदर्शित करते हैं। इनके वाहन शव एवं प्रेत के संदर्भ में कहा गया है कि निष्क्रिय शिव पर महाकाली आदि शक्ति के रूप में संयोग की मुद्रा में स्थित होती हैं। योगिनियों के चेहरे पर भव्य मुस्कान महासुख को प्रदर्शित करता है तथा नृत्य एवं गायन यहाँ ध्यान एवं मंत्र का प्रतीक है। इस प्रकार इन सभी गुणों से युक्त योगिनी मूर्तियाँ भारत के विभिन्न भागों में निर्मित प्राप्त हुई हैं।

अधिकांश मूर्तियों की पीठिका पर योगिनियों के नाम उत्कीर्ण हैं। लोखरी, रिखियाँ, हीरापुर एवं रानीपुर झरियल की योगिनी मूर्तियों पर नाम उत्कीर्ण न होने के कारण उनकी पहचान नहीं हो सकी है। योगिनियों के नामों में भिन्नता एवं प्रामाणिक मूर्ति शास्त्रीय विधान न होने से इन मूर्तियों

का मूर्तिविज्ञान सम्बन्धी अध्ययन सम्भव नहीं है। इन मूर्तियों को स्थानीय मान्यताओं ने इतना प्रभावित किया है कि योगिनियों की उपासना के विधानों के अतिरिक्त इनके स्वरूपों में आपस में कोई सामंजस्यता नहीं है।

राज्याश्रय :

यह एक सामान्य धारणा रही है कि शाक्त तांत्रिक कौल के प्रचार-प्रसार एवं उन्नति के पीछे राजसत्ता का पर्याप्त संरक्षण रहा है। सभी स्थापत्यों का निर्माण राजाओं के धार्मिक विश्वास एवं अभिरुचियों के अनुरूप हुआ है। ताँत्रिक ग्रन्थों में योगिनी कौल सम्प्रदाय को राज्याश्रय में विकसित होने के उल्लेख मिलते हैं। ग्रन्थों में कहा गया है कि राजा द्वारा योगिनी कौल उपासना करने से उसकी प्रसिद्धि समुद्र पार तक फैली है। "स्कन्दपुराण" में उल्लेख मिलता है कि योगिनी कौल उपासना करने से राजाओं को विजय एवं ख्याति प्राप्त होती है। इन मन्दिरों को प्रस्तर द्वारा निर्मित कराने की आवश्यकता भी इस कौल को राज्याश्रय प्राप्त होने की पुष्टि करते हैं।

योगिनी मन्दिरों के निर्माण में मुख्यत: मध्य भारत के कलचुरी व चन्देल तथा उड़ीसा के भौम एवं सोमवंशी शासकों का योगदान रहा है। भारत के कुल प्राप्त तेरह (13) योगिनी मन्दिरों में मात्र भेड़ाघाट, खजुराहो, मितावली, दुधई, वाराणसी, बदोह, हीरापुर एवं रानीपुर झरियल के मन्दिरों के स्थापत्य अवशेष मिलते हैं। अन्य स्थानों रिखियां लोखरी, शहडोल, हिंगलाजगड़ एवं नरेसर से मात्र योगिनी मूर्तियां ही प्राप्त हुई हैं तथा उनके स्थापत्य अवशेष समाप्त हो चूके हैं। इसके अतिरिक्त जैन ग्रन्थों में चार अन्य मन्दिरों भड़ौच, अजमेर, उज्जैन, एवं योगिनीपुर के उल्लेख प्राप्त होते हैं। इन स्थानों पर अब किसी भी योगिनी मन्दिर का अवशेष नहीं मिलता। बाद में अभिलेखों से यह ज्ञात होता है कि 16वीं सदी तक कुछ मन्दिरों में उपासना होती थी, किन्तु इसके बाद के कालों में इस उपासना के उल्लेख नहीं मिलते। प्राप्त कुछ चित्रों से यह ज्ञात होता है कि सम्भवत: कालान्तर में इसकी उपासना प्रतीकात्मक रूप में होने लगी।

योगिनी मन्दिरों के निर्माण में राजाओं के सम्बन्धित होने की सम्भावना पर तांत्रिक ग्रन्थों में उल्लिखित बातों से पुष्टि होती है। इस संदर्भ में कोई भी अभिलेख नहीं प्राप्त हो सका। ऐसा उल्लेख प्राप्त होता है कि 81 योगिनियों की उपासना करने पर राजाओं को युद्ध में विजय मिलता है। सम्भवत: इसी प्रेरणा से कल्चुरियों ने भेड़ाघाट में 81 योगिनियों का मन्दिर बनवाया। सम्भवत: 10वीं सदी के उत्तरार्द्ध में युवराज देव द्वितीय ने अपने राज्य व्यवस्था की सुरक्षा हेतु इस मन्दिर को निर्मित कराया, किन्तु योगिनियां उसकी सुरक्षा न कर सकीं एवं वह परमारों से युद्ध में पराजित हुआ।

योगिनी कौल से सम्बन्धित सर्वाधिक मन्दिरों चन्देलों के शासन काल में निर्मित हुए हैं। इस वंश ने मध्य भारत के भू-भाग पर लगभग 9वीं-13वीं सदी तक राज्य किया। उस समय चन्देलों के राज्य को मुस्लिम हमलों से भय था एवं उन्होंने अपने राज्य की सुरक्षा हेतु योगिनियों के अनेक मन्दिर बनवाए। चन्देलों द्वारा योगिनी मन्दिरों के निर्माण से सम्बन्धित उल्लेख नहीं मिलते, किन्तु उनकी

राजधानी खजुराहो में निर्मित योगिनी मन्दिर को अनदेखा नहीं किया जा सकता। खजुराहो में कौल-कापालिक सम्प्रदाय से सम्बन्धित अनेक मन्दिर हैं एवं योगिनी कौल इसी सम्प्रदाय की एक शाखा है। इससे यह प्रमाणित होता है कि इस कौल को चन्देलों का संरक्षण प्राप्त था। इसी परम्परा में सम्भवतः विभिन्न चन्देल शासकों ने अपने राज्य के विभिन्न भू-भागों पर योगिनी मन्दिरों का निर्माण करवाया।

मध्य भारत के अतिरिक्त उड़ीसा में दो योगिनी मन्दिर प्राप्त हुए हैं। हीरापुर का योगिनी मन्दिर सम्भवतः शान्तिकर की महारानी "हीरा महादेवी" ने निर्मित करवाया। हीरा महादेवी भौमकर वंश की थीं तथा इस वंश ने उड़ीसा में दो सौ वर्षों तक राज्य किया था। यहां 18 शासकों में 5 महा-रानियों ने राज्य किया था। इस काल में उड़ीसा में हिन्दू-तांत्रिक धर्म चरमोत्कर्ष पर था।

उड़ीसा का दूसरा मन्दिर रानीपुर झरियल में स्थित है जिसे सोमवंशी शासक द्वारा निर्मित कराया गया है। यह स्थान 7वीं-10वीं सदी के मध्य शिव एवं शक्ति उपासना का प्रमुख केन्द्र था एवं उससे सम्बन्धित यहां अनेक मन्दिर बने हैं।

उपरोक्त तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि मध्य एवं पूर्व भारत के विभिन्न क्षेत्रों में निर्मित योगिनी मन्दिरों को राजसत्ता द्वारा संरक्षण प्राप्त था। पत्थर द्वारा मन्दिर का निर्माण कराना बिना राज्याश्रय के सम्भव नही था। जिन कालों में भारत में योगिनी मन्दिर निर्मित हुए हैं वे राजनैतिक एवं धार्मिक उथल-पुथल के काल रहे। इस कौल उपासना से प्राप्त होने वाली जादुई शक्ति, सिद्धि, काला जादू तथा अलौकिक शक्ति के आकर्षण से इसके प्रति जनसाधारण आकृष्ट हुआ। इस कौल उपासना को कभी भी जनसाधारण में प्रचुर समर्थन नहीं मिल सका। इसके प्रति आकर्षण में व्याप्त भय एवं आतंक का वातावरण अधिक सहायक प्रतीत होता है। यह धर्म सर्वदा जंगली जातियों, आदिवासियों के मध्य अधिक प्रचलित रहा है। इसकी उपासना से मोक्ष नहीं प्राप्त होता है, किन्तु अलौकिक शक्तियों एवं लैंगिक सुख ने इसमें आकर्षण लाने में सफलता प्राप्त किया। इन्हीं कारणों से कालान्तर में यह उपासना सार्वजनिक रूप से उपेक्षित हुई एवं इनका अस्तित्त्व धीरे-धीरे समाप्त हो गया। बाद के कालों में प्रतीक के रूप में यह उपासना प्रचलित रही जिसकी पुष्टि प्राप्त चित्रों से होती है।

————

परिशिष्ट—1

नामावली : चौंसठ योगिनी सूचियाँ

चौंसठ योगिनियों की नामावली से सम्बन्धित अनेक सूचियाँ प्राप्त हुई हैं। पुराणों, अन्य साहित्यिक ग्रन्थों एवं मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों के आधार पर विभिन्न योगिनियों के नामों की सूचियों का उल्लेख यहाँ किया गया है। प्राप्त सूचियों में बहुत कम संख्या में एसे नाम हैं, जो एक स्थान से दूसरे स्थान तक सामंजस्य रखते हैं। ग्रंथों एवं मन्दिरों से प्राप्त योगिनियों की नामावली पर ही यह अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

1. कालिकापुराण से प्राप्त नामावली[1]

1. ब्रह्माणी
2. चण्डिका
3. रौद्री
4. इन्द्राणी
5. कौमारी
6. वैष्णवी
7. दुर्गा
8. नारसिंही
9. कालिका
10. चामुण्डा
11. शिवदूती
12. वाराही
13. कौशिकी
14. माहेश्वरी
15. शंकरी
16. जयन्ती
17. सर्वमंगला
18. काली
19. कपालिनी
20. मेघा
21. शिवा
22. शाकम्बरी
23. विमा
24. शान्ता
25. भ्रामरी
26. रुद्राणी
27. अम्बिका
28. क्षेमा

---

1. कालिकापुराण, बंगवासी संस्करण, कलकत्ता, अध्याय 60

29. धात्रि
30. स्वाहा
31. स्वधा
32. अपर्णा
33. मोहाद्रि
34. घोररूपा
35. महाकाली
36. भद्रकाली
37. भंगकारी
38. क्षेमकारी
39. उग्रचण्डा
40. चण्डीग्रा
41. चण्डा
42. चण्डूवती
43. चण्डनायकी
44. चण्डी
45. महामेधा
46. प्रियंकारी
47. बालविकारिणी
48. बालप्रमाथिनी
49. मनोन्मोहिनी
50. सर्वभूतदानिना
51. उमा
52. तारा
53. महानिद्रा
54. विजया
55. जया
56. शैलपुत्री
57. चण्डघण्टा
58. स्कन्दमाता
59. कालरात्रि
60. चण्डिका
61. कुश्माण्डि
62. कात्यायनी
63. महागौरी

2. अग्निपुराण[1]

1. अक्षोभ्या
2. रुक्षकर्णी
3. राक्षसी
4. क्षपणा
5. क्षमा
6. पिंगाक्षी
7. अक्षया
8. क्षेमा
9. इला
10. नालालया
11. लोला
12. रक्ता

1. अग्निपुराण, अ० 23

13. बलाकेशी
14. लालसा
15. विमला
16. दुर्गा
17. विशालाक्षी
18. छोंकरा
19. बड़वामुखी
20. क्रोधना
21. भयंकारी
22. ऋग्वेदा
23. ध्यानना
८4. साराख्या
25. रससंग्राही
26. शवरा
27. रक्ताक्षी
28. सुप्रसिद्धा
29. विद्रुत जिह्वा
30. करंकिणी
31. मेघनादा
32. प्रचण्डोग्रा
33. कालकर्णी
34. वरप्रदा
35. चण्डा
36. चण्डवती
37. प्रपंचा
38. प्रलयान्तिका
39. शिशुवक्त्र
40. पिशाची
41. पिशिताशन लोलुपा
42. धमनी
43. तपनी
44. रागिणी
45. विकृतानना
46. वायुवेगा
47. वृहद्कुक्षि
48. विकृता
49. विश्वलेपिका
50. यमजिह्वा
51. जयन्ती
52. दुर्जया
53. जयन्तिका
54. विडाली
55. रेवती
56. पूतना
57. विजयान्तिका
58. अष्टहस्ता
59. चतुर्हंसणा
60. इच्छास्त्रा
61. सर्वसिद्धा

3. स्कन्दपुराण[1]

1. गजानना
2. सिंहमुखी
3. गृध्रास्या
4. काकतुण्डिका
5. उष्ट्रग्रीवा
6. ध्यग्रीवा
7. वाराही
8. सरभानना
9. उलोलिका
10. शिवारावा
11. मयूरी
12. विकटानना
13. अष्टवक्रा
14. कोंटराक्षी
15. कुब्जा
16. विकटलोचना
17. शुष्कोदरी
18. ललजिह्वा
19. स्वदंष्ट्रा
20. बानरानना
21. रीक्षाक्षी
22. केकराक्षी
23. वृहत्तुण्डा
24. सुराप्रिया
25. कपालहस्ता
26. रक्ताक्षी
27. शुकी
28. श्येनी
29. कपोतिका
30. पाशहस्ता
31. दण्डहस्ता
32. प्रचण्डा
33. घण्डविक्रमा
34. शिशुघ्नि
35. पापहंत्री
36. काली
37. रुधिरपायिनी
38. वसायधा
39. गर्भभक्षा
40. शवहस्ता
41. अन्त्रमालिनी
42. स्थूलकेशी
43. वृहदकोक्षी
44. सर्पास्या
45. प्रेतकाहना
46. दण्डशूक्करा
47. क्रौंची
48. मृगशीर्षा
49. वृषानना
50. व्याक्ता

1. स्कन्दपुराण, काशीखण्ड, अध्याय 45

51. धूमनिःश्वासा
52. व्योमयिक चरणा
53. उर्ध्वदृक्
54. तापनी
55. शोषणी
56. कोंटरी
57. स्थूल नासिका
58. विद्युतप्रभा
59. वलाकास्या
60. मार्जारी
61. कट पूतना
62. अट्टाट्टहासा
63. कामाक्षी
64. मृगलोचना

4. वृहद्नन्दिकेश्वरपुराण[1]

1. नारायणी
2. गौरी
3. शाकम्बरी
4. भीमा
5. रक्तदाण्डिका
6. ब्रह्माणी
7. पार्वती
8. दुर्गा
9. कात्यायनी
10. महादेवी
11. चण्डघण्टा
12. महाविद्या
13. महातपा
14. सावित्री
15. ब्रह्मवादिनी
16. भद्रकाली
17. विशालाक्षी
18. रुद्राणी
19. कृष्णपिंगला
20. अग्निज्ञाता
21. रुद्रमुखी
22. कालरात्रि
23. तपस्विनी
24. मेघास्वना
25. सहस्राक्षी
26. विष्णुमाया
27. जलोदरी
28. महोदरी
29. मुक्तकेक्षी
30. घोररुपा
31. महाबला
32. श्रुति
33. स्म्रति
34. ध्रुति

1. वृहद्नन्दिकेश्वर पुराण, दुर्गापूजा पद्धति, नरेन्द्रनाथ वसु, विश्वकोश भाग 16, 1312, पृ० 73.

35. तुष्टि
36. पुष्टि
37. मेधा
38. विद्या
39. लक्ष्मी
40. सरस्वती
41. अपर्णा
42. अम्बिका
43. योगिनी
44. डाकिनी
45. शाकिनी
46. हारिणी
47. लाकिनी
48. हाकिनी
49. त्रिदस्वरी
50. महाषष्ठि
51. सर्वमंगला
52. लज्जा
53. कौशिकी
54. ब्रह्माणी
55. माहेश्वरी
56. कौमारी
57. वैष्णवी
58. ऐन्द्री
59. नारसिंही
60. वाराही
61. चामुण्डा
62. शिवदन्ति
63. विष्णुप्रिया

5. चौंसठ योगिनी नामावली[1]

1. दिव्य योगिनी
2. महायोगिनी
3. सिद्धयोगिनी
4 युगेश्वरी
5. प्रेताक्षी
6. डाकिनी
7. काली
8. कालरात्रि
9. निशाचरी
10. क्लिंकारी
11. सिद्धि वैताली
12. ह्लिकारी
13. भूतदामा
14. उर्ध्वकेशी
15. विरुपाकेशी
16. रक्तकेशी

---

1. वासुदेवशरण अग्रवाल, ऐंश्येण्ट इण्डियन फोक कल्ट्स, पृ० 204-206

17. नरभजनी
18. —
19. वीरभद्राक्षी
20. धूमाक्षी
21. कलह् प्रिया
22. राक्षसी
23. घोर राक्षसी
24. विरक्ताक्षी
25. भयंकरी
26. विरि
27. कुमारी
28. चण्डिका
29. वाराही
30. मुण्डधारिणी
31. भैरवी
32. वज्राणि
33. क्रोधाये
34. दुर्मुखी
35. प्रेत वाह्नी
36. कण्टकी
37. लम्वोष्ठि
38. मालिनी
39. मंत्रयोगिनी
40. कालाक्षी
41. मोहिनी
42. चक्री
43. कंकाली
44. भुवनेश्वरी
45. कुण्डली
46. मालिनी
47. लक्ष्मी
48. ढढढरी
49. कराली
50. कौशिकी
51. भद्राणी
52. व्याघ्राणी
53. यक्षाययी
54. कौर्मारा
55. यन्त्रवाहिनी
56. विशाली
57. कामाक्षी
58. विषहारिणी
59. द्विजाति
60. विकाति
61. धोरायई
62. कपाली
63. यक्षणी
64. विशालाँगुली

6. सूची सं०-2

1. काली
2. कराली
3. ईश्वरी
4. सुसामाला
5. दिव्य योगोई
6. महायोगी
7. वारुणी
8. ब्राह्माणी
9. अम्बिका
10. दुर्गा
11. जया
12. विजया
13. धूमवती
14. क्षेमेश्वरी
15. चामुण्डा
16. महाकाली
17. चित्राणी
18. वारुणी
19. कुरुकुल्ला
20. कपिला
21. रोहिणी
22. सुमंगला
23. वाराही
24. रक्ताक्षी
25. वैनायिकी
26. यमघण्टा
27. वैष्वानरी
28. प्रेतनासा
29. हेमकान्ता
30. निरंजनी
31. शंखनी
32. पद्मिनी
33. चन्द्रावती
34. नाहरसिंही
35. चण्डी
36. सौतिला
37. सरस्वती
38. हरसिद्धि
39. वैष्णवी
40. ईशानी
41. ललिता
42. गौरी
43. सूर्यपुत्री
44. प्रभंगिनी
45. वनदेवी
46. नारायणी
47. भैरवी
48. भद्रवती
49. अग्निहोत्री
50. कात्यायनी
51. ज्वालामुखी
52. भद्र काली
53. कामाक्षी
54. कपालिनी

55. श्रेष्ठिणी
56. कालरात्रि
57. युगेश्वरी
58. सिद्धि
59. कौमारी
60. शंकरी
61. इन्द्राणी
62. हिंकाली
63. महाविद्या
64. चक्रेश्वरी

7. **सूची सं० 3**

1. ब्रह्माणी
2. कौमारी
3. शंकरी
4. रुद्राणी
5. किंकाली
6. कराली
7. काली
8. महाकाली
9. चामुण्डा
10. ज्वालामुखी
11. कामाक्षा
12. वाराही
13. भद्रकाली
14. दुर्गा
15. अम्बिका
16. ललिता
17. गोरवी
18. सुमंगला
19. रोहिणी
20. कपिला
21. शूलकरा
22. कुण्डलिनी
23. त्रिपुरा
24. कुर्कुल्या
25. भैरवी
26. चम्पावती
27. नारसिंही
28. निरंजना
29. हेमवती
30. प्रेतासना
31. ईश्वरी
32. पैशाम्नरी
33. विनायकी
34. यमघण्टा
35. सरस्वती
36. तोतिला
37. वैष्णवी
38. वाम्दी
39. संषिणी
40. पद्मिनी
41. चित्राणी
42. वारुणी

43. जम्भागिनी
44. सूर्यपुत्री
45. सुसीतला
46. कृष्ण वाराही
47. रक्ताक्षी
48. कालरात्री
49. आकाशी
50. श्रेष्ठणी
51. जया
52. विजया
53. इमवती
54. वागेश्वरी
55. कात्यायनी
56. अग्निहोत्री
57. चक्रेश्वरी
58. महाविद्या
59. ईशानी
60. भवानी
61. भुवनेश्वरी
62. चक्रेश्वरी
63. महारात्रि
64. श्री देवी

8. चण्डीपुराण या चण्डी युध[1]

1. छाया
2. माया
3. नारायणी
4. ब्रह्मायणी
5. भैरवी
6. महेश्वरी
7. रुद्रायणी
8. इन्द्रायणी
9. वासेली
10. त्रिपुरा
11. उग्रतारा
12. चर्चिका
13. तारिणी
14. अम्बिका
15. कुठारी
16. भागवती
17. नीला
18. कमला
19. शान्ती
20. कान्ती
21. घटाबरी
22. चामुण्डा
23. चर्चिका
24. माधवी
25. चाचकेश्वरी
26. आनन्दा

---

1. सरलादास, **चण्डीपुराण** या **चण्डीयुद्ध** उड़िया; एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 37-38

27. सदानन्दा
28. रूपा
29. वाराही
30. नागरी
31. खेचरी
32. भूचरी
33. बेताली
34. कालिंजरी
35. शंखिनी
36. रुद्रकाली
37. कालरात्रि
38. कंकाली
39. बुकुचाई
40. बाली
41. दोहिणी
42. द्वारिणी
43. सोहनी
44. वारही
45. बोतलाई
46. अनुचया
47. कुचमुखी
48. समेहा
49. ऊलुका
50. समशिला
51. मुदा
52. दखिनाई
53. गोपाली
54. मोहिनी
55. विकराली
56. कामश्रेणि
57. कपाली
58. त्रैलोक्यव्यापिनी
59. त्रिलोचना
60. निमई
61. डाकेश्वरी
62. कमलाई
63. उत्तरायणी
64. रामायणी

9. बृहन्नीलतंत्र[1]

1. ब्रह्माणी
2. चण्डिका
3. रौद्री
4. गौरी
5. इन्द्राणी
6. कौमारी
7. वैष्णवी
8. दुर्गा
9. नारसिंही
10. कालिका

---

1. बृहन्नील तन्त्र, संपादक रामचन्द्र काक, श्रीनगर, 1938, पृ० 169

11. चामुण्डा
12. शिवदूती
13. वाराही
14. कौशिकी
15. माहेश्वरी
16. शंकरी
17. जयंती
18. सर्वमंगला
19. काली
20. कपालिनी
21. मेधा
22. शिवा
23. शाकम्बरी
24. भीमा
25. शान्ता
26. भ्रामरी
27. रुद्राणी
28. अम्बिका
29. क्षेमा
30. धात्री
31. स्वाहा
32. स्वधायर्णा
33. महोदरी
34. घोररुपा
35. महाकाली
36. भद्रकाली
37. भयंकरी
38. क्षेमंकरी
39. उग्रचण्डा
40. चण्डग्रा
41. चण्डनायिका
42. चण्डा
43. चण्डावती
44. चण्डी
45. महाप्रियंकारी
46. बलविकारिणी
47. बलप्रमथिनी
48. मदनोन्मथिनी
49. सर्वभूतस्यदमनी
50. उमा
51. तारा
52. महानिद्रा
53. विजया
54. जया
55. शैलपुत्रोधया

10. श्रीमद्गुरु मण्डलार्चन-कर्म पद्धति[1]

1. दिव्या
2. महा
3. सिद्धा
4. प्रेताक्षी
5. माहेश्वरी
6. डाकिनी
7. काली
8. कालरात्रि
9. निशाकरी
10. हुंकारी
11. सिद्धिवैतालिका
12. ह्रींकारी
13. भूतडामर
14. उर्ध्वकेशीति
15. विरुपाक्षीति
16. शुष्कांगो
17. नरःभोजनीं
18. फेत्कारी
19. वीरभद्रेति
20. धूम्राक्षी
21. कलहप्रिया
22. राक्षसी
23. घोरस्लाक्षी
24. विशालाक्षी
25. कौमारी
26. चण्डी
27. वाराही
28. भुण्डधारिणी
29. भैरवी
30. वीरां
31. भयंकरी
32. वज्रणी
33. क्रोधा
34. दुर्मुखां
35. प्रेतवाहिनी
36. कर्का
37. दीर्घ लम्बोष्ठ
38. मालिनी
39. मन्त्रयोगिनी
40. कालाग्निमोहिनोमू
41. मोहिनी
42. चक्रा
43. कुण्डलिनी
44. वालुकां
45. कौवेरी
46. यमदूती
47. कराली
48. कौशिकी
49. यक्षिणी
50. भक्षिणी

1. श्रीमद्गुरु मण्डलार्चन कर्मपद्धति, पृ० 64

51. कौमारी
52. मन्त्रवाहिनी
53. कार्मुकी
54. व्याघ्री
55. बिशाला
56. महाराक्षसी
57. प्रेतभक्षिणी
58. धूर्जता
59. विकाटा
60. घोररुपा
61. कपालिका
62. निकला
63. अमला
64. सिद्धिप्रदा

11. **दुर्गापूजा** (ताड़पत्र पाण्डुलिपि)[1]

1. ब्रह्माणी
2. इन्द्राणी
3. कुमारी
4. भैरवी
5. दुर्गा
6. नारसिंही
7. कालिका
8. चामुण्डा
9. शिवदूती
10. वाराही
11. कौशिकी
12. माहेश्वरी
13. शंकरी
14. जयन्ती
15. सर्वमंगला
16. काली
17. करालिनी
18. मेधा
19. शिवा
20. शाकम्बरी
21. वामा
22. शान्ता
23. वसरी
24. रुद्री
25. रुद्राणी
26. अम्बिका
27. क्षमा
28. धात्री
29. स्वाहा
30. स्वधा
31. मदोदरी
32. घोररुपा
33. महाकाली
34. भद्रकाली

---

1. **दुर्गापूजा**, एक ताड़पत्र पाण्डुलिपि, उड़ीसा राज्य संग्रहालय, डी० एच०नं० 345, पृ० 22-23; एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म**, पृ० 38

35. कपालिनी
36. क्षेमकारी
37. उग्रचण्डी
38. चण्डोग्रा
39. चण्ड नायिका
40. चण्डी
41. चण्डा
42. चण्डवती
43. महामाया
44. प्रियंकारी
45. वालविक्रमणी
46. बालप्रमाथिनी
47. मदनोन्मथिनी
48. सर्वभूतमाननी
49. उमा
50. घोरा
51. महानिद्रा
52. विजया
53. जया
54. शैलपुत्री
55. चण्डिका
56. चण्डघण्टा
57. घाषिणी
58. कुश्नाण्डी
59. सकल मुद्रा
60. कात्यायनी
61. कालरात्रि
62. महागौरी
63. चण्डिका
64. गौरी

12. हंस विजय संग्रह : पाण्डुलिपि[1]

1. दिव्ययोगी
2. महायोगी
3. सिद्धियोगी
4. गणेश्वरी
5. प्रेताक्ष्मी
6. डाकिनी
7. काली
8. निशाचरी
9. कालरात्रि
10. ह्लिकारी
11. सिद्धि
12. वैताल
13. क्लिंकारी
14. उर्ध्वकेशी
15. महाकाली
16. शुष्कांगी

---

1. हंस विजय संग्रह, पाण्डुलिपि, जैन मन्दिर, बड़ोदा, सं० 396; बी० सी० भट्टाचार्य कहते हैं कि रामघाट जैन पुस्तकालय, वाराणसी की एक पाण्डुलिपि में प्राप्त कुछ योगिनियों के नाम बड़ोदा के पाण्डुलिपि के योगिनियों से साम्यता रखते हैं। (जैन आइवनोग्राफी, वाराणसी, 1974, पृ० 137)

17. नरमोनी
18. फाकड़ी
19. वीरभद्रमिसि
20. धुमराक्षी
21. शंखिनी
22. भूतडामरी
23. वीरुपाक्षी
24. चण्डी
25. वाराही
26. कंकाली
27. भुवनेश्वरी
28. यमदूती
29. कलहप्रिया
30. राजसी
31. घोररक्तासी
32. भयंकरी
33. बैरी
34. कौमारिकी
35. कुण्डला
36. लक्ष्मी
37. करतपाणी
38. कोषकिभक्षणी
39. यक्ष
40. कंवारी
41. यंत्रवाहिनी
42. विशाला
43. कामकी
44. यक्षिणी
45. प्रेतभक्षिणी
46. धूरजती
47. विंकारी
48. कपाल
49. विशां शुली
50. युगेश्वरी
51. निस्कारी
52. चण्डिका
53. कुमारिका
54. विसाती

13. देवता[1]

1. विकृता
2. विश्वरुपिका
3. यमजिह्विका
4. जयन्ती
5. दुर्जया
6. यमांकिका
7. खेटनी
8. विडाली

1. बी० डी० वसु, देवता, वाराणसी, 1979, पृ० 201-251 प्रस्तुत सूची में कुल 122 योगिनियों का वर्णन है परन्तु यहां हम प्रमुख 64 का ही उल्लेख कर रहे हैं।

9. रेवती
10. पूतना
11. विजयन्तिका
12. नन्दा
13. सर्वमंगला
14. कालरात्रि
15. ललिता
16. ज्येष्ठा
17. भूतमाता
18. अक्षोभ्या
19. अक्षकर्णो
20. राक्षसी
21. क्षापणा
22. पिंगाक्षी
23. क्षया
24. अक्षया
25. लीलावती
26. वाला
27. लोला
28. लङ्कग
29. लंकेश्वरी
30. विमला
31. हुताशना
32. विशालाक्षी
33. हुंकारा
34. बड़वामुखी
35. हाहारवा
36. महाक्रूरा
37. क्रोधना
38. भयानना
39. सर्वज्ञा
40. तरला
41. तारा
42. ध्यानना
43. रससंग्राही
44. शवरा
45. तालुंचिह्वका
46. चण्डी
47. योगेश्वरी
48. अम्बिका
49. अभया
50. प्रचण्डोग्रा
51. करकिंनी
52. विद्युत जीह्वा
53. कालकर्णी
54. प्रपंचिका
55. पिचुवक्ता
56. वमनी
57. पिशाची
58. तपना
59. वामनी
60. पिशिताशा
61. वृहत्कुक्षी
62. भैरवी
63. ब्राह्मी
64. ऐन्द्री

14. श्री तत्त्वनिधि[1]

श्रीतत्वनिधि में कुल 69 योगिनियों के नामों का उल्लेख किया गया है। ये 8 समूहों में है। प्रथम समूह में सोलह योगिनियों के नाम उल्लिखित है।

1. कामाकर्षाणिका
2. बुध्याकर्षणिका
3. अहकार कर्षणिका
4. सर्वकर्षणिका
5. स्पर्श कर्षणिका
6. नित्यरूप कर्षणिका
7. रस कर्षणिका
8. गन्ध कर्षणिका
9. चित्तकर्षणिका
10. नित्य धरिय कर्षणिका
11. स्मृत्य कर्षणिका
12. नित्यानाम कर्षणिका
13. वीजा कर्षणिका
14. नित्यचत्मा कर्षणिका
15. अमृत कर्षणिका
16. नित्यशरीर कर्षणिका

उपरोक्त सोलह देवियां गुप्त योगिनियां कही गई हैं। इनके चार मुख और तीन नेत्र हैं। ये दिव्य कान्ति के साथ रक्त वर्ण की हैं। इनके हाथों में चाप, बाण, चर्म एवं खड्ग हैं।

अगले समूह में गुप्त तारा योगिनियां आठ की संख्या में हैं। ये सभी योगिनियाँ रक्त वर्ण की हैं।

1. अनंगसुमना
2. अनंग मेखला
3. अनंग मदना
4. अनंग मदनातुरा
5. अनंग रेखा
6. अनंग वेगा
7. अनंग अंकुशा
8. अनंग मालिनी

इनके चारों हाथों में इक्षु चाप, पुष्पसार, पुष्प कंडुक एवं उत्पल है।

तीसरे समूह की योगिनियां सम्प्रदाय योगिनी के नाम से वर्णित हैं। इस समूह में सर्वसंचोभिणी प्रमुख है। ये काम के राख से उत्पन्न हुई अति तीव्र स्वभाव की हैं। इनका वर्ण लाल हैं तथा इनके हाथों में वाह्नि चाप, वाह्नि बाण, वाह्निरूपमासी एवं वाह्नि चक्र है।

---

1. बलराम श्रीवास्तव, **आइक्नोग्राफी आफ शक्ति**, वाराणसी, 1978, पृ० 118-124 लेखक ने श्रीतत्त्वनिधि पर अपना अध्ययन आधारित करते हुए विचार व्यक्त किया है।

1. सर्व विद्रावणी
2. सर्वकर्षाणिका
3. सर्व सम्मोहिनी
4. सर्वस्तम्भनिका
5. सर्वजिभ्रानिका
6. सर्वशंकरी
7. सर्वरन्जनिका
8. सर्वार्थ साधिका
9. सर्वसम्पत प्रपूरिणी
10. सर्वमंत्रमयी
11. सर्वद्वन्द्व शंकरी

चतुर्थ समूह की योगिनियां कुलातीर्ण कही जाती हैं तथा इसमें दस योगिनियों का वर्णन मिलता है। योगिनियों के नाम उमकी क्षमता; स्वरूप एवं दैवी शक्ति को प्रदर्शित करते हैं।

1. सर्वसिद्धिप्रदा
2. सर्वसंपत प्रदा
3. सर्व प्रियंकरी
4. सर्व मंगलकारिणी
5. सर्व कामप्रदा
6. सर्वदुखविनाशिनी
7. सर्वमृत्यु प्रशामणि
8. सर्व विघ्ननिवारिणी
9. सर्वाग सुन्दरी
10. सर्वसौभाग्य दायिनी

इन योगिनियों का वर्ण श्वेत है तथा ये उपासकों के प्रति दयालु एवं भयानक स्वरूप की होती हैं।

पांचवें समूह की योगिनियों को निगर्भ योगिनी कहते हैं। इनके चारों हाथों में वज्र, शक्ति, तोमर एवं चक्र होता है।

1. सर्वज्ञा
2. सर्वशक्ति
3. सर्वऐश्वर्य प्रदायिनी
4. सर्वज्ञानमयी
5. सर्वव्याधिविनाशिनी
6. सर्वधारास्वरूपा
7. सर्वपापहरा
8. सर्वानन्दमयी
9. सर्व रक्षास्वरूपिणी
10. सर्वप्सिताप्रदा

छठवें समूह में रहस्य योगिनियों का उल्लेख किया गया है। इनकी संख्या आठ बतायी गई है। इनका सम्बन्ध वागेश्वरी देवी (शिक्षा की देवी) से है। ये अशोक के लाल फूल के रंग के समान होती है तथा प्रायः कवच धारण करती हैं। इनके दो हाथों में वीणा एवं पुस्तक है।

1. वासिनी
2. कामेक्षी
3. मोदनी
4. विमला
5. अरुणा
6. जयनी
7. सर्वेषी
8. कौलिनी

सातवें समूह की योगिनियों का उल्लेख नहीं प्राप्त होता ।

आठवां एवं अन्तिम समूह अतिरहस्य योगिनियों का है । इस समूह में मात्र तीन योगिनियाँ हैं। इनके आठ हाथों में चाप, बाण, पान पत्र, मातुलिंग, कर्पाण, फलक, नागपाश एवं घण्टा रहता है ।

1. कामेक्षी, 2. वज्रेक्षी, 3. भग मालिनी

ये सिन्दूर सदृश लाल वर्ण की होती हैं ।

यहाँ विभिन्न ग्रन्थों एवं मन्दिरों से प्राप्त योगिनियों की 19 सूचियों का अध्ययन करने के पश्चात् भी उनके स्वरूपों का निर्धारण करना कठिन है । कुछ मातृकाओं को छोड़कर प्रत्येक सूची में योगिनियों के नामों में भिन्नता है । योगिनियों के नामों, स्वरूपों एवं उचित संख्या के सन्दर्भ में उपयुक्त ग्रन्थों के अभाव कारण पूर्ण अध्ययन सम्भव नहीं है ।

विभिन्न ग्रन्थों से प्राप्त सूचियों के आधार पर उनकी संख्या 64 होने की पुष्टि नहीं हो पाती । ग्रन्थों से प्राप्त चौदह सूचियों में मात्र सात सूचियों में ही 64 की संख्या में योगिनियाँ वर्णित हैं । 64 की संख्या में वर्णित सूचियों में भी इनके नामों में अनेक विभिन्नताएं हैं। इन विभिन्नताओं के कारण किसी भी सूची को परम्परागत एवं प्रामाणिक कहना सम्भव नहीं है । इस सन्दर्भ में जैसाकि पीछे कहा जा चुका है श्री करम्बेलकर का मत है कि प्रारम्भ में सात या आठ मातृकाएं ही प्रमुख योगिनियाँ थीं और कालान्तर में इनकी संख्या बढ़कर चौंसठ हो गई ।[1] परन्तु प्राप्त योगिनी सूचियों पर विचार करने से करम्बेलकर का मत पूर्णरूपेण तर्कसंगत नहीं प्रतीत होता । प्राप्त सूचियों में सात मातृकाओं का उल्लेख वृहद्नन्दिकेश्वरपुराण, कालिकापुराण, वृहन्नीलतंत्र एवं उड़ीसा संग्रहालय की पाण्डुलिपि में प्राप्त होता है । चण्डीपुराण में पांच, श्रीमद्गुरुमण्डलार्चन में तीन, तथा स्कन्दपुराण, बड़ौदा जैन मन्दिर की पाण्डुलिपि एवं "देवता" ग्रन्थों में मात्र एक (वाराही) का ही उल्लेख मिलता है । डा० वासुदेव शरण अग्रवाल की तीन सूचियों में प्रथम में कौमारी एवं वाराही का तथा द्वितीय एवं तृतीय में 6 मातृकाओं के उल्लेख मिलते हैं ।[2] इस प्रकार इन सूचियों में सात या आठ मातृकाओं की समान संख्या नहीं मिलती । अतः इन आधारों पर यह कहना कि प्रमुख सात या आठ मातृकाएं ही प्रमुख योगिनियाँ थी, उचित नहीं प्रतीत होता । डा० अग्रवाल की सूची में दस महाविद्याओं का भी नाम योगिनी के रूप में उल्लिखित है, जिससे प्रतीत होता है कि योगिनियों का सम्बन्ध दस महाविद्याओं से भी था । उपर्युक्त वर्णित पांच सूचियों में अठारह संख्या तक कुछ मातृकाओं के नाम आपस में मिलते हैं । उल्लेख्य है कि मातृकाओं एवं योगिनयों के कार्यों में भी अन्तर नहीं है तथा दोनों ही दुर्गा की सहचरी के रूप में जानी जाती हैं ।

---

1. वी० डब्ल्यू० करम्बेलकर, इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टली, जिल्द 31, सं० 4 पृ० 369-71
2. वासुदेवशरण अग्रवाल, ऐंसिएण्ट इण्डियन फोक कल्ट, पृ० 204-206.

मातृकाओं को योगिनियों की सूची में सम्मिलित करने हेतु अध्ययन के अन्य पहलुओं पर भी विचार करना होगा। वाराहपुराण[1] में आठ मातृकाओं के अलग-अलग आठ स्वरूपों का वर्णन किया गया है। श्रीतत्त्वनिधि में योगिनियों के आठ स्वरूपों का वर्णन है तथा यहां सभी 69 योगिनियां आठ श्रेणियों में विभक्त हैं। यहाँ भी तत्त्वनिधि[2] में वर्णित योगिनियों के नाम पुराणों एवं अन्य ग्रन्थों में उल्लिखित नामों से भिन्न है। अतः यहाँ मातृकाओं को योगिनियों में सम्मिलित करने के पीछे उनके स्वरूप एवं कार्यों में समानता ही ऊचित प्रमाण प्रतीत होता है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त योगिनी सूचियों का अध्ययन करने पर यह सम्भावना व्यक्त की जा सकती है कि स्थानीय देवियों ने शनैः-शनैः योगिनियों का रूप धारण कर लिया। इस संदर्भ में चार्ल्स फाब्री कहते हैं "मातृकाओं का सम्बन्ध योगिनियों से रहा है; तथा वे उसी प्रकार योगिनियों में सम्मिलित हो गयीं, जैसे बौद्ध धर्म में यक्षिणियां सम्मिलित हुई थीं। उन्होंने आगे कहा है कि विद्वानों ने अपने ग्रन्थों में स्थानीय लोक देवियों का नाम मात्र का उल्लेख किया है। धार्मिक ग्रन्थों में उल्लिखित प्रमुख देवताओं की अपेक्षा विद्वतापूर्ण ग्रन्थ जन-साधारण हेतु दुर्लभ थे। भारतीय कला ग्रन्थों में जनसाधारण की उपासना में प्रयुक्त होने वाले हजारों देवी-देवताओं के उल्लेख नाममात्र के लिए मिलते हैं। अधिकांश ग्रन्थ भारत के लोक धर्मों से निकट का भी सम्बन्ध नहीं रहते प्रतीत होते।[3] प्राप्त सूचियों में स्थानीय मान्यताओं पर आधारित अधिकांश लोक देवियों के नाम उल्लिखित हैं। इन देवियों को योगिनियों में उनके स्वरूप एवं कार्यों के आधार पर मातृकाओं के साथ सम्मिलित किया गया है। प्राप्त सूचियों में बौद्ध, हिन्दू एवं जैन धर्मों की देवियों को भी योगिनियों के रूप में उल्लिखित किया गया है। ये देवियां भी स्थानीय मान्यताओं के आधार पर योगिनियों में सम्मिलित हुई प्रतीत होती हैं।

विभिन्न ग्रन्थों से प्राप्त सूचियों के साथ ही विभिन्न योगिनी मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों के नामों का भी तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। अधिकांश योगिनी मूर्तियों पर उनके नाम उत्कीर्ण हैं, परन्तु कुछ मन्दिरों से ऐसी भी मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं जिनकी पहचान नहीं हो सकी है। यहाँ हम प्रमुख रूप से पाँच मन्दिरों की मूर्तियों के आधार पर अध्ययन करेंगे। वे मन्दिर भेड़ाघाट, हीरापुर, शहडोल, हिंगलाजगढ़ एवं नरेसर में निर्मित हुए थे जिनमें कुछ की संरचनाएं अब नहीं प्राप्त होती। इन स्थानों में भेड़ाघाट से 81, हीरापुर से 63, शहडोल से 30, हिंगलाजगढ़ से 20 एवं नरेसर से 14 मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं।

इन मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों में मातृकाओं की मूर्तियाँ भेड़ाघाट से 8, हीरापुर से 6, शहडोल, हिंगलाजगढ़, नरेसर से तीन की संख्या में मिली हैं। ये मातृकाएं मन्दिरों में योगिनियों के रूप में प्रदर्शित हैं। इन मातृकाओं के अलावा अन्य योगिनियों के नामों में आपस में भिन्नता है। भेड़ाघाट के

1. टी० ए० गोपीनाथ राव, **एलिमेण्ट आफ हिन्दू आइक्नोग्राफी**, जिल्द I, भाग 2, पृ० 281
2. बलराम श्रीवास्तव, **आइक्नोग्राफी आफ शक्ति** पृ० 113
3. चार्ल्स फाब्री, **हिस्ट्री आफ आर्ट आफ उड़ीसा**, पृ० 84

मन्दिर में नदी देवियाँ भी योगिनियों में सम्मिलित हैं। इसी प्रकार नदी देवियों की मूर्तियाँ हीरापुर में गंगा एवं यमुना, शहडोल में एक समूह के रूप में तथा हिंगलाजगढ़ में सरस्वती के रूप में प्राप्त हुई हैं। प्राचीन काल से ही मन्दिरों के द्वार के दोनों ओर नदी देवियों की मूर्तियाँ स्थापित की जाती थीं। सम्भवत: कालान्तर में वे भी योगिनियों में सम्मिलित हो गईं। हीरापुर के मन्दिर में कात्यायनी की मूर्तियाँ आलों में स्थापित हैं। विभिन्न ग्रन्थों यथा वृहद्नन्दिकेश्वरपुराण, कालिकापुराण, उड़ीसा की पाण्डुलिपि के साथ ही वासुदेवशरण अग्रवाल की सूची में भी कात्यायनी का उल्लेख योगिनियों के रूप में किया गया है। इससे यह प्रमाणित होता है कि अन्य देवियों की तरह कात्यायनी भी योगिनियों में सम्मिलित हो गई थी। इसी प्रकार अधिकांश योगिनी मन्दिरों से महिषासुर मर्दिनी की मूर्तियाँ भी योगिनियों के रूप में प्राप्त हुई हैं। उल्लेखनीय है कि विभिन्न मन्दिरों से प्राप्त महिषासुर मर्दिनी की मूर्तियां स्थानीय नामों से मन्दिरों में स्थापित हैं, यथा भेड़ाघाट में "तेरवां" शहडोल में 'कृष्णा भगवती" एवं खजुराहो में ये "हिंगलाज" नाम से हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि स्थानीय प्रभाव में विभिन्न स्थानों पर एक ही देवी के नाम भी बदल गए हैं।

इस प्रकार देश के विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त ग्रन्थों एवं मन्दिरों की योगिनी नामावलियों का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि मातृकाओं एवं अन्य देवियों का सम्मिलन इस कौल में बाद के कालों में हुआ। उल्लेख्य है कि इस कौल की संस्थापना मत्स्येन्द्रनाथ ने कामरूप में किया था।[1] मत्स्येद्र नाथ ने कामरूप के स्त्रियों के साथ इस कौल का अभ्यास किया था और वहां प्रत्येक घर की स्त्री योगिनी थी।[2] इस कौल का अभ्यास स्त्रियों के साथ करने वाला पुरुष शिव स्वरूप होता था और स्त्रियां शक्ति के रूप में होती थीं। सम्भवत: इस अभ्यास में प्रयुक्त स्त्रियों के गुण एवं कार्यों के आधार पर इनका नामकरण भी किया जाता था। विभिन्न क्षेत्रों में इस कौल उपासना में प्रयुक्त स्त्रियों को ही कालान्तर में दैवी स्वरूप प्रदान करने हेतु कुछ देवियों के नामों को सम्मिलित कर लिया गया। इन्हीं कारणों से विभिन्न ग्रन्थों की सूचियों एवं मन्दिरों के योगिनी मूर्तियों के नाम आपस में नहीं मिलते। योगिनी कौल का आरम्भ उपासना में प्रयुक्त होने वाली स्त्रियों से हुआ और कालान्तर में देवियों के कार्यों एवं स्वरूपों में समानता के आधार पर उन्हें देवियों एवं मातृकाओं को सम्मिलित कर लिया गया। इसके उदाहरण ग्रन्थों एवं योगिनी मूर्तियों में स्पष्ट मिलते हैं। कालान्तर में उपासना के विकास के साथ ही इस कौल में हिन्दू, बौद्ध एवं जैन धर्मों से संबंधित देवियाँ भी अपने स्वरूपों, कार्यों तथा स्थानीय मान्यताओं के आधार पर सम्मिलित कर ली गईं। इस उपासना के विकास के साथ ही इसमें व्यापक क्षेत्रीय विशेषताओं का भी समावेश हुआ। इन्हीं विशेषताओ के अंतर्गत योगिनियों में दस महाविद्याएं, कात्यायनी, नदी देवियां, यक्षिणियां एवं लोक देवियां भी सम्मिलित कर ली गईं। अन्य कौलों की तरह योगिनी कौल को भी परिवर्तन के विभिन्न स्तरों से होकर गुजरना पड़ा है। इनकी चौंसठ संख्या के सन्दर्भ में भी ग्रन्थों एवं मन्दिरों में समानता नहीं। विभिन्न विद्वानों ने इस सम्बन्ध में अपने-अपने मत भी दिए हैं,

---

1. वी० डब्ल्यू० करम्बेलकर, इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टर्ली, जिल्द 31, 1955, सं० 4, पृ० 365
2. विश्वनारायण शास्त्री, योगिनीतंत्रम्, टिप्पड़ी 33

परन्तु इससे भी कोई निश्चित समाधान नहीं हो सकी है। एच० सी० दास ने योगिनी मन्दिरों में चौंसठ योगिनियों का सम्बन्ध चौंसठ भैरव, चौंसठ कलाओं एवं चौंसठ रतिबन्ध (लैंगिक सुख) से कहा है।[1] सम्भवतः इनकी चौंसठ संख्या का निर्धारण तांत्रिक उपासना के विधानों के अन्तर्गत हुआ। इस सन्दर्भ में लगभग 9वीं सदी में संकलित "अग्निपुराण"[2] में चौंसठ योगिनियों का उल्लेख मिलता है। योगिनी कौल से ही सम्बन्धित लगभग 9वीं सदी में निर्मित खजुराहो का योगिनी मन्दिर है जिसमें चौंसठ योगिनियाँ स्थापित थीं।[3] इन आधारों पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि योगिनियों की उपासना आरम्भ से ही चौंसठ की संख्या में होती रही है। परन्तु कुछ ग्रन्थों में योगिनियों की उपासना 42 एवं 81 की संख्या में भी करने के उल्लेख मिलते हैं।[4] इसकी पुष्टि भेड़ाघाट के योगिनी मन्दिर से होती है, जहाँ 81 की संख्या में मूर्तियाँ स्थापित थीं। ऐसा प्रतीत होता है कि योगिनियों के नामों के साथ ही स्थानीय मान्यताओं के अनुसार उनकी संख्या में भी परिवर्तन होते रहे हैं। जनसाधारण में प्रायः योगिनियों की उपासना चौंसठ की संख्या में ही होती थी, परन्तु कालांतर में विभिन्न स्थानीय मान्यताओं के कारण नामों में परिवर्तन के साथ ही उनकी संख्या में भी परिवर्तन हुए। इस परिवर्तन का प्रभाव विभिन्न क्षेत्रों में संकलित ग्रन्थों के साथ ही योगिनी मन्दिरों पर भी पड़ा। इस प्रकार यह कौल पूर्णरूपेण स्थानीय अवधारणाओं के प्रभाव में प्रचलित हुआ प्रतीत होता है।

योगिनी सूचियों में उल्लिखित मातृकाएं :

मातृका	ग्रन्थों में उल्लेख	मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों में
1. ब्रह्माणी	कालिकापुराण, वृहद्नन्दिकेश्वरपुराण, डा० वासुदेवशरण अग्रवाल सूची सं०-2, 3, चण्डीपुराण, दुर्गापूजा पद्धति, वृहन्नील तंत्र देवता।	भेड़ाघाट हीरापुर
2. वैष्णवी	कालिकापुराण, वृहद्नन्दिकेश्वरपुराण, वासुदेवशरण अग्रवाल सूची सं०-2 व 3, वृहन्नीलतंत्र।	भेड़ाघाट, हीरापुर, नरेसर

1. एच० सी० दास, **तांत्रिसिज्म** पृ० 4
2. बलदेव उपाध्याय, (सम्पादित) **अग्निपुराण**, अ० 52, 146
3. देखिए, स्थापत्य से सम्बन्धित अध्याय में
4. जनार्दन पाण्डेय, **गोरक्ष संहिता**, अ० 27 एवं 7; इसके साथ ही बरोह एवं दुगई नामक स्थानों पर 42 योगिनी मूर्तियों के मन्दिर भी मिले हैं।

मातृका	ग्रन्थों में उल्लेख	मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों में
3. माहेश्वरी	वृहद्नन्दिकेश्वरपुराण, कालिकापुराण, चण्डीपुराण, दुर्गापूजा पद्धति, वृहन्नीलतंत्र, श्रीमद्गुरुमण्डलार्चन।	भेड़ाघाट, हीरापुर
4. वाराही	वृहद्नन्दिकेश्वरपुराण, कालिकापुराण, स्कन्दपुराण, वासुदेवशरण अग्रवाल सूची सं०-1, 2, 3, चण्डीपुराण, दुर्गापूजा पद्धति, वृहन्नीलतंत्र, श्रीमद्गुरुमण्डलार्चन, हंसविजय संग्रह पाण्डुलिपि।	भेड़ाघाट, हीरापुर, शहडोल, हिंगलाजगढ़, नरेसर
5. चामुण्डा	कलिकापुराण, वृहद्नन्दिकेश्वरपुराण, वासुदेवशरण अग्रवाल सूची सं०-2 व 3, चण्डीपुराण दुर्गापूजा पद्धति, वृहन्नीलतंत्र।	हीरापुर, शहडोल, हिंगलाजगढ़, नरेसर
6. इन्द्राणी	कालिकापुराण, वसुदेवशरण अग्रवाल सूची सं०-2, चण्डीपुराण, दुर्गापूजा पद्धति, वृहन्नीलतंत्र, श्रीमद्गुरुमण्डलार्चन।	भेड़ाघाट, हीरापुर, शहडोल, हिंगलाजगढ़, नरेसर
7. कौमारी	कालिकापुराण,वहद्नन्दिकेश्वरपुराण, वासुदेवशरण अग्रवाल सूची सं०-1, 2, 3, दुर्गापूजा पद्धति।	हीरापुर, शहडोल, हिंगलाजगढ़,
8. काली	कालिकापुराण, स्कन्दपुराण, वासुदेवशरण अग्रवाल, सूची सं०-2 व 3, दुर्गापूजा पद्धति, वृहन्नीलतंत्र, श्रीमद्गुरु मण्डलार्चन, हंस विजय संग्रह पाण्डुलिपि।	हीरापुर

———

परिशिष्ट-2

मूर्ति विवरण

अधिकांश चौंसठ योगिनी मन्दिरों से प्राप्त मूर्तियों की पीठिका पर उनके नाम उत्कीर्ण हैं। किन्तु विभिन्न मन्दिरों से प्राप्त इस प्रकार की मूर्तियों के नामों में परस्पर भिन्नता है। केवल मातृकाओं के नामों में ही परस्पर समता दिखाई देती है। इनमें चौंसठ योगिनी प्रतिमाओं के मूर्तिशास्त्र सम्बन्धी विधानों का भी अभाव है। अधिकांश योगिनियों के नामों एवं स्वरूपों का प्रदर्शन स्थानीय विशेषताओं एवं मान्यताओं के आधार पर हुआ है। इसका प्रभाव इनके नामांकन पर भी पड़ा है। किन्तु कुछ योगिनी मन्दिर ऐसे भी हैं, जहां से प्राप्त मूर्तियों पर उनके नाम उत्कीर्ण नहीं हैं। कहीं-कहीं पर उनके वाहनों एवं हाथों में धारण किए जाने वाले आयुधों का भी चित्राँकन नही किया गया है। रानीपुर झरियल, लोखरी एवं रिखियां से प्राप्त अधिकतर मूर्तियां पशु-पक्षियों के मुख वाली हैं। इसके अतिरिक्त रानीपुर झरियल से प्राप्त योगिनी मूर्तियों में योगिनियां नृत्यरत हैं किन्तु अन्य मन्दिरों में ये बैठी या खड़ी प्रदर्शित की गई है। इसप्रकार इन तमाम अस्पष्टताओं के कारण योगिनी मूर्तियों की ठीक से पहचान नहीं हो पाती।

पशु-पक्षियों के मुखों वाली योगिनियों का उल्लेख "स्कन्दपुराण"[1] तथा कौल "ज्ञान निर्णय"[2] में हुआ है। ऐसा लगता है कि इस प्रकार की मूर्तियों के निर्माण में स्थानीय मान्यताओं का तथा वहां के साहित्य का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है।

विभिन्न ग्रन्थों से प्राप्त योगिनियों की नामावलियों एवं मन्दिरों से प्राप्त योगिनी मूर्तियों का तुलनात्मक अध्ययन करने से मातृकाओं को योगिनियों में सम्मिलित करने की पुष्टि होती है। योगिनियों ने मातृकाओं के साथ ही विभिन्न स्थानीय देवियों के रूप एवं गुण ग्रहण किए हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि देवियों एवं मातृकाओं के संयोग के फलस्वरूप ही योगिनियों नें दैवीय स्वरूप धारण किया होगा और इसके बाद से ही इनकी मातृकाओं एवं देवियों के समान ही उपासना भी होने लगी होगी। ज्ञातव्य है कि उपासना विभिन्न स्थानीय स्वरूपों के आधार पर होती

---

1. **स्कन्दपुराण**, काशी खण्ड, अध्याय 45; (योगिनियों का आगमन) उल्लेख है कि पृथ्वी पर आने के बाद योगिनियों ने यहां के जीव-जन्तुओं का स्वरूप धारण कर लिया।
2. प्रबोधचन्द्र बागची, **कौलज्ञान निर्णय एण्ड अदर माइनर टेक्स्ट्स आफ दि स्कूल आफमत्स्येन्द्र नाथ अ० 23**

थी । इन्हीं कारणों से इनके नामों में विभिन्न स्थानों पर भिन्नता भी पाई जाती है । योगिनियों के नामों से मनुष्य के कल्पना शक्ति का भी प्रदर्शन होता है । योगिनियों का नामकरण उनकी विशेषताओं के आधार पर हुआ प्रतीत होता है । ऐसा कहा गया है कि योगिनियाँ अपने भक्तों का सदैव हित करती हैं तथा अपनी आदि शक्ति का उपयोग समर्पण में करती हैं । नाम ही वस्तुतः इनके रूप और गुण को प्रदर्शित करते हैं । भारत के योगिनी मन्दिर एवं मूर्तियां पूर्णरूपेण जन साधारण के मान्यताओं के आधार पर निर्मित हैं, अतः विभिन्न मान्यताओं के अनुसार योगिनियों के विभिन्न नाम एवं स्वरूप की हैं । यहां हम विभिन्न मन्दिरों एवं स्थानों से प्राप्त मूर्तियों का संक्षिप्त वर्णन प्रतिमा विज्ञान की दृष्टि से करेंगे । निम्नलिखित तालिका का निर्माण मूर्तियों के स्वरूप, उनकी भुजा, मुद्रा, वाहन आदि के आधार पर किया गया है । इसके अन्तर्गत विभिन्न स्थानों से प्राप्त मूर्तियों का भी क्रमशः वर्णन किया गया है ।

1. भेड़ाघाट

मूर्ति विवरण : भेड़ाघाट योगिनी मन्दिर की मूर्तियों का विवरण कनिंघम[1], आर० डी० बनर्जी,[2] आर० के० शर्मा[3] द्वारा किए गए अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है—

क्र० सं०	नाम	स्वरूप	भुजाएं		आयुध	वाहन	अन्य विशेष
			खण्डित	अवशिष्ट			
1	2	3	4	5	6	7	8
1.	गणेश	सिर खण्डित, नृत्यरत	चार भुजाएं	—	—	—	—
2.	छत्रसंवरा	सिर खण्डित, ललितासन में विराजमान	चार भुजाएं	—	—	घोड़ा या हरिण	—
3.	अजिता	सिर खण्डित, ललितासन में विराजमान	चार भुजाएँ	—	—	सिंह	—
4.	चण्डिका	सम्पूर्ण खण्डित	सम्पूर्ण	—	—	दाढ़ीयुक्त लेटा पुरुष	वाहन के पीछे प्रेत आकृति
5.	आनन्दा या मानन्दा	सिर खण्डित, कमलदल पर पद्मासन में विराजमान	चार भुजाएं	—	—	—	—

1. ए० कनिंघम, आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट, जिल्द 9, पृ० 63-70
2. आर० डी० बनर्जी, दी हैहयाज आफ त्रिपुरी एण्ड देयर मानुमेण्ट्स, पृ० 78-80
3. आर० के० शर्मा, दी टेम्पुल आफ चौंसठ योगिनी ऐट भेड़ाघाट, पृ० 48-176

नोट—इनके अतिरिक्त अन्य मूर्तियां शिव, गणेश, हनुमान तथा बोधिसत्व की हैं, किन्तु उनका वर्णन यहाँ आवश्यक नहीं। कुल यहां के योगिनी मन्दिर में 81 मूर्तियाँ स्थापित थीं जिनमें कुछ उपलब्ध नहीं हैं। यहां मात्र अध्ययन योग्य मूर्तियों का ही वर्णन किया गया है।

1	2	3	4	5	6	7	8
6.	कमदा	कमल दल पर भगासन में विराजमान	चार भुजाएं	—	—	—	पीठिका पर नीचे योनि उपासना का अंकन
7.	ब्रह्माणी ब्रह्माणी	सिर, स्तन खण्डित, ललितासन में विराजमान	सम्पूर्ण	—	—	हंस	—
8.	माहेश्वरी	निम्न भाग अवशिष्ट, ललितासन में विराजमान	सम्पूर्ण	—	—	सांड़	गले में मुण्डमाल
9.	टंकारी	तीन नेत्र, ललितासन में विराजमान	—	6 भुजाएं	अस्पष्ट	सिंह	—
10.	जयन्ती	निम्न भाग अवशिष्ट ललितासन में विराजमान	सम्पूर्ण	—	—	अश्व	आभूषण-मेखला, वनमाला, नूपुर
11.	पद्महंसा	निम्न भाग अवशिष्ट कमल दल पर पद्मासन में विराजमान	सम्पूर्ण	—	—	—	पीठिका पर नीचे वीणा के साथ स्त्री
12.	रणजीरा	तीन नेत्र खण्डित, ललितासन में विराजमान	चार भुजाएं	—	—	हाथी	—
13,	हंसिनी	निम्न भाग अवशिष्ट ललितासन में विराजमान	सम्पूर्ण	—	—	हंस	—
14-	ईश्वरी	निम्न भाग अवशिष्ट ललितासन में विराजमान	सम्पूर्ण	—	—	सांड़	—

1	2	3	4	5	6	7	8
15.	थानी	तीन नेत्र	चार भुजाएं	—	—	—	पीठिका पर नीचे छः चोटियों के पहाड़
16.	इन्द्रजाली	सिर खण्डित, कमलदल पर ललितासन में विराजमान	चार भुजाएं	—	—	हाथी	गले में तीन नर मुण्डों से युक्त वनमाला
17.	थाकिनी	तीन नेत्र	चार भुजाएं	—	—	ऊँट	—
18.	धनेन्द्री	तीन नेत्र ललितासन मुद्रा	चार भुजाएं	—	—	—	सिर पर सात फनों से युक्त सांप
19.	उत्ताला	निम्न भाग, ललितासन मुद्रा	सपूम्र्ण	—	—	सांड़	—
20.	लम्पटा	सिर खण्डित, ललितासन मुद्रा	दस भुजाएं	—	—	पक्षी शीर्ष युक्त कच्छप	—
21.	उहा	सिर खण्डित, ललितासन	दो बायें	दो दाहिने		घट या मोर कलश	—
22.	स्तमदा	निम्न भाग अवशिष्ट, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	सिंह शीर्ष युक्त सूअर	—
23.	गान्धारी	सिर खण्डित, दो पंख	सम्पूर्ण	—	—	अश्व	—
24.	जाह्नवी	सिर खण्डित, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	आधा वरद मुद्रा	—	मकर	—

1	2	3	4	5	6	7	8
25.	डाकिनी	निम्न भाग अवशिष्ट, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	शव	पीठिका पर नीचे प्रेत का भी अंकन है।
26.	वन्धनी	निम्न भाग अवशिष्ट पद्मासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	—	—
27.	दर्पहारी	सिर खण्डित, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	सिंह	गले में मुण्डमाला
28.	वैष्णवी	चेहरा खण्डित, ललितासन	सम्पूर्ण	—	—	दाढ़ीयुक्त मानव	वाहन गरुड़ को प्रदर्शित करता है।
29.	रंगिनी	निम्न भाग शेष, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	गरुड़	—
30.	रूपिणी	तीन नेत्र, ललितासन मुद्रा	चार भुजाएं	—	—	मकर	—
31.	थिक्कनी	निम्न भाग शेष, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	तोता सदृश पक्षी	—
32.	घण्टाली	निम्न भाग शेष, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	सांड़	—
33.	टट्टरी	निम्न भाग शेष, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	हाथी	—
34.	गांगिनी	निम्न भाग शेष, ललितासन मुद्रा	चार	—	—	सांड़	—

1	2	3	4	5	6	7	8
35.	भीषणी	सिर खण्डित, ललितासन मुद्रा	चार	—	—	दाढ़ीयुक्त मानव	पीठिका पर नीचे प्रेत, गले में मुण्ड-माला
36.	सतनुसंवरा	ललितासन मुद्रा	चार	—	—	घोड़ा	—
37.	गहनी	चेहरा खण्डित, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	भेड़ा	—
38.	डुड्डुरी	निम्न भाग अवशिष्ट	सम्पूर्ण	—	—	द्रुतगामी अश्व	—
39.	वाराही	सूअर सदृश मुख, तीन नेत्र	चार	—	—	सूअर	—
40.	नालिनी	ललितासन मुद्रा	चार	—	—	सांड़	—
41.	नन्दिनी	सिर पर खोपड़ी अलंकृत	पन्द्रह	तीन	पाश, सारंगी, खप्पर, चर्म	सिंह	—
42.	इन्द्राणी	निम्न भाग अवशिष्ट, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	हाथी	गले में वनमाला
43.	एरुडी	सूअर सदृश मुख अर्धपर्यंकासन मुद्रा	चार	—	—	हरिण	—
44.	शाण्डिनी	सिर खण्डित, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	घोड़ा या बैल	गले में मुण्डमाला

1	2	3	4	5	6	7	8
45.	ऐंगिणी	अधिकांश भाग खण्डित, हाथी सदृश मुख, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	—	देवी के साथ गणेश
46.	तेरवां	तीन नेत्र, अतिभंग मुद्रा	पांच	ग्यारह	शंख, ढाल त्रिशूल, तरकस	सिंह	यह महिषासुर मर्दिनी यहां स्थानीय नाम से है।
47.	पाण्डवी	तीन नेत्र	दस	दो	कवच, पाश	दाढीयुक्त पुरुष	—
48.	वायुवेगा	अधिकाँश भाग खण्डित	सम्पूर्ण	—	—	हरिण	—
49.	मासवर्धनी	अर्ध नारीश्वर, ललितासन मुद्रा	चार	—	—	पक्षी	देवयोनि का अनुभाग
50.	सर्वतोमुखी	तीन मुख, तीन नेत्र, ललितासन मुद्रा	बारह	—	—	—	पीठिका पर नीचे यंत्र प्रतीक व गले में नर-मुण्ड
51.	मन्दोदरी	निम्न भाग अवशिष्ट अर्धपर्यंकासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	—	—
52.	खेमुखी	ललितासन मुद्रा, खण्डित प्रतिमा	तीन	एक	अक्षमाला	—	—
53.	जाम्ववी	सूअर सदृश मुख, ललितासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	पशु	—

1	2	3	4	5	6	7	8
54.	औदरा	ललितासन मुद्रा	चार	—	—	पल्थी मार कर बैठा नग्न पुरुष	—
55.	यमुना	निम्न भाग शेष, ललितासन मूद्रा	सम्पूर्ण	—	—	कूर्म	—
56.	विभत्सा	तीन नेत्र, गले में मुण्डमाला	तीन	एक	ढाल	शव	—
57.	थिरचिन्ता	सिर खण्डित, पद्मासन मुद्रा	चार	—	—	—	कमल दल पीठिका के मध्य घड़े से निकलता हुआ प्रतीत होता है।
58.	सिंहसिंहा	चेहरा खण्डित, ललितासन मुद्रा	चार	—	—	सिंह मुख युक्त पुरुष	—
59.	नीलदम्बरा	चेहरा खण्डित, ललितासन मुद्रा	चार	—	—	गरुड़	—
60.	अंतकारी	भयानक चेहरा, सिर पर मुण्डमाल अलंकृत	चार	—	—	—	सिर पर मुण्ड-माल तीन फनों के सर्प व अग्निशिखा से घिरा

1	2	3	4	5	6	7	8
61.	पिंगला	कमल दल पर विराजमान	चार	—	—	तोता	—
62.	आखला	निम्न भाग शेष, पद्मासन मुद्रा	सम्पूर्ण	—	—	—	पीठिका पर नीचे सम्भवतः ब्राह्माणी या सरस्वती
63.	क्षत्रधर्मिणी	कमल पीठ पर विराजमान	चार	—	—	सिंह	—
64.	ऋधाली देवी	ललितासन मुद्रा	तीन	एक	—	सिंह	—

2. शहडोल :

क्र० सं०	नाम	भुजाएं खण्डित	भुजाएं अवशिष्ट	आयुध	वाहन	विशेष
1	2	3	4	5	6	7
1.	वासुकी	चार	चार	चाकू, खप्पर व नरमुण्ड	मोर	अर्धपर्यंकासन मुद्रा, सौम्य स्वरूप
2.	बादरी	तीन	एक	नरमुण्ड	शव	सौम्य स्वरूप
3.	चामुण्डा	—	चार	—	प्रेत	भयानक स्वरूप, ऊपरी भाग अवशिष्ट
4.	वज्रा	दो	चार	चक्र, कमण्डल, वज्र व अक्षमाला	मकर	सिर खण्डित
5.	कौमारी	सम्पूर्ण	—	—	मोर	निम्न भाग अवशिष्ट
6.	यमी	—	—	—	सांड़	निम्न भाग अवशिष्ट
7.	नाहरी	आठ	—	—	सिंह	सिर खण्डित
8.	वाराही	सम्पूर्ण	—	—	वैल	निम्न भाग अवशिष्ट
9.	ह्यग्रीवा	सात	एक	घण्टा	शव	अश्व सदृश मुख
10.	योगिनी	सम्पूर्ण	—	—	हाथी	निम्न भाग अवशिष्ट
11.	अम्बिका	एक	एक	—	खण्डित	गोद में शिशु धारण किए
12.	नागी	तीन	तीन	अस्पष्ट	सिंह	सिर के ऊपर भाग का फण

1	2	3	4	5	6	7
13.	नरसिंही	तीन	एक	अस्पष्ट	सिंह	सिंह सदृश मुख
14.	वृषभा	दो	दो	फल	सिंह	वृषभ सदृश मुख, एक हाथ में गणेश
15.	सर्वमंगला	चार	—	—	सिंह	ध्यान योग मुद्रा में
16.	इन्द्राणी	छः	दो	चक्र, पात्र	हाथी	सौम्य रूप, बन्द नेत्र
17.	सर्वणी	सम्पूर्ण	—	—	अस्पष्ट	अधिकांश भाग खण्डित
18,	जम्भाला	सम्पूर्ण	—	—	—	बैल सदृश मुख, ललितासन मुद्रा
19.	तारिणी	चार	दो	घण्टा, सांप	शव	सौम्य स्वरूप
20.	यका	चार	दो	खप्पर	शव	सौम्य स्वरूप
21.	तरला	—	आठ	धनुष, ढाल, चाकू, खड्वांग	गरुण	—
22.	मानवा	पांच	एक	नरमुण्ड	सिंह	—
23.	वाणप्रभा	सात	एक	कमण्डल	वाराह	—
24.	कृष्णा भगवती	—	बारह	ढाल, घण्टा, अभय व वरद मुद्रा में	सिंह	महिषासुर मर्दिनी मूर्ति, उग्र स्वरूप, हाथों में असुर की चोटी पकड़े
25.	रमणी	—	चार	ढाल, नरमुण्ड, कपाल	प्रेत	—
26.	वासवा	—	—	—	मोर	सिर के पृष्ठभाग में नाग का फण
27.	कपालहस्ता	चार	चार	घण्टी, नरमृण्ड व अन्य अस्ष्ट	सिंह	—

1	2	3	4	5	6	7
28.	भद्रकाली	—	दस	चक्र, बाण, शूल, खड्ग, शक्ति, डमरू, खड्वांग, खेटक धनु, सूची	सिंह	पीठिका पर नीचे पिशाच अंकित
29.	महिषासुर मर्दिनी	—	बारह	नरमुण्ड, ढाल	सिंह	एक पैर जमीन व दूसरा भैंसे की पीठ पर
30.	भैरव	—	छः	खप्पर, खड्ग व अन्य अस्पष्ट	साँड़	भयानक स्वरूप, एक पैर किसी आकृति के सिर पर
3.	हिंगलाजगढ़ :					
1.	भुवनेवश्री	तीन	एक	दण्ड व कमण्डल	अस्पष्ट	—
2.	कौमारी	चार	—	—	मोर	—
3.	योगिनी	चार	—	—	खण्डित	अधिकाँश भाग खण्डित
4.	योगिनी	दो	दो	दण्ड	शव	—
5.	महन्तारिका	चार	—	—	सिंह	सिर खण्डित
6.	नागी	चार	—	—	—	गले में सर्प की माला
7.	योगिनी	चार	—	—	—	—
8.	चामुण्डा	—	चार	दण्ड, खड्ग, खप्पर	शव	भयानक स्वरूप
9.	इन्द्राणी	—	दो	—	हाथी	गोद में बच्चा

1	2	3	4	5	6	7
10.	वाराही	—	दो	—	लेटा हुआ पुरुष	सुअर सदृश मुख
11.	चक्रेश्वरी	—	चार	शंख, चक्र, अक्षमाला	गरुड़	—
12.	सरस्वती	—	दो	हाथों में वीणा लिए	—	—
13.	महिषासुर मर्दिनी	चार	—	—	सिंह	भैंसे का वध करते हुए
14.	विरकियास	चार	—	—	सिंह	हाथी सदृश मुख
15.	सिंहवाहिनी	चार	—	—	सिंह	—
16.	माहेश्वरी	तेरह	तीन	—	लेटा हुआ पुरुष	तीन मुख युक्त
17.	योगिनी	तीन	एक	—	पुरुष पर सवार	—
18.	अपराजिता	तीन	तीन	पात्र, ढाल	पुरुष	—
19.	योगिनी	चार	—	—	—	गोद में बच्चा, पैर खण्डित
20.	योगिनी	—	दस	ढाल, दण्ड, कृपाण, खप्पर, पाश, खड्ग, तीर, धनुष	अस्पष्ट पशु	—

4. नरेसर

1	2	3	4	5	6	7
1.	वाराही	तीन	एक	फल	सांड़	सिर खण्डित
2.	वारुणी	तीन	एक	पात्र	उल्लू	सिर खण्डित
3.	वंष्णवी	दो	दो	शंख, दण्ड	गरुड़	सिर खण्डित
4	इन्द्राणी	सम्पूर्ण	—	—	हाथी	सिर खण्डित
5.	उमा	दो	दो	अभय मुद्रा में एक हाथ	भेड़ा	उल्लू सदृश मुख
6.	मधाली	चार	—	—	चूहा	सिर खण्डित
7.	योगिनी	सम्पूर्ण	—	—	गरुड़	सिर व पैर खण्डित
8.	जाम्या	सम्पूर्ण	—	—	सांड़	निम्न भाग अवशिष्ट
9.	कौवेरी	चार	—	—	प्रेत	सिर खण्डित
10.	निवऊ	तीन	एक	नरमुण्ड	शव	सिर खण्डित
11.	विकनटन्ज:	दो	दो	खण्डित	चहा	सिर खण्डित
12.	चामुण्डा	सम्पूर्ण	—	—	—	भयानक चेहरा
13.	योगिनी	—	छ:	पात्र, कड़ा व अन्य अस्पष्ट	शव	सिर खण्डित
14.	महिषासुर मर्दिनी	सम्पूर्ण	—	—	सिंह	एक पैर भैंसे के पीठ पर व अन्य भाग खण्डित

5. हीरापुर

1	2	3	4	5	6	7
1.	योगिनी	चार	—	—	शव	स्थानक मुद्रा
2.	योगिनी	दो	—	—	शव	,, ,,
3.	योगिनी	एक	एक	मर्तबान	हाथी	,, ,,
4.	यमुना	तीन	एक	खप्पर	कच्छप	,, ,,
5.	योगिनी	दो	—	—	—	कमलदल पर खड़ी, नागकेयूर धारण की हुई
6.	नर्मदा	दो	—	—	—	पीठिका पर जल तरंग
7.	गौरी	चार	—	—	घड़ियाल	स्थानक मुद्रा
8.	इन्द्राणी	दो	—	—	हाथी	,, ,,
9.	वाराही	दो	दो	खप्पर, धनुष	भैंसा	सूअर सदृश मुख. स्थानक मुद्रा
10.	योगिनी	एक	एक	खड्ग	सांप का फन	भयानक चेहरा, स्थानक मुद्रा(भेड़ाघाट के रंजीरा के समान)
11.	योगिनी	चार	—	—	ऊंट	स्थानक मुद्रा, बन्दर सदृश मुख
12.	वैष्णवी	दो	—	—	गरुड़	स्थानक मुद्रा
13.	पंचवाराही	दो	—	—	सूअर	,, ,,
14.	योगिनी	दो	—	—	ढोलक	,, ,,

1	2	3	4	5	6	7
15.	चर्चिका	दो	—	—	शव	सरलादासकृत चण्डीपुराण के आधार पर पहचानी गई।
16.	योगिनी	चार	—	—	प्रेत	स्थानक मुद्रा
17.	योगिनी	तीन	एक	धनुष	छिन्न मस्तक	,, ,,
18.	विन्ध्यवासिनी	दो	—	—	—	स्थानक मुद्रा, भयानक चेहरा
19.	योगिनी	दो	—	—	मेढक	स्थानक मुद्रा
20.	योगिनी	—	दो	हाथी का चर्म उठाए	सिंह	भेड़ाघाट के अनुसार "नदिनी" व चण्डीपुराण के अनुसार "घटाबरा" कह सकते हैं।
21.	ककराली	—	दो	पाजेब बांधते हुए	गीदड़	चार्ल्स फाब्री ने नर्तकी कहा है।
22.	योगिनी	तीन	एक	मूंछें ऐंठ रही है	सर्प	कन्धे पर वाद्य यन्त्र के रूप में "तुमूर"
23.	सरस्वती	दो	—	—	—	—
24.	कावेरी	दो	—	—	—	पीठिका पर जलतरंग साथ में सात रत्न कलश
25.	भल्लुका	एक	एक	डमरु	—	भालू सदृश चेहरा व पीठिका पर पद्मलता

1	2	3	4	5	6	7
26.	नरसिंही	—	दो	मर्तबान	—	सिंह सदृश मुख व पीठिका पर पंच पुष्प ।
27.	योगिनी	दो	—	—	—	कमल की कली पर खड़ी
28.	योगिनी	दो	—	—	—	भयानक चेहरा, पीठिका खण्डित
29.	योगिनी	—	दो	वज्र व ढाल	—	कमलदल पर खड़ी,
30.	कौमारी	दो	—	—	मोर	—
31.	महामाया	दस	—	—	—	कमल पर खड़ी, प्रमुख अधिष्ठात्री देवी ।
32.	योगिनी	दो	—	—	धनुर्धारी पुरुष	भयानक चेहरा
33.	योगिनी	दो	—	—	केकड़ा	सम्भवतः नदी देवी
34.	योगिनी	चार	—	—	—	सांप सदृश मुख, स्थानक मुद्रा
35.	योगिनी	दो	—	—	—	चौपाई पर खड़ी
36.	योगिनी	दो	—	—	सींगयुक्त हिरण या तोता	भयानक चेहरा, यह भेड़ाघाट की उट्टाला सदृश है ।
37.	रुद्र काली	एक	एक	खड्ग	—	चार्ल्स फाब्री ने भेड़ाघाट के अमेर वादिनी से तुलना किया है ।

1	2	3	4	5	6	7
38.	मातंगी	दो	—	—	गधा	हरिण सदृश मुख
39.	योगिनी	—	दो	धनुष	चूहा	—
40.	अभया	दो	दो	दो हाथ ऊपर उठे	बिच्छू	—
41.	माहेश्वरी	दो	—	—	सांड़	—
42.	योगिनी	एक	तीन	डमरू	नेवला	चक्र पर खडी
43.	योगिनी	दो	—	—	मुर्गा	—
44.	घटाबरी	दो	—	—	सिंह	—
45.	योगिनी	चार	—	—	—	मर्तबान पर खड़ी
46.	काली	एक	एक	त्रिशूल	शव	त्रिनेत्र, शव पर खड़ी
47.	योगिनी	दो	दो	नागपाश, अभय मुद्रा	—	खिले हुए पुष्प पर खड़ी
48.	योगिनी	—	दो	कृपाण, मद्यभाण्ड	—	—
49.	योगिनी	सम्पूर्ण	—	—	—	पीठिका पर पैर के पास
50.	ब्रह्माणी	चार	—	—	सिंह	तीन मुखों से युक्त
51·	ज्वालामुखी	सम्पूर्ण	—	—	—	सूअर सदृश मुख, लम्बे कान व चौकी पर खड़ी है।
52.	आग्नेयो	एक	एक	कृपाण	भेड़ा	पार्श्व भाग में आग की लपटें
53.	अग्निहोत्री	एक	एक	अस्पष्ट	तोता	—

1	2	3	4	5	6	7
54.	योगिनी	दो	—	—	—	चौपाई पर खड़ी
55.	योगिनी	सम्पूर्ण	—	—	चामरी गाय	चेहरा खण्डित
56.	चामुण्डा	—	चार	कर्त्री व छिन्न मस्तक तथा दो हाथों से सिंह को पकड़ी है	कस्तूरी मृग	कंकाल सदृश, स्तन लटकते, गले में नरमुण्डों की माला
57.	मारुति	दो	—	—	सींगयुक्त	—
58.	गंगा	दो	दो	नागपाश, कमल	मकर	—
59.	तारिणी	—	दो	पंखा	बत्तख	—
60.	गान्धारी	सम्पूर्ण	—	—	घोड़ा	पार्श्वभाग में कदम्ब वृक्ष
61.	योगिनी	चार	—	—	मादा हिरण	—
62.	सूर्यपुत्री	दो	दो	धनुष, ढाल	दौड़ता हुआ अश्व	—
63.	योगिनी	—	दो	—	हिरण	बायाँ हाथ स्तन पर, नृत्यरत
64.	कात्यायनी	एक	एक	कृपाण	मानव सिर	पीठिका पर वाद्ययंत्रों के साथ सहायक सहायिकाएं
65.	कात्यायनी	एक	एक	खप्पर	कुत्ता व गीदड़	मानव सिर पर खड़ी, सिर पर छत्र

1 2	3	4	5	6	7
66. कात्यायनी	—	दो	खप्पर, चाकू	कुत्ता व गीदड़	मानव सिर पर खड़ी
67. कात्यायनी	—	दो	चाकू, खप्पर, अक्षमाला	कुत्ता	—
68. कात्यायनी	—	दो	चाकू, खप्पर	कुत्ता	मानव सिर पर खड़ी
69. कात्यायनी	—	दो	चाकू, खप्पर	कुत्ता	दाहिने हाथ की ओर वृक्ष है
70—71. कात्यायनी	—	दो	चाकू. खप्पर	कुत्ता	मानव सिर पर खड़ी
72. कात्यायनी	—	दो	कृपाण, खप्पर	गीदड़	सबसे छोटी नग्न. भयानक, मानव सिर पर खड़ी
73. अजयकपाद भैरव	एक	तीन	खड्ग, ढाल, मछली के हड्डी का अस्त्र	—	गले में मुण्डमाल, सर्प वलय व नागकेयूर
74. स्वच्छन्द भैरव	—	दस	अक्षमाला, खप्पर डमरू	—	विश्वपद्मासन में कमलदल पर विराजमान, उर्ध्वस्थ लिंग
75. चण्ड भैरव	—	दस	डमरू, बांसुरी, त्रिशूल, ढाल, अक्षमाला	शव	उर्ध्वस्थ लिंग
76. भैरव	—	दस	त्रिशूल, ढाल, अक्षमाला, डमरू, बांसुरी	शव	उर्ध्वस्थ लिंग, नग्न भैरव

6. रानीपुर झरियल

1	2	3	4	5	6	7
1.	योगिनी	एक	एक	खड्ग	—	तीन सिरों से युक्त
2.	योगिनी	एक	एक	—	—	अवशिष्ट हाथ नाभी पर
3.	नारसिंही	—	दो	त्रिशूल, प्याला	—	सिंह के समान सिर
4.	यमी	—	—	पाश	—	स्थूलकाय, लटकते स्तन
5.	योगिनी	चार	—	—	—	—
6.	योगिनी	एक	एक	—	—	बायां हाथ घुटने पर
7.	शिवदूती	एक	तीन	त्रिशूल, अक्षमाला व कालदर्पण	—	तीन सिर
8.	योगिनी	—	दो	—	—	कंकाल सदृश, भुजाओं के सहारे बैठी
9.	योगिनी	—	छः	वाद्ययंत्र, कृपाण, शव प्याला		हाथों से मुंह खींच कर चौड़ा करते हुए
10.	योगिनी	सम्पूर्ण	—	—	—	निम्न भाग ही अवशिष्ट
11.	योगिनी	दो	दो	चिराग	—	एक हाथ से मेढक पकड़ कर खाते हुए "सिंह सदृश मुख"
12.	योगिनी	एक	तीन	दण्ड, कालदर्पण, अक्षमाला	—	अश्व सदृश मुख
13.	योगिनी	—	दो	त्रिशूल, दण्ड	—	बकरी के समान मुख
14.	योगिनी	एक	तीन	कृपाण, सारंगी तीर	—	अश्व सदृश मुख
15.	योगिनी	दो	दो	—	—	हाथ स्तन पर

1	2	3	4	5	6	7
16.	योगिनी	—	आठ	कृपाण, काल-दर्पण, वज्र, अक्षमाला	—	बकरी सदृश मुख एवं दो हाथ स्तन पर
17.	योगिनी	तीन	एक	दण्ड	—	हस्ति सदृश मुख
18.	योगिनी	—	चार	दण्ड, अक्षमाला	—	सूअर सदृश मुख, दो हाथ स्तन पर
19.	योगिनी	चार	—	—	—	गाय सदृश मुख
20.	योगिनी	—	चार	दण्ड, प्याला	—	एक हाथ घुठने व दूसरा स्तन पर
21.	योगिनी	—	चार	कृपाण, व अन्य अस्पष्ट	—	दो हाथों से पाजेब बांधते हुए
22.	योगिनी	दो	दो	कृपाण, कमल	—	भालू सदृश मुख
23.	योगिनी	—	चार	प्याला, त्रिशूल	—	सांप सदृश मुख, एक हाथ घुटने पर व दूसरा स्तन पर
24.	योगिनी	एक	एक	त्रिशूल	—	—
25.	योगिनी	—	दो	प्याला, त्रिशूल	—	—
26.	योगिनी	एक	एक	त्रिशूल	—	—

1	2	3	4	5	6	7
27.	योगिनी	एक	एक	त्रिशूल	—	—
28.–31.	योगिनी	—	दो	त्रिशूल, प्याला	—	—
32.	योगिनी	एक	तीन	त्रिशूल, प्याला कालदर्पण	—	—
33.	योगिनी	—	दो	अक्षमाला, कालदर्पण	—	—
34.	योगिनी	एक	एक	त्रिशूल	—	—
35.	योगिनी	—	दो	कृपाण	—	बाएं हाथ में बच्चा लिए
36.	योगिनी	—	चार	त्रिशूल, मूसल	—	अश्व सदृश मुख
37.	योगिनी	—	दो	त्रिशूल, फन्दा	—	भैंस सदृश मुख
38.	योगिनी	—	चार	—	—	दो हाथ ऊपर जुड़े, दो नाभी पर
39.	योगिनी	—	दो	कृपाण	—	भेड़िया सदृश मुख
40.	योगिनी	—	दो	त्रिशूल	—	एक हाथ घुटने पर
41.	योगिनी	—	दो	अस्पष्ट	—	एक हाथ घुटने पर
42.	योगिनी	—	दो	प्याला	—	भयानक स्वरूप एवं एक हाथ से दांत रगड़ते हुए
43.	योगिनी	—	दो	प्याला व अस्पष्ट वस्तु	—	—
44.	योगिनी	—	दो	कृपाण, प्याला	—	—

1	2	3	4	5	6	7
45.	योगिनी	दो	दो	दण्ड	—	एक हाथ स्तन पर
46.	योगिनी	एक	तीन	धनुष, तीर, पुष्प	—	—
47.	योगिनी	—	दो	चिमटा	—	—
48.	योगिनी	—	दो	फन्दा	—	—
49.	योगिनी	—	दो	दण्ड, फन्दा	—	—
50.	योगिनी	—	दो	बादाम सदृश वस्तु	—	एक हाथ ऊपर उठा है
51.	योगिनी	—	दो	दण्ड, छड़ी	—	—
52.	योगिनी	—	दो	दण्ड	—	—
53.	भैरव (शिव)	—	आठ	सर्प, प्याला, त्रिशूल अक्षमाला, कालदर्पण	— —	तीन मुख एवं साथ में पार्वती व गणेश।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अनन्त कृष्ण शास्त्री, सं०, ललिता सहस्रनाम् (ब्रह्माण्डपुराण का एक भाग), अद्यार, 1951
2. अजय मित्र शास्त्री, त्रिपुरी, भोपाल, 1971
3. आर० सी० हाजरा, स्टडीज इन दी उपपुराणाज्, भाग 1, कलकत्ता, 1958, भाग 2, 1963
4. आर० एस० गुप्त, आइक्नोग्राफी आफ दी हिन्दूज, बुद्धिस्ट ऐण्ड जैनाज्, बम्बई, 1974
5. आर्थर एवोलान, सं०, कुलार्णव तंत्र, मद्रास, 1965
6. आर० के० शर्मा, दि टेम्पुल आफ चौंसठ योगिनी ऐट भेड़ाघाट, नई दिल्ली, 1978
7. आनन्द कुमार स्वामी, हिस्ट्री आफ इण्डियन ईस्टर्न आर्किटेक्चर, न्यूयार्क, 1965
8. आनन्दकुमार स्वामी, यक्षाण्, वाशिंगटन, 1922-31, पृष्ठ (215)
9. ए० फ्यूहर्रट, दि मानुमेण्टल एण्टीक्वीटीज् ऐण्ड इन्सक्रिप्सन्स इन दी नादर्न वेस्टर्न प्रॉविन्सेज ऐण्ड अवध वाराणसी
10. एच० सी० दास, तांत्रिसिज्म, दिल्ली, 1981
11. एल्की जन्नास एवं जेनी अबोयर, खजुराहो, गैवेन्हेज, 1960
12. एल० पी० सिंह, तंत्रा, इट्स मायस्टिक ऐण्ड साइन्टिफिक बेसिस, दिल्ली, 1970
13. एन० डी० लारेन्ज, दी कापालिकाज ऐण्ड कालमुखवाज, नई दिल्ली, 1972
14. एन० एम० पेन्जर, दी ओसीन आफ स्टोरी, (दस भाग) लन्दन, 1924-28
15. एन० बी० झावेरी, सं० भैरव पद्मावती कल्प, अहमदाबाद, 1944
16. एन० एस० बोस, हिस्ट्री आफ दीं चन्देलाज आफ जेजाक मुक्ति।
17. एम० पी० पण्डित, कुलार्णव तंत्र, मद्रास, 1973
18. एच० सी० राय, दि डाइनेस्टिक हिस्ट्री आफ नादर्न इण्डिया, भाग-2, कलकत्ता, 1931-36
19. एच० के० माहताब, हिस्ट्री आफ उड़ीसा, भाग-1, कटक, 1959
20. एस० के० सारस्वत, सं०, कथासरित्सागर, पटना, 1961
21. एस० लेवी, ला, नेपाल, भाग-1

22. एस० शंकर नारायण, श्री चक्र, पाण्डिचेरी, 1970

23. एस० के० दीक्षित, ए गाइड टू सेन्ट्रल आर्कियोलाजिकल म्यूजियम, ग्वालियर, भोपाल, 1962

24. एस० आर० टाकोरे, कैटेलाग आफ स्कल्पचर्स इन आर्कियोलाजिकल म्यूजियम, ग्वालियर

25. ओ० सी० गांगुली, दी आर्ट आफ चन्देल्स

26. काशी नारायण भट्ट, सं० त्रिस्थली सेतु (काशी खण्ड)

27. कुबेरनाथ सुकुल, वाराणसी वैभव, पटना, 1977

28. केदारनाथ शर्मा, (अनु०), कथासरित्सागर, पटना, 1961

29. के० कृष्णमूर्ति, नागार्जुन कोण्ड-ए कल्चरल स्टडी, दिल्ली, 1977

30. के० डी० वेदव्यास, सं०, स्कन्दपुराण, कलकत्ता, 1965

31. के० सी० पाणिग्रही, आर्कियोलाजिकल रिमेन्स ऐट भुवनेश्वर, कलकत्ता, 1961

32. कृष्णदेव खजुराहो, नई दिल्ली 1965

33. गोपीनाथ कविराज, तांत्रिक साहित्य, दिल्ली, 1972

34. चार्ल्स फाब्री, हिस्ट्री आफ दी आर्ट आफ उड़ीसा, दिल्ली, 1974

35. चिन्ताहरण चक्रवर्ती, दी तंत्राज, स्टडीज आन देयर रिलीजन ऐण्ड लिट्रेचर, कलकत्ता, 1963

36. जदीश्वरानन्द स्वामी, दुर्गा सप्तशती, मद्रास, 1955

37. जनार्दन पाण्डेय, गोरक्षसंहिता, वाराणसी, 1973

38. जनार्दन मिश्र, भारतीय प्रतीक विद्या, पटना, 1959

39. जे० जी० फ्रेजर, गोल्डेन बाऊ, भाग-1, लन्दन, 1954

40. जे० एन० फारक्यूहर, ऐन आउट लाइन आफ दी रिलीजियस लिटरेचर आफ इण्डिया, आक्सफोर्ड, 1920

41. जे० एन० बनर्जिया, रिलीजन इन आर्ट ऐण्ड आर्कियोलाजी, लखनऊ, 1968

42. जे० एन० बनर्जिया, पुरानिक ऐण्ड तांत्रिक रिलीजन, कलकत्ता, 1966

43. जे० एन० बनर्जिया, डेवलपमेण्ट आफ हिन्दू आक्नोग्राफी, कलकत्ता, 1956

44. जेम्स फर्गुसन, हिस्ट्री आफ इण्डिया ऐण्ड इस्टर्न आर्किटेक्चर, 1967

45. टी० ए० गोपीनाथ राव, एलीमेण्ट आफ हिन्दू आइक्नोग्राफी भाग-2, नई दिल्ली, 1914

46. डायना एलेक, बनारस (सिटी आफ लाइट) न्यूयार्क, 1982

47. डी० सी० सरकार, शक्ति कल्ट ऐण्ड तारा, कलकत्ता, 1967

48. डी० आर० बोस, तंत्राज, देअर फिलासफी ऐण्ड ओकल्ट सिक्रेट्स, कलकत्ता

49. डी० सी० बनर्जी, तंत्र इन बंगाल, कलकत्ता, 1978

50. डी० एल० स्नेलग्रव, हैवज्रतंत्र, पार्ट-1, न्यूयार्क, 1959
51. तंत्रराज तंत्र, आनन्द आश्रम सिरीज, पूना
52. तैत्रेयसंहिता, आनन्द आश्रम सिरीज पूना
53. धाना शमशेर, सं०, योगिनी साधना, जिल्द-4, काठमाण्डू, 1974
54. धाना शमशेर, वृह्‌दपुरश्चार्यार्णव, (चार भाग), काठमाण्डू, 1968
55. नगेन्द्र नाथ वसु, सं०, विश्वकोश (बंगला), कलकत्ता।
56. नरेन्द्र नाथ भट्टाचार्य, हिस्ट्री आफ शाक्त रिलीजन, नई दिल्ली, 1947
57. निक डुगलस, तंत्रयोग, दिल्ली, 1971
58. निक डुगलस एवं पेनी स्लिगर, सेक्सुअल सिक्रेट्स न्यूयार्क, 1979
59. निरंजन घोष, कन्सेप्ट ऐण्ड आइक्नोग्राफी आफ दि गाडेज आफ अबुडेन्स ऐण्ड फार्चून, बर्दवान, 1979
60. पंचानन सिंह, हठयोग प्रदीपिका, वाराणसी
61. पंचानन, देवीपुराण, कलकत्ता, 1909
62. प्रतिपादित्य पाल, दि हिन्दू रिलीजन ऐण्ड आइबोनोलाजी लास एन्जेल्स, 1981
63. पी० सी० मुखर्जी, रिपोर्ट आन दी एन्टीक्वीटीज आफ ललितपुर, वाराणसी, 1972
64. पी० वी० काणे, हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, जिल्द-5, भाग-2, पूना, 1930-32
65. पुष्पेन्द्र कुमार, शक्ति कल्ट इन ऐंसिएण्ट इण्डिया, वाराणसी, 1974
66. पी० सी० बागची, स्टडीज इन तंत्राज, कलकत्ता, 1939
67. पीं० सी० बागची, (सं०) कौल ज्ञान निर्णय, कलकत्ता, 1934
68. बलदेव उपाध्याय, (सं०), अग्निपुराण, वाराणसी, कलकत्ता, 1966
69. बलराम श्रीवास्तव, आइक्नोग्राफी आफ शक्ति, वाराणसी, 1978
70. बलराम दास, बट्ट अवकाश (उड़िया), कटक, 1930
71. ब्रह्माण्डपुराण, वेंकटेश्वर प्रेस
72. बी० भट्टाचार्य, साधनमाला, बड़ौदा, 1925-28
73. बी० भट्टाचार्य, कल्चरल हेरिटेज आफ इण्डिया, कलकत्ता, 1953
74. बी० भट्टाचार्य, दि इण्डियन बुद्धिस्ट आइक्नोग्राफी, कलकत्ता, 1960
75. बी० सी० भट्टाचार्य, दि जैन आइक्नोग्राफी, वाराणसी, 1974
76. बी० डी० बसु, देवता, वाराणसी, 1979
77. बी० एल० धामा, ए गाइड टू खजुराहो, नई दिल्ली, 1959

78. बुद्धिसागर शर्मन, वृहद् सूची पत्रम्, भाग-4, काठमाण्डू, 1964
79. भविष्यपुराण, निर्णय सागर प्रेस, शक, 1828
80. मधु खन्ना, यंत्र, लन्दन, 1979
81. महाकाली षोडश, पात्र, पाण्डुलिपि, सं०, 858|बी० डी०, 189, एसियाटिक सोसाइटी, बम्बई
82. मत्स्यपुराण, (अनु०), आंध्र के तालुकेदार, इलाहाबाद, 1916
83. मार्कण्डेय पुराण, (अनु०), एफ० ई० पारगिटर, कलकत्ता, 1903
84. मित्र मिश्रा, (सं०), वीरमित्रोदय, तीर्थ प्रकाशन
85. रवीन्द्र नाथ मिश्र, तंत्रकला में प्रतीक, पी० एच० डी०, थिसिल, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, 1980
86. रामचन्द्र कौलाचार कृत, शिल्प प्रकाश, (अनु०), एलिस बोर्नर एवं स्वन्दाशिव रथ शर्मा, लेडेन, 1966
87. रामचन्द्रकर, (सं०), वृहन्नील तंत्र, श्रीनगर, 1938
88. रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री, (अनु०), "मत्स्यपुराण", प्रयाग, संवत् 2003
89. रामाश्रय अवस्थी, खजुराहो की देव प्रतिमाएं, आगरा, 1967
90. वासुदेव विष्णु मिराशी, कार्पस, जिल्द 4
91. वासुदेव शरण अग्रवाल, एनसिएण्ट इण्डियन फोक कल्ट्स, वाराणसी, 1970
92. वासुदेव शरण अग्रवाल, मत्स्यपुराण-ए स्टडी, वाराणसी, 1963
93. वासुदेव शरण अग्रवाल, मार्कण्डेयपुराण, "एक अध्ययन", इलाहाबाद, 1969
94. विनायक मिश्र, उड़ीसा अण्डर दी भूमकाराज, कलकत्ता, 1934
95. विश्वनारायश शास्त्री, (सं०), कालिकापुराण, वाराणसी, 1972
96. विशुद्धानन्द पाठक, उत्तर भारत का राजनैतिक इतिहास, वाराणसी, 1973
97. श्यामविहारी मिश्र, उड़ीसा तंत्र, वाराणसी
98. बृजवल्लभ द्विवेदी, नित्य शोडषी कर्णव, वाराणसी, 1968
99. सरला दास, चण्डीपुराण, (उड़ीसा), कटक, 1949
100. सर जान मार्शल, मोहनजोदड़ो ऐण्ड इण्ड्स सिविलाइजेशन, भाग-1, लन्दन, 1931
101. स्टेला क्रैमिरिश, दि हिन्दू टेम्पुल, भाग-1, वाराणसी, 1976
102. स्वामी विज्ञानानन्द, श्रीमद्देवीभागवतम्, इलाहाबाद, 1977
103. स० का० दीक्षित, राजकीय संग्रहालय—धुबेला, मार्गदर्शिका, मध्य प्रदेश पुरातत्त्व, संवत् 2015
104. सी० एल० गौतम, तंत्र महासाधना, बरदी, 1973
105. सूर्यनारायण मूर्ति, ललित सहस्रनाम, गणेश ऐण्ड कं०, 1962

106. हजारी प्रसाद द्विवेदी, नाथ सम्प्रदाय, वाराणसी, 1967

107. हरप्रसाद शास्त्री, सं०, वृहद् धर्मपुराण, वाराणसी, 1974

108. हेमचन्द राय, डायनेस्टिक हिस्ट्री आफ नादर्न इण्डिया, कलकत्ता, 1936

109. ज्ञानार्णव तंत्र, आनन्द आश्रम सीरीज, 1912

शोध पत्रिकाएं (जर्नल्स)

1. अमर चन्द नाहटा शोध पत्रिका, भाग 14, 1962

2. अलेक्जेण्डर कनिंघम, आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट, जिल्द-2, 1962-65, जिल्द-9, जिल्द-10, 1880, जिल्द-21

3. आर० डी० बनर्जी, दि हैहयाज आफ त्रिपुरी ऐण्ड देयर मानुमेण्ट्स, मेमायरर्स आफ आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, नं० 23, कलकत्ता, 1931

4. आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट, ग्वालियर स्टेट, 1923-24 एवं 1942-46

5. आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, वेस्टर्न सर्किल रिपोर्ट, 1919-20

6. उमाकान्त पी० शाह, जर्नल आफ दी इण्डियन सोसाइटी आफ ओरियण्टल आर्ट, न्यू सीरीज, जिल्द-7, कलकत्ता, 1974-75

7. एम० बी० गार्ड, आर्कियोलाजी इन ग्वालियर, 1934

8. एपींग्राफिया इण्डिका, जिल्द-11, 28, 4, एवं 1

9. कृष्णदेव, ऐंसिएण्ट इण्डिया, सं० 15

10. कृष्ण दत्त वाजपेयी, एम० पी० स्कल्पचर्स थ्रू दी ऐजेज, मार्ग, जिल्द 20, सं० 3

11. केदार नाथ महापात्र, उड़ीसा हिस्टोरिकल रिसर्च जर्नल, जिल्द-2, सं० 2, जुलाई, 1953

12. केदार नाथ महापात्र, उड़ीसा हिस्टोरिकल रिसर्च जर्नल, जिल्द-3, सं० 2, भुवनेश्वर, 1954

13. के० सी० पाणिग्रही, जर्नल आफ रायल एसियाटिक सोसाइटी, जिल्द 15, सं० 2

14. जान मार्शल, आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, एनुअल रिपोर्ट, भाग-1, 1915-16, कलकत्ता, 1917

15. जे० डी० बेग्लर, आर्कियलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट, जिल्द 13, 1974-76, कलकत्ता, 1882

16. त्रिनाथ शर्मा, इण्डियन हिस्टोरिकल्स क्वार्टली, जिल्द-23, सं० 4, कलकत्ता

17. देबला मित्रा, जर्नल आफ एसियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, (एल) 22, सं० 2 कलकत्ता, 1956

18. डी० सी० सरकार, शाक्त पीठाज्, जर्नल आफ दी रायल एसियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, जिल्द 14, सं० 1, 1948

78. बुद्धिसागर शर्मन, वृहद् सूची पत्रम्, भाग-4, काठमाण्डू, 1964
79. भविष्यपुराण, निर्णय सागर प्रेस, शक, 1828
80. मधु खन्ना, यंत्र, लन्दन, 1979
81. महाकाली षोडश, पात्र, पाण्डुलिपि, सं०, 858|बी० डी०, 189, एसियाटिक सोसाइटी, बम्बई
82. मत्स्यपुराण, (अनु०), आंध्र के तालुकेदार, इलाहाबाद, 1916
83. मार्कण्डेय पुराण, (अनु०), एफ० ई० पारगिटर, कलकत्ता, 1903
84. मित्र मिश्रा, (सं०), वीरमित्रोदय, तीर्थ प्रकाशन
85. रवीन्द्र नाथ मिश्र, तंत्रकला में प्रतीक, पी० एच० डी०, थिसिल, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, 1980
86. रामचन्द्र कौलाचार कृत, शिल्प प्रकाश, (अनु०), एलिस बोर्नर एवं स्वन्दाशिव रथ शर्मा, लेडेन, 1966
87. रामचन्द्रकर, (सं०), वृहन्नील तंत्र, श्रीनगर, 1938
88. रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री, (अनु०), "मत्स्यपुराण", प्रयाग, संवत् 2003
89. रामाश्रय अवस्थी, खजुराहो की देव प्रतिमाएं, आगरा, 1967
90. वासुदेव विष्णु मिराशी, कार्पस, जिल्द 4
91. वासुदेव शरण अग्रवाल, एनसिएण्ट इण्डियन फोक कल्ट्स, वाराणसी, 1970
92. वासुदेव शरण अग्रवाल, मत्स्यपुराण-ए स्टडी, वाराणसी, 1963
93. वासुदेव शरण अग्रवाल, मार्कण्डेयपुराण, "एक अध्ययन", इलाहाबाद, 1969
94. विनायक मिश्र, उड़ीसा अण्डर दी भूमकाराज, कलकत्ता, 1934
95. विश्वनारायश शास्त्री, (सं०), कालिकापुराण, वाराणसी, 1972
96. विशुद्धानन्द पाठक, उत्तर भारत का राजनैतिक इतिहास, वाराणसी, 1973
97. श्यामविहारी मिश्र, उड़ीसा तंत्र, वाराणसी
98. बृजवल्लभ द्विवेदी, नित्य शोडषी कर्णव, वाराणसी, 1968
99. सरला दास, चण्डीपुराण, (उड़ीसा), कटक, 1949
100. सर जान मार्शल, मोहनजोदड़ो ऐण्ड इन्ड्स सिविलाइजेशन, भाग-1, लन्दन, 1931
101. स्टेला क्रैमिरिश, दि हिन्दू टेम्पुल, भाग-1, वाराणसी, 1976
102. स्वामी विज्ञानानन्द, श्रीमद्देवीभागवतम्, इलाहाबाद, 1977
103. स० का० दीक्षित, राजकीय संग्रहालय—धुबेला, मार्गदर्शिका, मध्य प्रदेश पुरातत्त्व, संवत् 2015
104. सी० एल० गौतम, तंत्र महासाधना, बरदी, 1973
105. सूर्यनारायण मूर्ति, ललित सहस्रनाम, गणेश ऐण्ड कं०, 1962

106. हजारी प्रसाद द्विवेदी, नाथ सम्प्रदाय, वाराणसी, 1967

107. हरप्रसाद शास्त्री, सं०, बृहद् धर्मपुराण, वाराणसी, 1974

108. हेमचन्द राय, डायनेस्टिक हिस्ट्री आफ नादर्न इण्डिया, कलकत्ता, 1936

109. ज्ञानार्णव तंत्र, आनन्द आश्रम सीरीज, 1912

शोध पत्रिकाएं (जर्नल्स)

1. अमर चन्द नाहटा शोध पत्रिका, भाग 14, 1962

2. अलेक्जेण्डर कनिंघम, आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट, जिल्द-2, 1962-65, जिल्द-9, जिल्द-10, 1880, जिल्द-21

3. आर० डी० बनर्जी, दि हैहयाज आफ त्रिपुरी ऐण्ड देयर मानुमेण्ट्स, मेमायरर्स आफ आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, नं० 23, कलकत्ता, 1931

4. आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट, ग्वालियर स्टेट, 1923-24 एवं 1942-46

5. आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, वेस्टर्न सर्किल रिपोर्ट, 1919-20

6. उमाकान्त पी० शाह, जर्नल आफ दी इण्डियन सोसाइटी आफ ओरियण्टल आर्ट, न्यू सीरीज, जिल्द-7, कलकत्ता, 1974-75

7. एम० बी० गार्ड, आर्कियोलाजी इन ग्वालियर, 1934

8. एपींग्राफिया इण्डिका, जिल्द-11, 28, 4, एवं 1

9. कृष्णदेव, ऐंसिएण्ट इण्डिया, सं० 15

10. कृष्ण दत्त वाजपेयी, एम० पी० स्कल्पचर्स थ्रू दी ऐजेज, मार्ग, जिल्द 20, सं० 3

11. केदार नाथ महापात्र, उड़ीसा हिस्टोरिकल रिसर्च जर्नल, जिल्द-2, सं० 2, जुलाई, 1953

12. केदार नाथ महापात्र, उड़ीसा हिस्टोरिकल रिसर्च जर्नल, जिल्द-3, सं० 2, भुवनेश्वर, 1954

13. के० सी० पाणिग्रही, जर्नल आफ रायल एसियाटिक सोसाइटी, जिल्द 15, सं० 2

14. जान मार्शल, आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, एनुअल रिपोर्ट, भाग-1, 1915-16, कलकत्ता, 1917

15. जे० डी० बेग्लर, आर्कियलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट, जिल्द 13, 1974-76, कलकत्ता, 1882

16. त्रिनाथ शर्मा, इण्डियन हिस्टोरिकल्स क्वार्टली, जिल्द-23, सं० 4, कलकत्ता

17. देबला मित्रा, जर्नल आफ एसियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, (एल) 22, सं० 2 कलकत्ता, 1956

18. डी० सी० सरकार, शाक्त पीठाज्, जर्नल आफ दी रायल एसियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, जिल्द 14, सं० 1, 1948

19. प्रमोद चन्द्र, दि कौल कापालिक कल्ट ऐट खजुराहो, ललित कला, नं० 1-2, 1955-56

20. लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी, जर्नल आफ इण्डियन सोसाइटी आफ ओरिएण्टल आर्ट, जिल्द, 6, 1974-75

21. वाल्टर इलियट, इण्डियन ऐंटीक्वीरी, जिल्द 7, बम्बई, 1878

22. विद्या देहेजिया, आर्ट इण्टरनेशनल, मार्च-अप्रैल, 1982

23. वी० डब्ल्यू० करम्बेलकर, मत्स्येन्द्र नाथ ऐण्ड हिज योगिनी कल्ट, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टर्ली, जिल्द 31, सं० 4, 1955

24. जे० बर्मिज, इण्डियन एन्टिक्वरी, जिल्द 7, 1978

25. एच० पी० शास्त्री, दरबार लाइब्रेरी, नेपाल के ताड़पत्रों एवं कागज के पांडुलीपियों का कैटेलाग, (दो भाग), कलकत्ता, 1915

26. आर० के० शर्मा रूपलेखा, XL, 1973-74

———

चित्र 2-अ

चित्र 2-ब

चित्र 3

चित्र 4
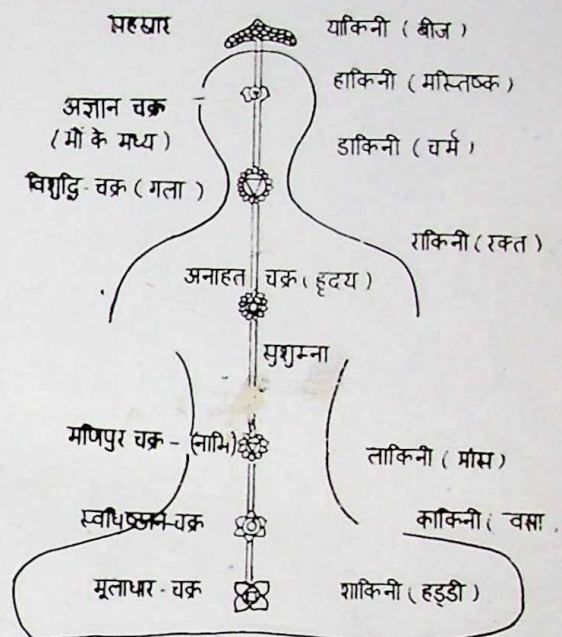
योगिनियों की आन्तरिक स्थिती

चित्र 5

चित्र 6

विभत्सा के पीठिका पर नग्न प्रेत
भेड़ाघाट।

चित्र 7

चित्र 8

चित्र 9
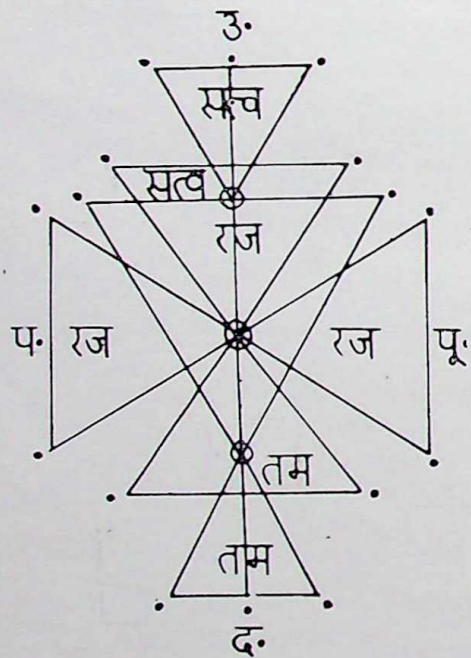
चित्र 10
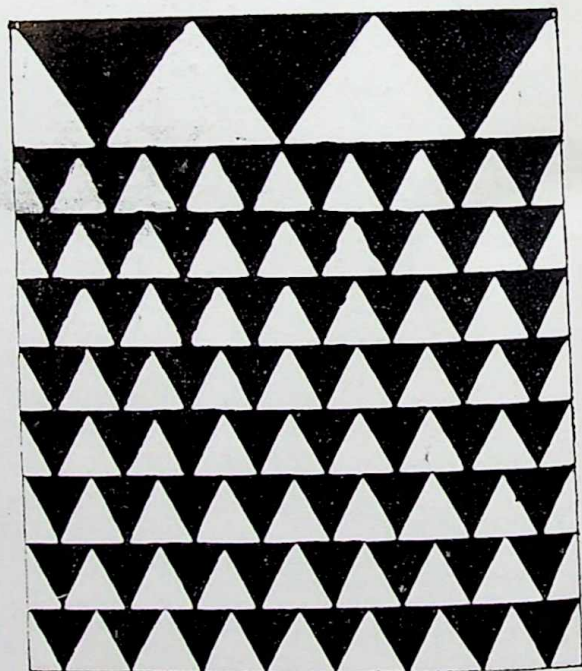
चित्र 11
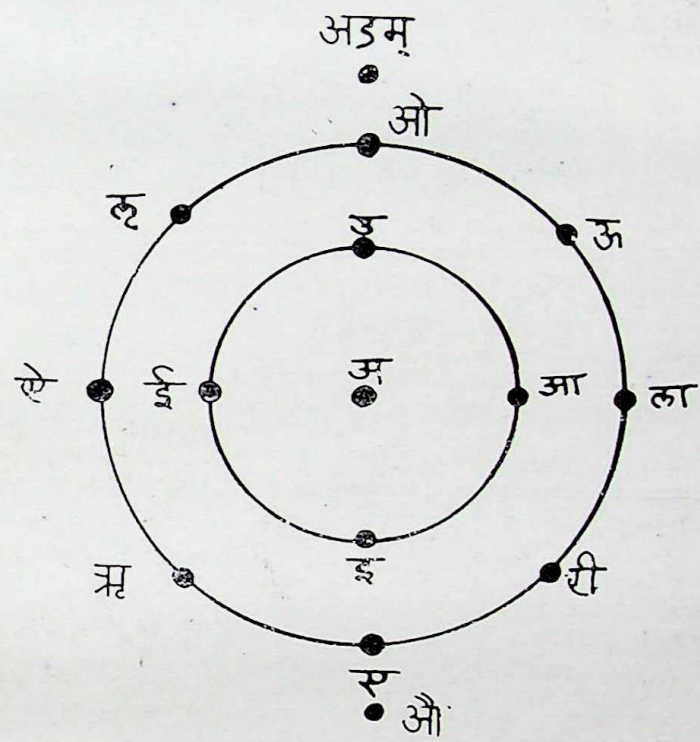
चित्र 12

काली ८
कालरात्रि ७
प्रेतभक्षि-णी ५९
धूरजटी ६०
विकटी ६१
अस्पष्ट ६२
महायोगी २
दिव्य-योगी १
योगिनी १६
अस्पष्ट १५
दुष्ट-भक्षिणी ५१
राक्षसी ५२
कुमारी ५३
यन्त्र वाहिनी ५४
हिंकारी १०
निशाचरी ९
मोहनी ४१
चक्री ४२
रक्ता २२
कलहप्रिया २१
धूम्रराक्षी २०
वीरभद्रा १९
लक्ष्मी ४७
जन्मदूती ४८
क्रोधा ३३
दुर्मुखी ३४
मुण्ड-धारिणी ३०
वाराही २९
चण्डा २८
कुमारि-का २७
मन्त्र-योगिनी ३९
कमला ४०
भयंकरी २५
वीरा २६
मालनी ३८
दीर्घ लम्बो-ष्ठि ३७
कटकी ३६
प्रेत-वाहिनी ३५
भैरवी ३१
वीर-भद्रा ३२
नर-भोजिनी १७
कटका-री १८
त्राटकी ४६
कुबला ४५
भुवने-श्वरी ४४
कंकाली ४३
घोररक्ता २३
अस्पष्ट २४
का ५६
निवारिवी ५५
सिद्ध-वेताली ११
क्लिंकारी १२
भूत-दायनी १३
ऊर्ध्व-केशी १४
अस्पष्ट ५०
कराली ४९
विशालाक्षा ६४
कपाली ६३
सिद्धयोगी ३
योगेश्वरी ४
भूत, प्रेत, पिशाच मर्दिनी ५
महेश्वरी ६
चक्रणी ५७
व्याघ्री ५८

चित्र 13

चित्र 14

चित्र 15

चित्र 16

चित्र 17

चित्र 18
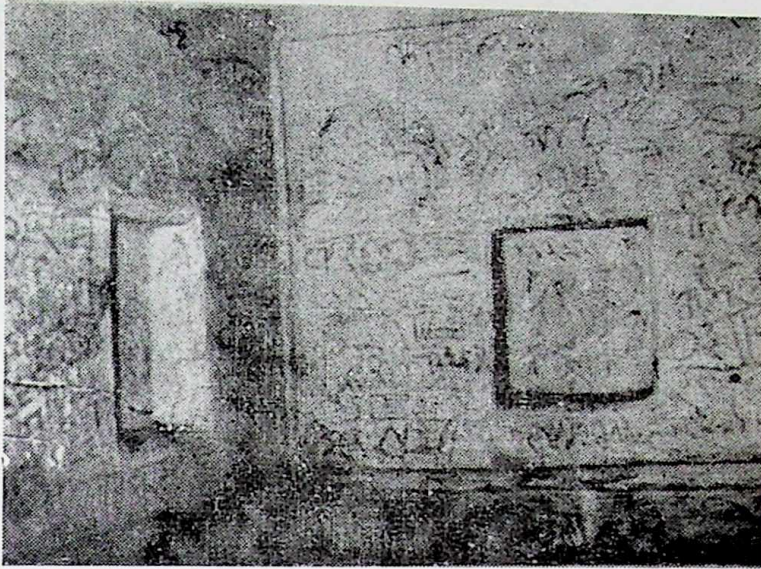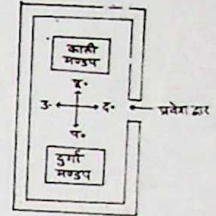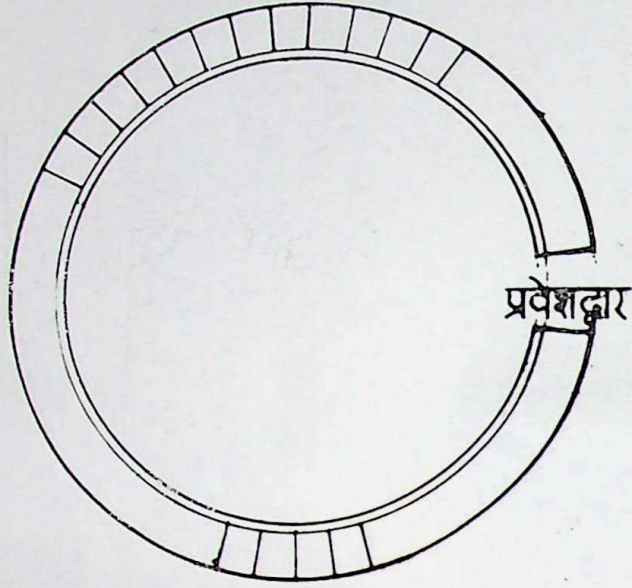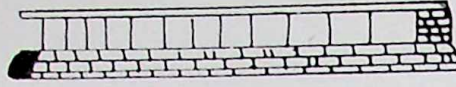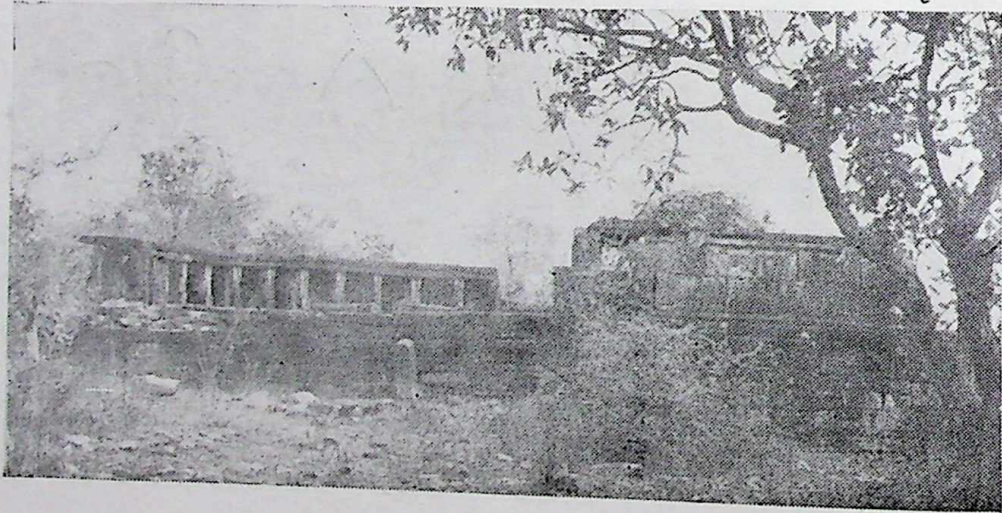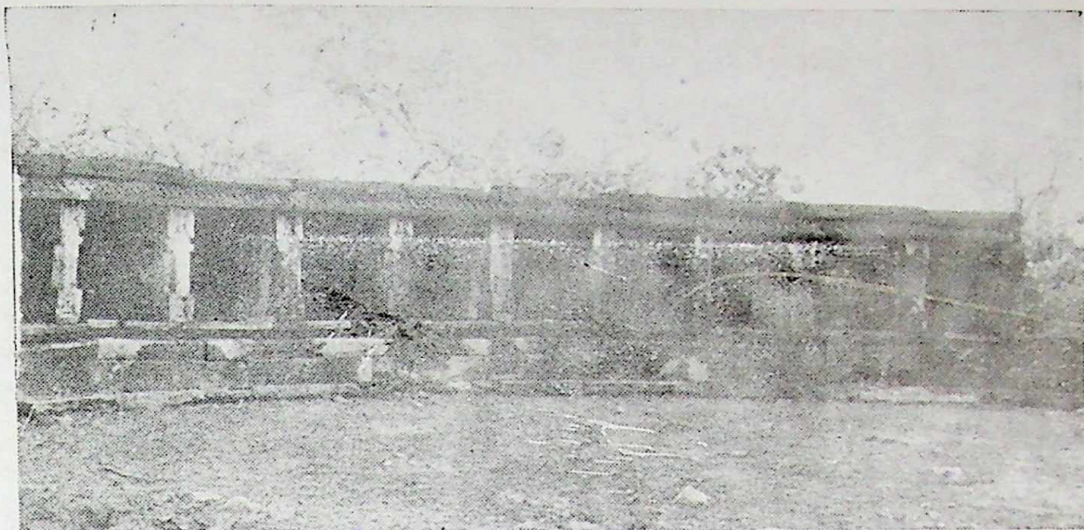
चित्र 19
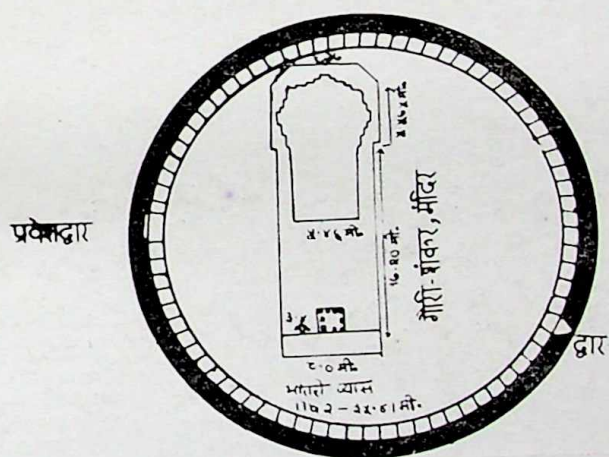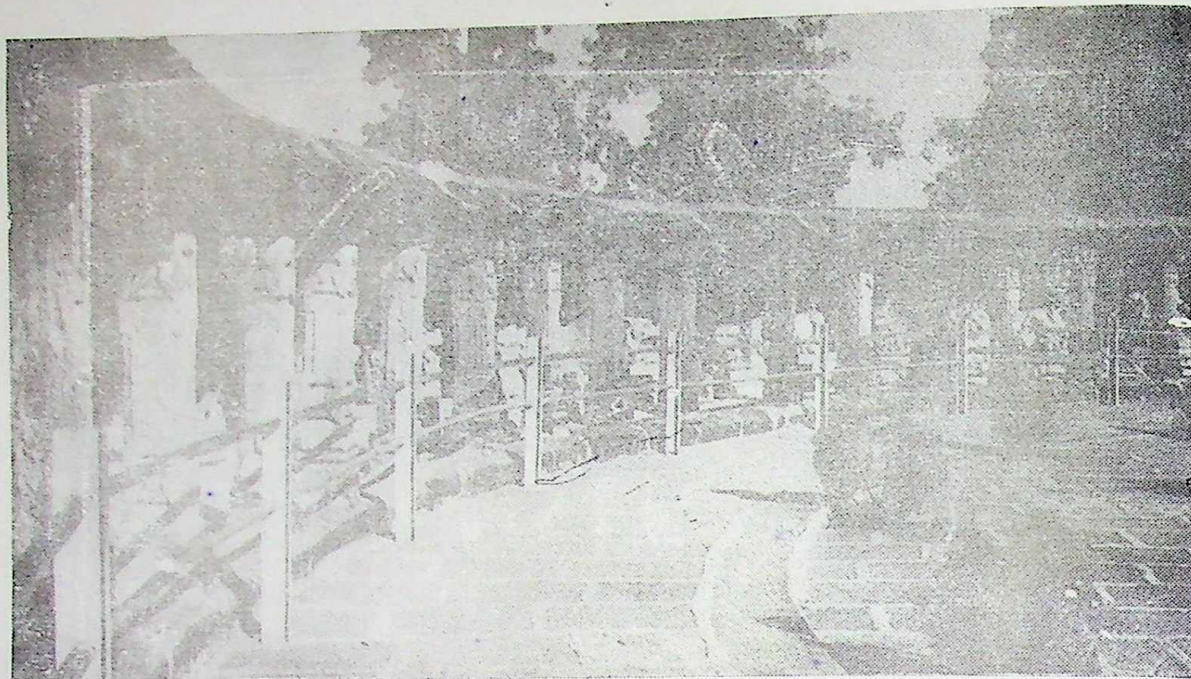
चित्र 20-अ

चित्र 20 ब
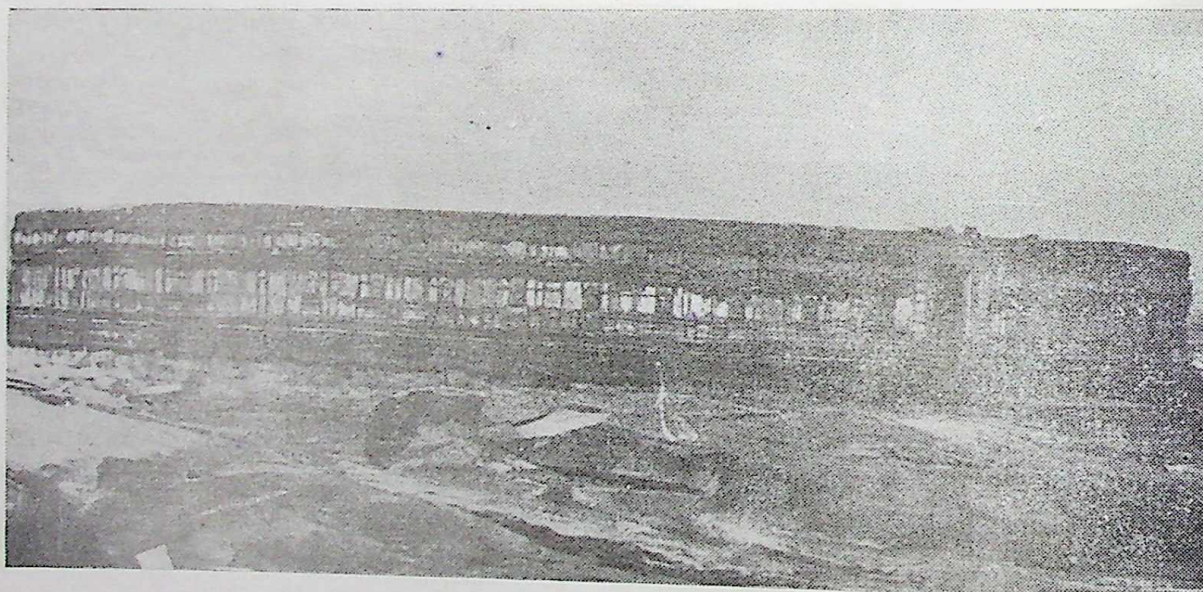
चित्र 21
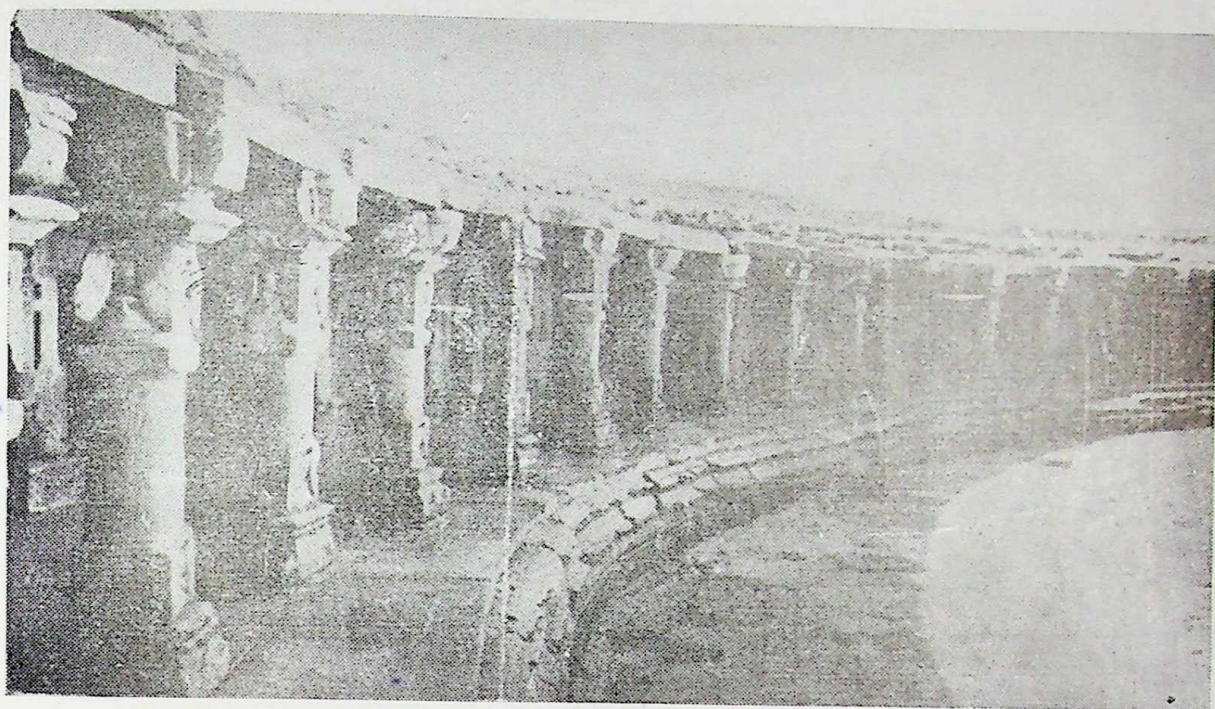
चित्र 22
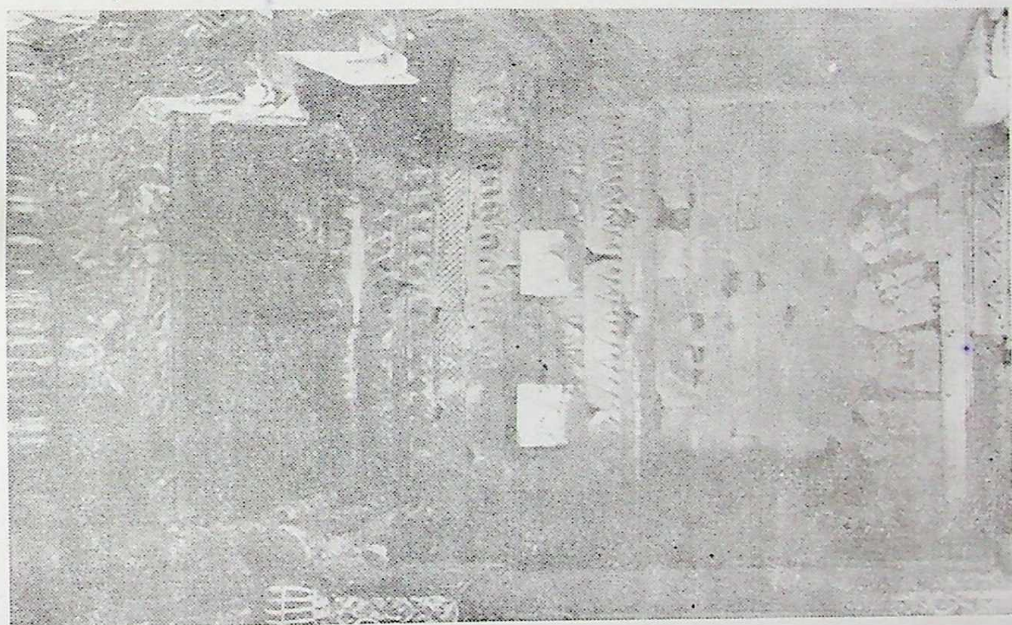
चित्र 23

चित्र 24

चित्र 25

चित्र 26

आलों की स्थिती , योगिनी मंदिर- खजुराहो
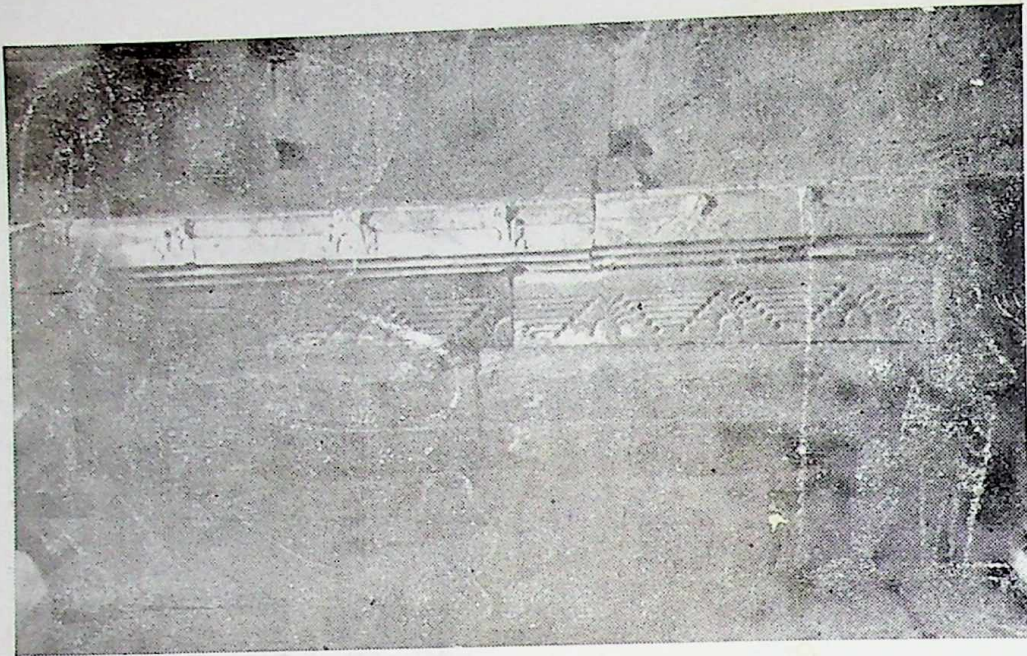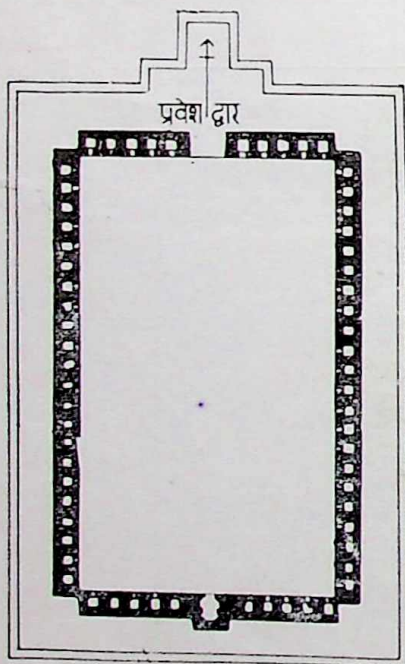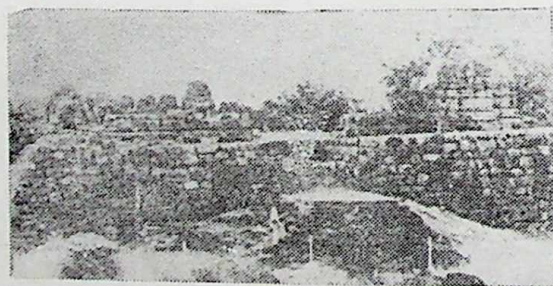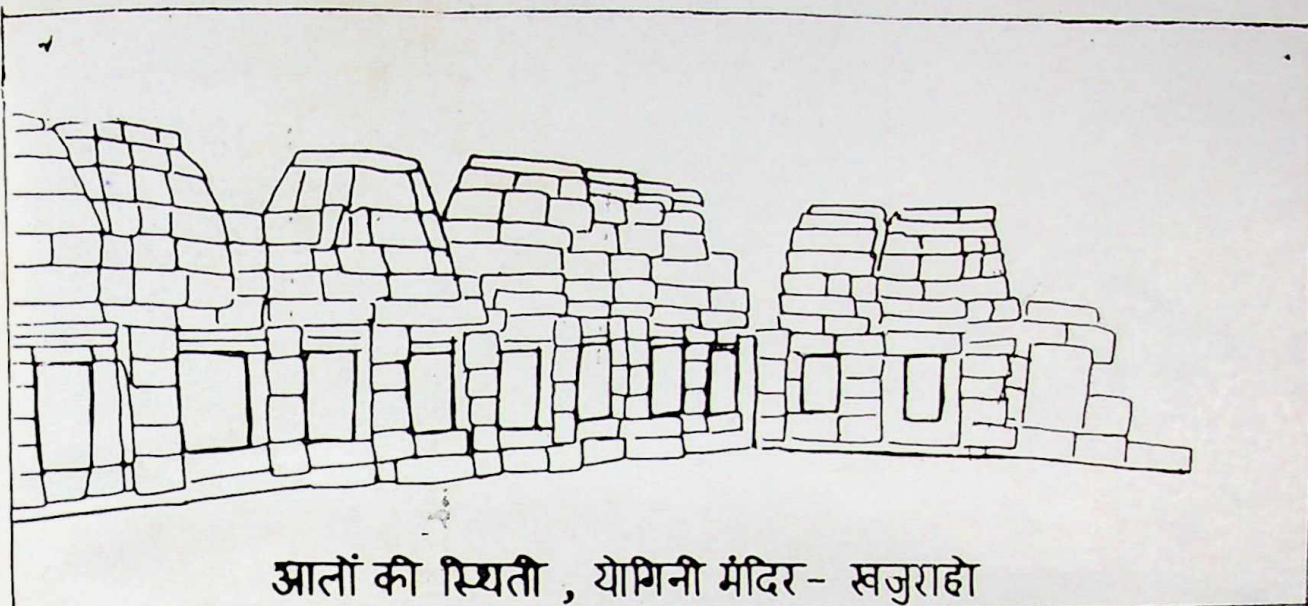
चित्र 27
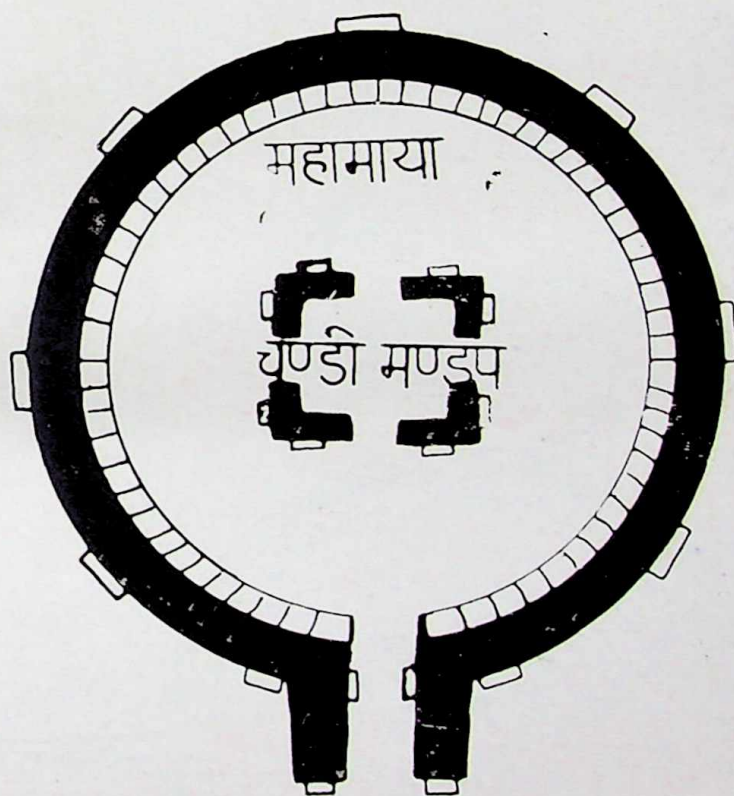
चित्र 28

चित्र 29
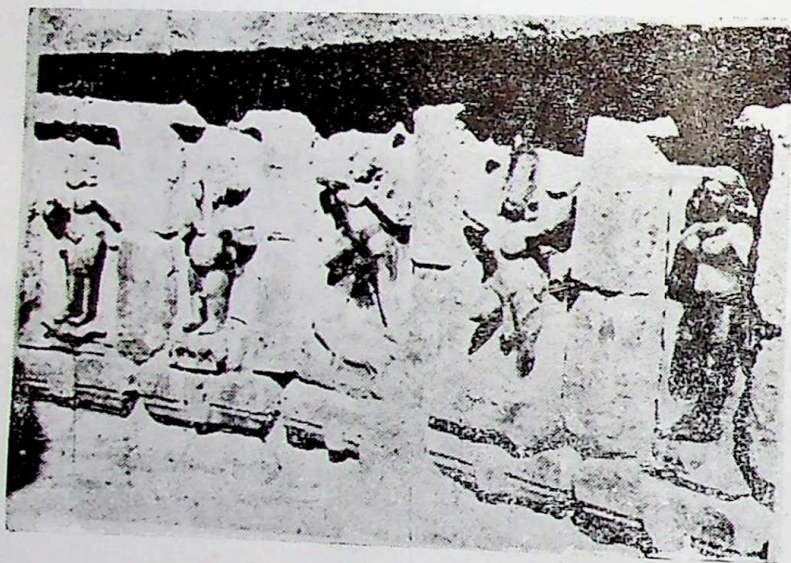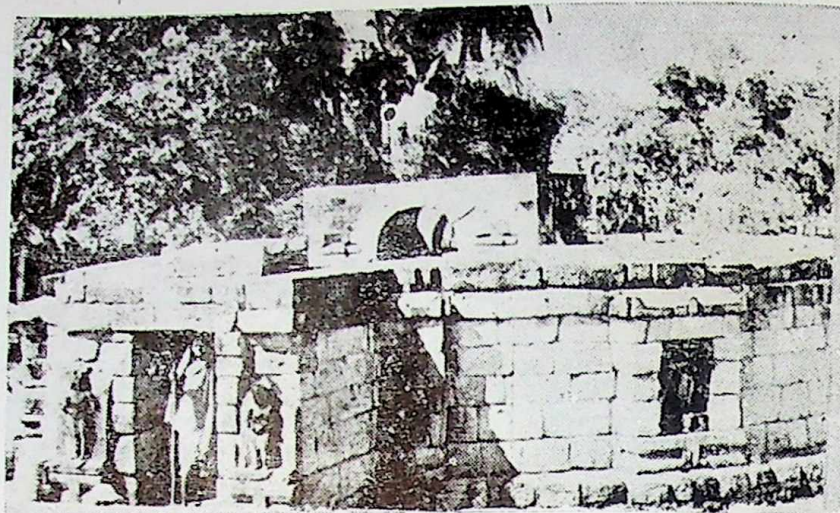
चित्र 30
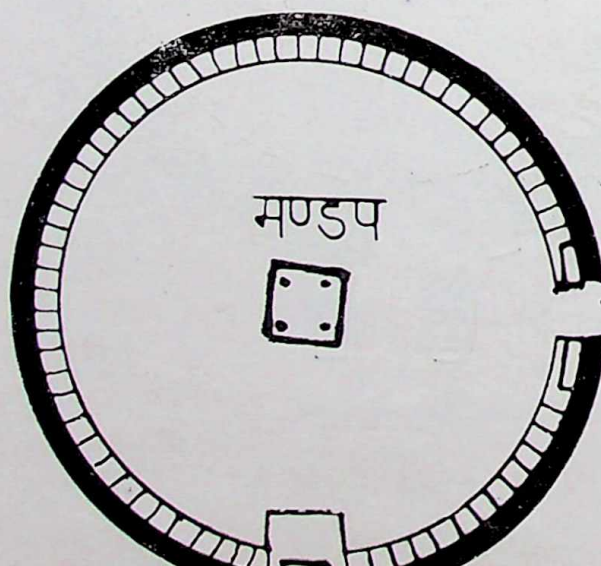
चित्र 31
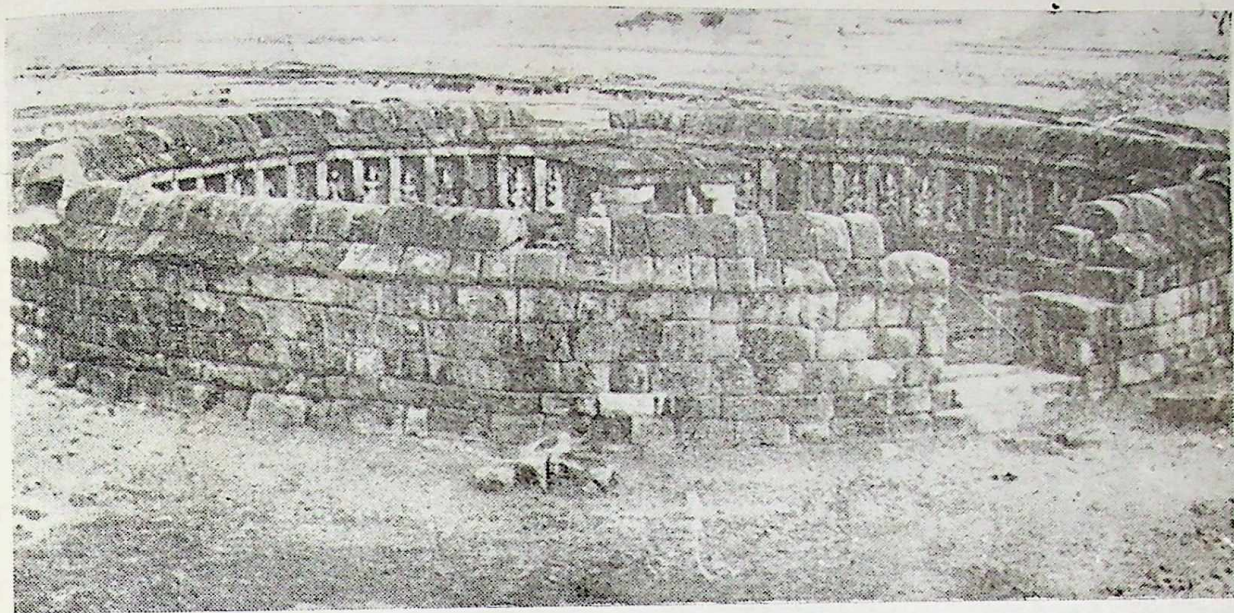
चित्र 32

चित्र 33
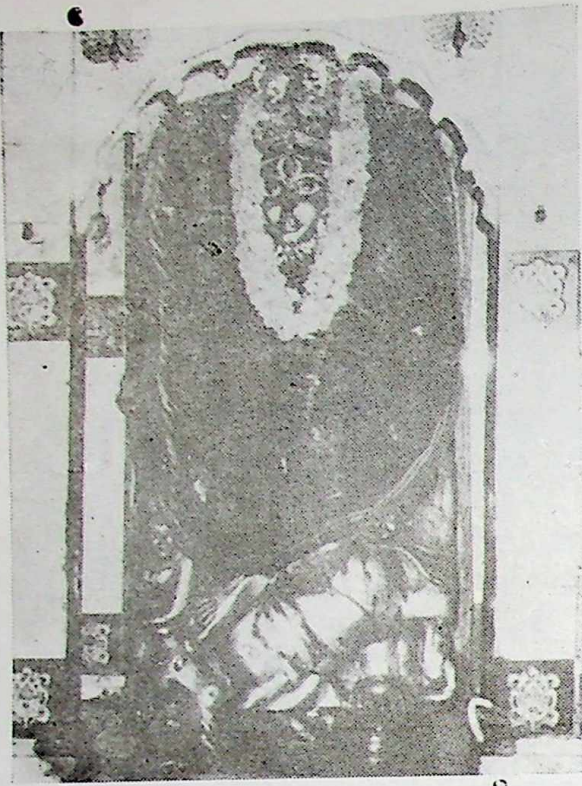
चित्र 34

चित्र 35

चित्र 36

चित्र 37
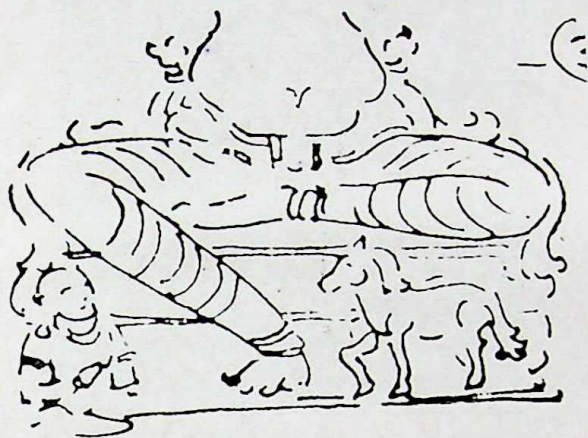
चित्र 38

चित्र 39

चित्र 40

चित्र 41

चित्र 42
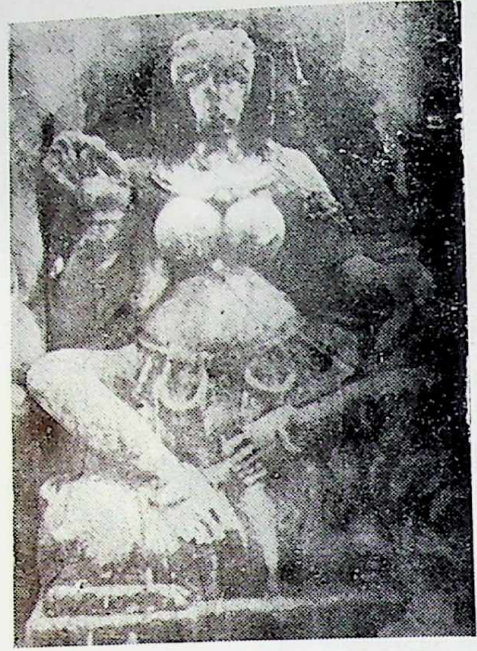
चित्र 43

चित्र 44

चित्र 45

चित्र 46
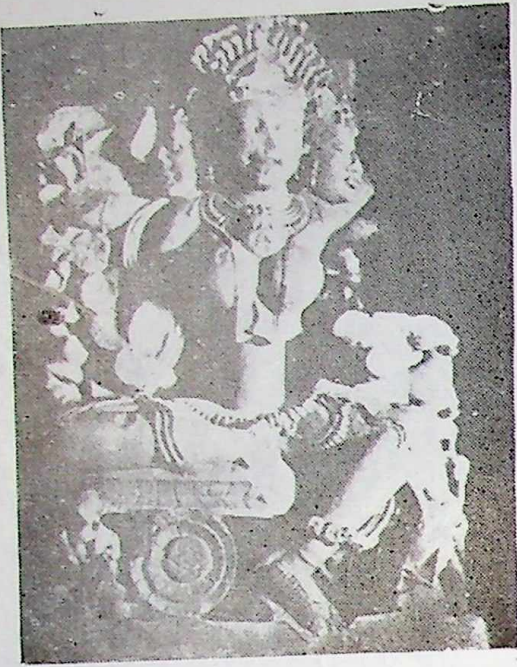
चित्र 47

चित्र 48

चित्र 49

चित्र 50

चित्र 51

चित्र 52

चित्र 53

चित्र 54
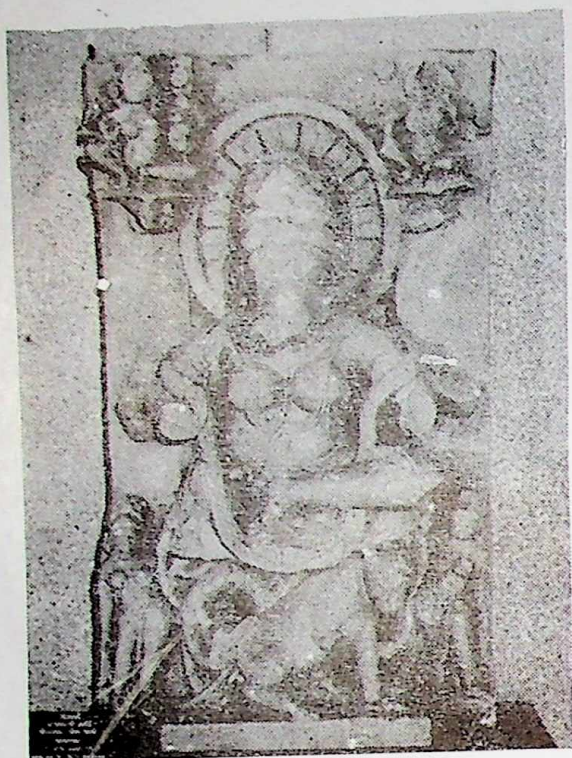
चित्र 55
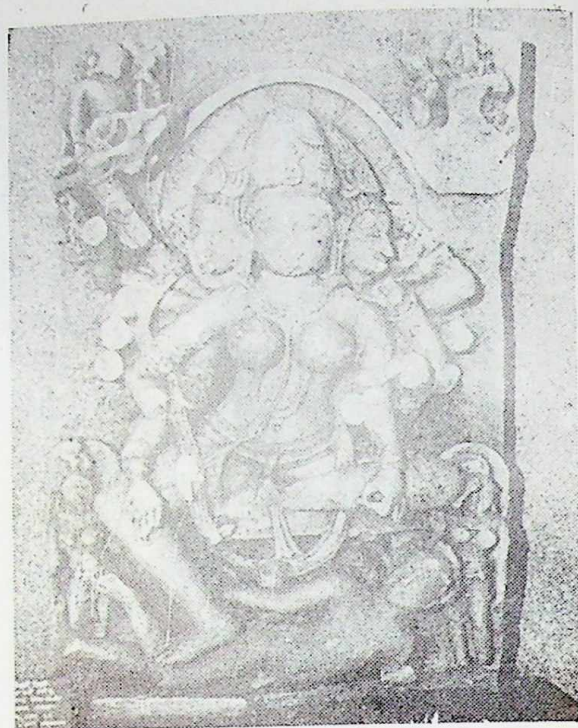
चित्र 56
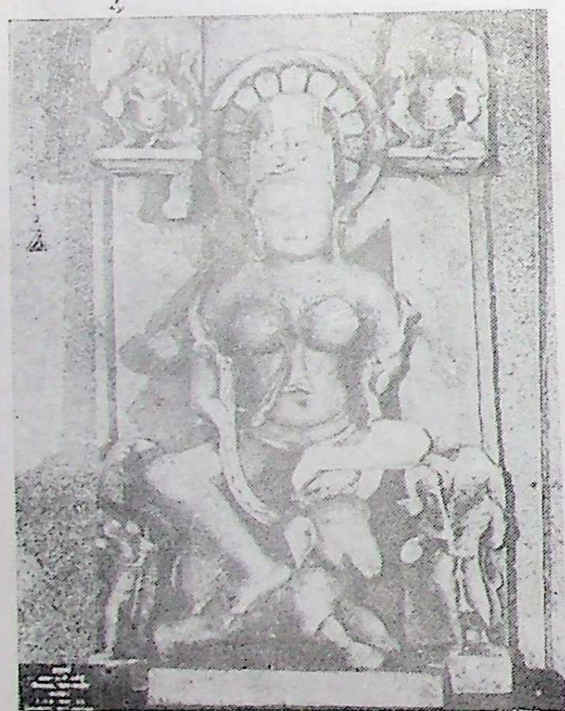
चित्र 57

चित्र 58

चित्र 55

चित्र 56
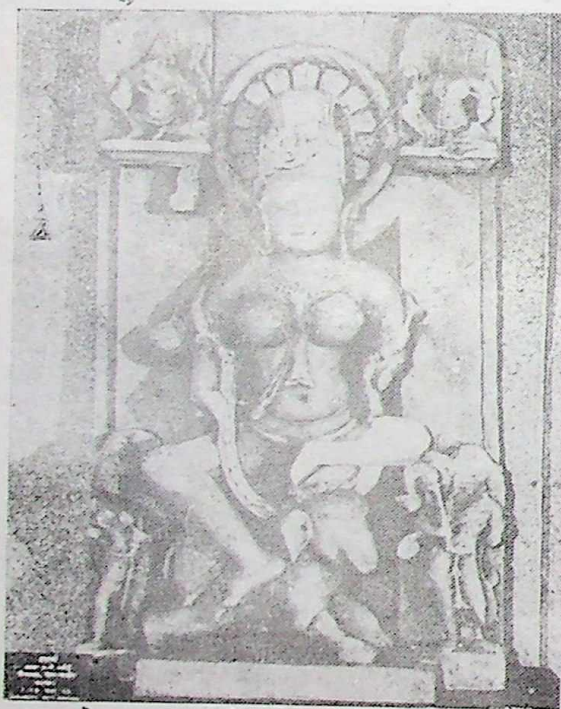
चित्र 57

चित्र 58

चित्र 59

चित्र 60

चित्र 61

चित्र 62

चित्र 63
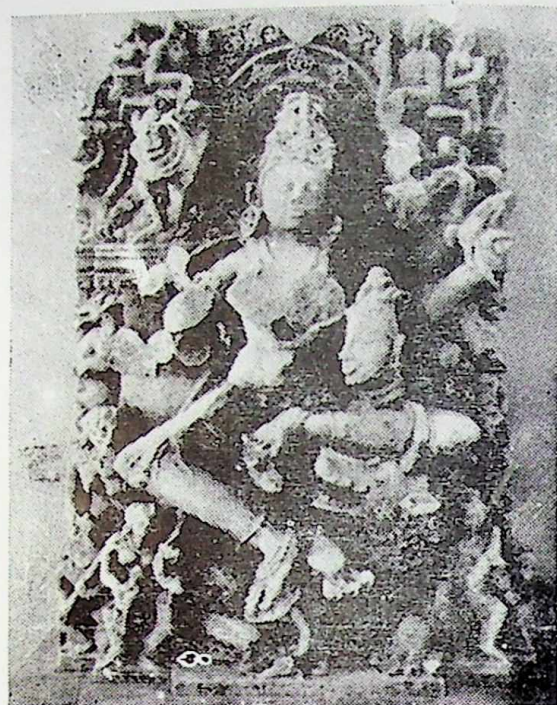
चित्र 64

चित्र 65

चित्र 66

चित्र 67
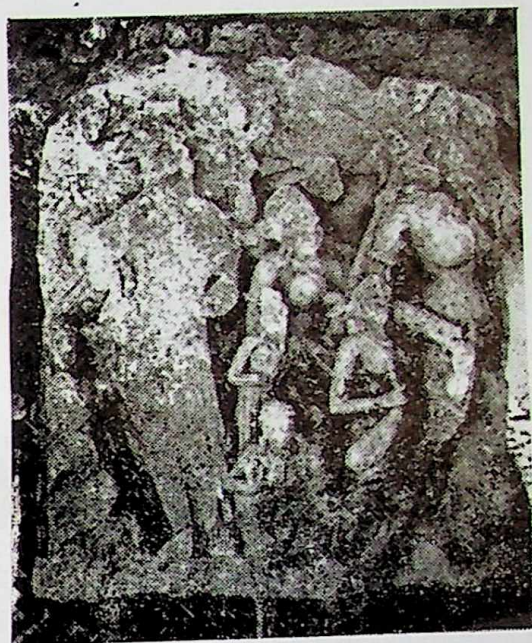
चित्र 68

चित्र 69
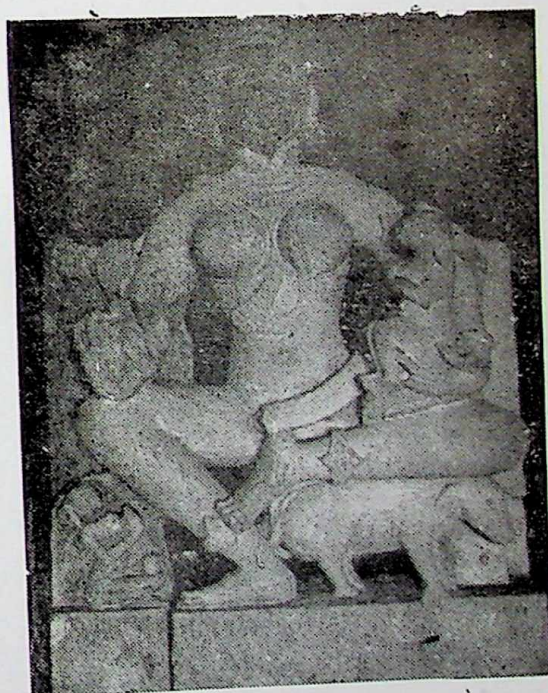
चित्र 70
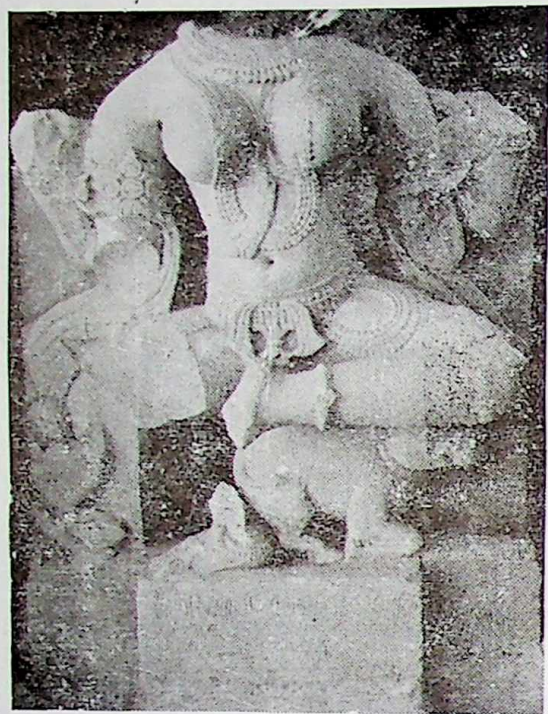
चित्र 71
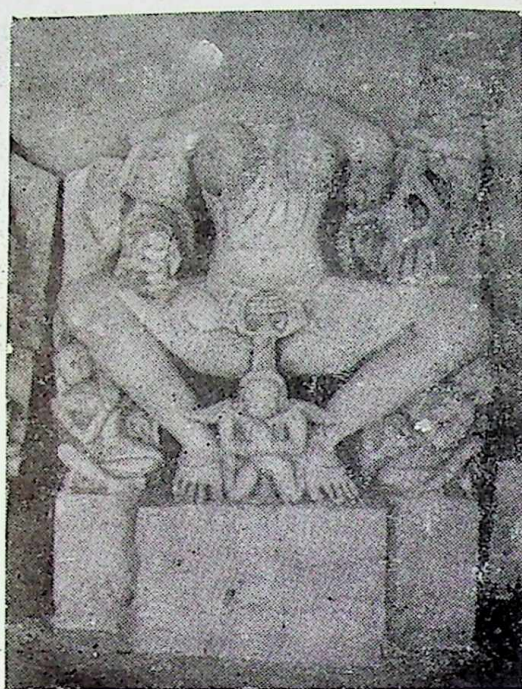
चित्र 72
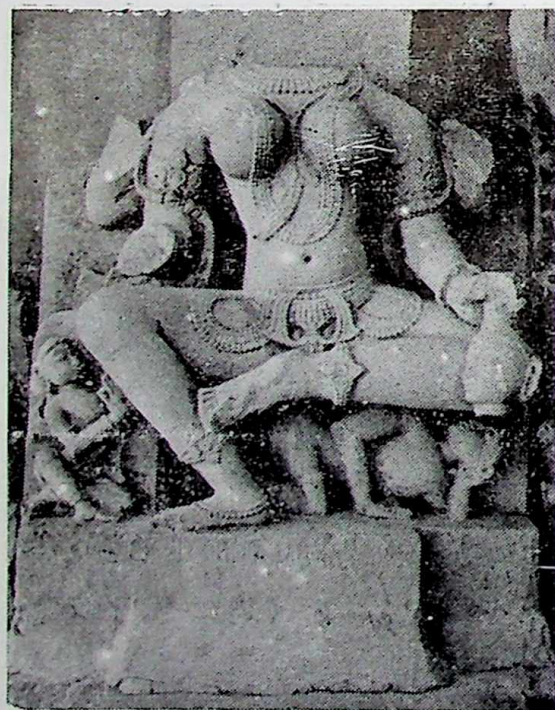
चित्र 73

चित्र 74
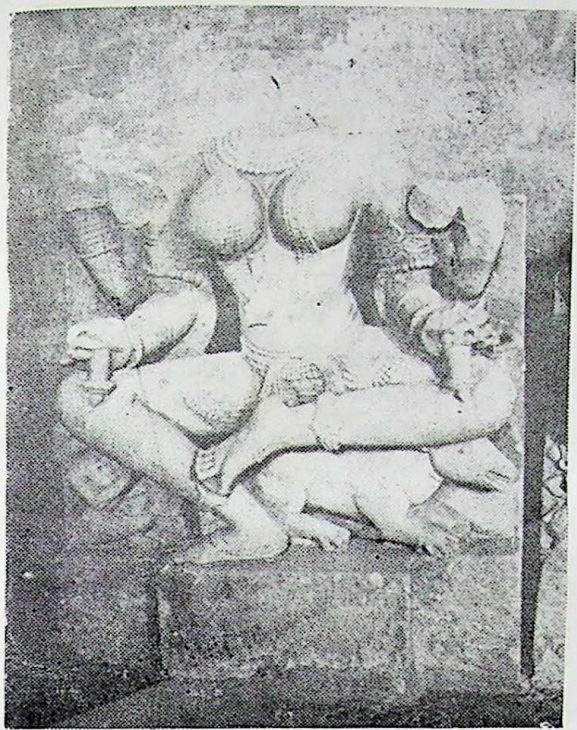
चित्र 75
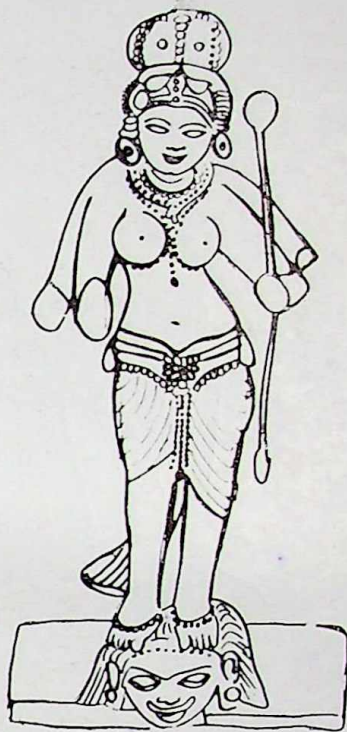
चित्र 76

चित्र 77

चित्र 78
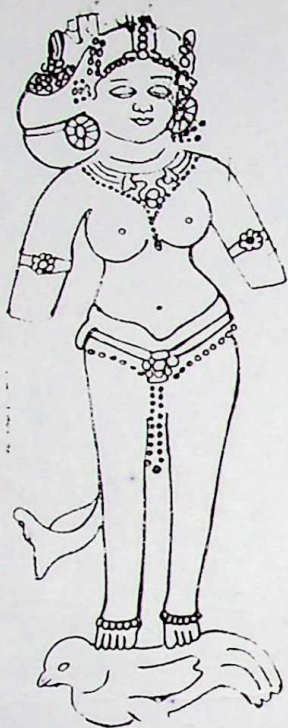
चित्र 79

चित्र 80

चित्र 81

चित्र 82

चित्र 83
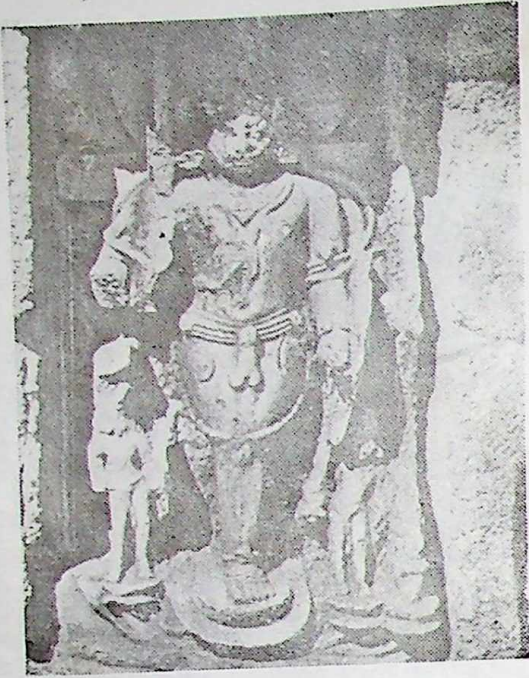
चित्र 84

चित्र 85
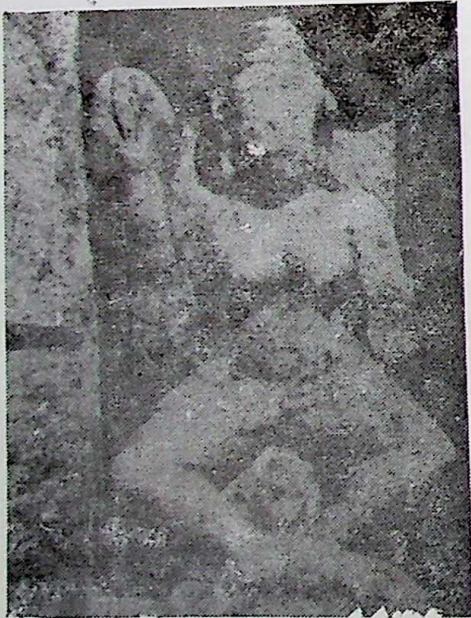
चित्र 86

चित्र 87

चित्र 88

चित्र 89

चित्र 90

चित्र 91